नाट्य दर्शन

(शोध कृति)

डॉ० शान्तिगोपाल पुरोहित

पंचशील प्रकाशन, जयपुर-३

प्रकाशक
मूलचन्द गुप्ता
संचालक,
पंचशील प्रकाशन,
फिल्म कॉलोनी चौड़ा रास्ता जयपुर-३

प्रथम संस्करण १९७०

सादर सविनय समर्पण

कमठता, दृढता, सजीवता, पौरुष व हृदय की अत्यन्त पवित्रता एव कोमलता
के साकार-सचेष्ट स्वरूप और मेरे जीवन के निर्देशक तथा पथ प्रदर्शक
परमादरणीय पूज्य पिताजी काकोसा—श्रीमान मघराजजी
साहब, पुरोहित मारोठवाला

पवित्रता, कोमलता, सजीवता, वात्सल्य, करुणा, सौहार्द और नारी सुलभ
अनुपम गुणों की साकार प्रतिमा, परमादरणीया माताजी साहिबा
"आगली बासा"—श्रीमती रामप्यारीजी साहिबा

दया, ममता, करुणा, वात्सल्य, सौहार्द, सहनशीलता और कर्त्तव्य परायणता
की सजग साकार स्वरूप परमादरणीया माताजी "बासा"—श्रीमती
उदयकौरजी साहिबा

ए
व
म्

वात्सल्य ममता और स्नेह की राशि परम पवित्र राधाप्यारी जी—'बड़ी
बाई सा' को सादर ससम्मान सविनय समर्पित ।

लेखक
लोढ़ों की गली, बीर मोहल्ला,
जोधपुर (राज०)

प्रस्तावना

कई पाश्चात्य समीक्षको ने संस्कृत-नाटको को *समझने-समझाने के प्रयत्न* किए हैं। उनके दृष्टिकोण म विदेशी तत्त्वो का सन्निवेश अवश्यभावी है। वे उनके साहित्यिक सोपानो पर हमारे साहित्य को उतारना चाहते हैं। फलत बहुधा ऐसे तथ्य प्रस्तुत किए गए हैं जो हास्यास्पद ही नही उपहासास्पद भी दिखाई देते हैं। उनकी ही प्रणाली और विवेचना पद्धति पर कई भारतीय विद्वान भी चल पडे। परिणामत वे भी उपयुक्त दोपा का सफल और जागरूक निराकरण नहीं कर पाए। इस पुस्तक के द्वारा संस्कृत नाटको के विकास और उनकी विशेषताओं का वैज्ञानिक और तर्कसंगत विवेचन किया गया है—पूर्वानुग्रह से मुक्त रह कर विषय की सम्यक विवेचना करते हुए अपने निष्कर्ष प्रदान किए गए हैं।

इसी भाति, अंग्रेजी नाटका का भी समीचीन अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। अंग्रेजी नाटका का विकास बताने वाले अधिकाश ग्रथ अंग्रेजी म ही उपलब्ध हैं। *अंग्रेजी नाटको को हिन्दी के माध्यम से समझने-समझाने का यहा प्रयत्न किया गया* है। आज का भारतीय नाटक अंग्रेजी नाटका की कई विशेषताओं को अंगीकार कर चुका है।[१] अतएव भारतीय नाटको को समझने के लिए अंग्रेजी नाटको के विकास और उनकी विशेषताओ से अवगत होना वाछनीय और आवश्यक है। इसी हेतु हिन्दी मे ही यहा अंग्रेजी नाटकों की विवेचना प्रस्तुत की गई है।

पुस्तक के अन्त मे संस्कृत और अंग्रेजी नाटकों की समानताओं अथच विषमताओं का उल्लेख करते हुए बताया गया है कि दोनो नाट्यधाराएँ एक दूसरी की पूरक हैं।[२] दोनो मे देशकालानुसार भेद भी रहा है, दोनो के ज्ञान से लाभान्वित होकर जागरूक पाठक नाट्य विशेषताओं को हृदयगम कर सकता है। हिन्दी नाट्यालोचन और नाट्यसाहित्य को समझने परखने मे यदि इससे सहायता मिले तो लेखक अपने को कृत कृत्य समझेगा।

राजकीय महाविद्यालय,
नागौर (राज०)

लेखक

---

१ दे लेखक का शोधप्रबन्ध— 'हिन्दी नाटको का विकासात्मक अध्ययन।''

२ जिस प्रकार से संस्कृत और अंग्रेजी काव्यशास्त्र ने हिन्दी काव्यशास्त्र को सम्बल और दिशा प्रदान की, उसी भाति हमारा नाट्यसाहित्य भी दोनों से ही प्रेरणा ग्रहण कर देशकालानुसार मौलिकता अभिव्यक्त कर रहा है।

अनुक्रमणिका

प्रथम खण्ड

संस्कृत नाटक विकास, विधायें व विशेषतायें

द्वितीय खण्ड

अंग्रेजी नाटकों का विकास उनकी विधायें व विशेषतायें

प्रथम खण्ड

संस्कृत नाटक :
विकास, विधाएँ व विशेषताएँ

संस्कृत नाटकों की उत्पत्ति एवं उनका आलोचनात्मक विवरण | 1

नाटक और अभिनय

'काव्येषु नाटक रम्य' एक प्राचीन एव अनुभवसिद्ध तथ्य अथच सत्य है। नाटक, साहित्य का प्रमुख और सुदर अग है। यह कवित्व की चरम सीमा माना जाता है।[1] इसे चाक्षुष यज्ञ[2] कहते हैं। श्रवणेन्द्रिया मे साथ यह नेत्रो को भी सुखकर होता है। नाटक का आधार अभिनय, सृष्टि जितना ही पुरातन है। जब सर्वप्रथम मानव ने अपने हृदय गत भावो को सकेता व विभिन्न मुद्राओ द्वारा दूसरो के सम्मुख प्रकट किया और जब उसने किसी व्यक्ति अथवा भौतिक जगत की क्रिया प्रक्रिया को किसी अन्य के सामने अपने अग-सचालन विमोचन आदि से स्पष्ट करने का प्रयास किया उसी दिन अभिनय का सूत्रपात और नाट्य का जन्म हुआ।[3,4]

प्रकृति के साहचय और माहचर्य के साथ मनुष्य की धार्मिक भावनाओ ने भी अभिनय को विशेष प्रेरणा दी है।[5,6] कहने की आवश्यकता नहीं कि जीवन मे

---

1 'नाटकान्त कवित्व' संस्कृत साहित्य का इतिहास ले० डॉ० बलदेव उपाध्याय, चतुथ स० पृ० ४०४।

2 'देवाना मिदमामनन्ति मुनय शान्त क्रतु चाक्षुष। रुद्रेणेदमुमा कृत व्यतिकरे स्वाङ्गे विभक्त द्विधा। मालविकाग्निमित्र-प्रथम अक (नाटयाचाय गणदास)

3 'नाटकों का मूल रूप मनुष्य के अन्तजगत मे विद्यमान है। × × व बाह्य जगत मे उसका क्रमश विकास हुआ है। नाटक की उत्पत्ति मनुष्य के स्वभाव से ही हुई है।"—निबन्ध निचय ले० पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी पृ १४१ प्र स १

4 'अवस्थानुकृति नाटय।" साहित्य दपण १०।

5 "वन एक्ट प्लेज आफ टुडे।", सलेक्टेड बाइ जे डब्ल्यू मेरियट, सीरीज पृ० २५६।

6 "नाटय कला का मूल स्रोत" ले० डा० एस० पी० खत्री, हिमालय अक १० पृ० ४२

अभिनय की प्रधानता प्राचीन काल से चली आ रही है। वन्कि साहित्य इसका प्रमाण है।[1] और तो और वेदों में प्राकृतिक दृश्य में भी संगीत नृत्य आदि की कल्पना की गई है और उनमें संगीत, संवाद, नृत्य आदि पाये जाते हैं।[2]

अभिनय शब्द अर्थ और व्युत्पत्ति

अभिनय शब्द अभिपूर्वक "णी" धातु से प्रकट हुआ है। इस धातु का अर्थ है पहुँचाना। अभिनय के द्वारा अपने या नाटक के भावों को अन्य लोगों तक पहुँचाया जाता है। अपने भावों को दूसरों के सामने प्रकट करना एक प्रबल प्रवृत्ति है।[3] अतएव अभिनय की महत्ता स्वाभाविक है। इसके आंगिक वाचिक, आहार्य और सात्विक नामक चार भेद किये जाते हैं। प्रथम में अंग संचालन, द्वितीय में वाक् पटुता, तृतीय में वेशसज्जा और चतुर्थ में स्तंभ, स्वेद, रोमांच आदि दृष्टिगोचर होते हैं। अभिनय का सुन्दर, सुखद और प्राञ्जल स्वरूप हम नाटकों में दिखायी देता है।

नाटक शब्द और उसकी व्युत्पत्ति

नाटक की दृश्यात्मकता और अभिनयशीलता इसकी व्युत्पत्ति से भी स्पष्ट है। पाणिनि के अनुसार नाटक या नाट्य शब्द की उत्पत्ति 'नट' धातु से हुयी है।[4] इस धातु का अर्थ है अभिनय करना।[5] नाट्यदर्पणकार ने नाटक शब्द को "नाट" से व्युत्पन्न माना है[6] परन्तु उसका मत अमान्य ही रहा है। सर्वमान्य मत पाणिनि का ही है। साहित्य की वह विधा जिसमें अभिनय की प्रधानता होती है नाटक कहलाता है, अथवा वह दृश्य जो मुख्यरूपेण अभिनय से सम्बन्धित होता है नाटक कहलाता है। नाटक में अवस्था का अनुकरण होता है और रसनिष्पत्ति प्रमुखतया दृश्यात्मकता पर आधारित रहती है। अनुकारी अर्थात् नट जब अनुकार्य अर्थात् नायकादि की अवस्था की एकरूपता का अपने हाव भाव अथवा अंग विक्षेप इत्यादि

---

1 "यस्य गायन्ति नृत्यन्ति भूम्यामर्त्या व्यैलब" अथर्व वेद १२-१ ४१।

2 संस्कृत साहित्य का इतिहास ले० वी० वरदाचार्य, प्रका० सन १९५२ पृ० १३०।

3 इन्सटिक्ट ऑव सेल्फ एक्सप्रेशन को मनोवैज्ञानिकों ने अत्यन्त प्रबल एवं महत्व पूर्ण प्रवृत्ति माना है। एडलर और यूग प्रभृति ने इसकी महत्ता की स्थापना की थी।

4 अष्टाध्यायी ४ ३-१२९।

5* सात्विक भावों का विभिन्न अवस्थाओं में प्रदर्शन रूपक रहस्य पृ० २ प० स०।

6 रामचन्द्र लिखित नाट्यदर्पण पृ० २६ (जी ओ सी)

के द्वारा प्रदशन करता है तो वह अभिनय कहलाता है। वेबर महोदय न नट् धातु को नृत् का प्राकृत रूप माना है।[1] इसके विपरीत डा० गाविन्द त्रिगुणायत ने नाट्य शब्द को नट धातु स बना हुआ और नृत्य व नृत्त का नृत् से व्युत्पन्न माना है।[2] श्री डी० आर० माकड ने भी नाट्य की उत्पत्ति तो नट से मानी है परन्तु वे नट को नृत् के बाद का रूप मानत है। उनका विचार है कि प्रारम्भिक दिनो म नृत् से ही नट् का विकास हुआ और नृत् तथा नट के भेद से पूव अभिनय का प्रादुभाव हो चुका था।[3] नृत्त व नृत्य के अथ आलोच्य विषय पर प्रकाश डालते हैं।

नाट्य नृत्त एव नृत्य

(१) नृत्त का अथ हाना है ताललय मय गात्रविक्षेप।[4] इसम नेत्रा, भुजाओ व अन्य अगा का भावविहीन सचरण अथवा प्रदशन होना है। यह केवल सौन्य विधेयक होता है। इसम स्थानीय तत्वा का आधिक्य रहना है। नृत्य भावमय[5] होता है एव इसमे सगीत का भी समावश रहता है।[6] लास्य के अगा मे से अधिकाश गानयुक्त है। गयपद, पुष्प गडिका, प्रच्छेदक, सधव, उत्तमेस्तक व उक्त प्रयुक्त आदि उदाहरण स्वरूप देखे जा सकत है। नृत्य म पदाथ का अभिनय हाता है और यह भावाभिनय म सहायक हाता है। इसम सावभौमिकता पायी जाती है।

(२) उपयु क्त शब्दा के आधार पर कतिपय विद्वाना न यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि सव प्रथम गात्रविक्षेप का प्रादुर्भाव हुआ फिर नृत्य का विकास हुआ जिसस नाट्य की सृष्टि हुई।[7] किन्तु यह बात सवमान्य नही है।[8] वदा के भाष्यकार सायण ने नट धातु का अथ व्याप्नोति किया है और नृत्य को हिलने डुलन के अथ म स्वीकार किया है।[9] पाणिनि ने भी इनका अलग अलग उल्लेख किया

1 ए हिस्ट्री ऑव दी इण्डियन लिटरेचर पृ० १६७, तृ० स०।
2 भारतीय नाटयसाहित्य सम्पादक डा० नगेन्द्र पृ० २१, प्र० स०
3 दी टाइप्स आव सस्कृत ड्रामा, प्रथम अध्याय, प्रकाशन सन् १९३६
4 नत्तताल लयाश्रय दशरूपक प्र प्र ६, ७।
5 अन्यदभावाश्रय नृत्य वही।
6 नाटय शास्त्र डॉ० मनमोहन घोष द्वारा अग्रेजी मे अनूदित २०, १३४, १३५ प्र० स०।
7 बवर पृ० ३, पाद टिप्पणी I एव मोनियर विलियम्स सस्कृत इगलिश डिक्शनेरी पृ० ५२५, प्र० स०
8 भारतीय नाटय सा० पृ० २१, प्र० स०
9 ऋग्वेद ७, १०४, २३।

में नृत्य व नटों की प्रधानता तो नाट्यशास्त्र के मंगलाचरण से ही प्रतिपादित होती है। वहाँ ब्रह्मा के साथ नटराज शिवजी को भी नमस्कार किया गया है।[1] इससे स्पष्ट है कि नृत्य प्रदान करने के कारण ही भरत के लिए शिवजी नाटक सिखाने वाले ब्रह्मा के समान ही पूजनीय बन गये। डा० मनमोहन घोष का कथन है कि अन्य ग्रन्थों में ब्रह्मा के साथ शिवजी को बहुत कम बार नमस्कार किया गया है।[2]

निष्कर्ष

इस प्रकार एक मत नट धातु को 'नृत्' का विकसित रूप मानता है एवं दूसरा नाट्य व अभिनय को स्वयंभू तथा अपने में पूर्ण समझता है। दूसरा मत नाट्य का उद्गम नट धातु से मानता है और नृत्त व नृत्य को कालान्तर में सम्मिलित हुआ घोषित करता है किन्तु प्रस्तुत प्रबन्ध के लेखक को यह प्रतीत होता है कि लोक-जीवन में नृत्त व नृत्य प्रचलित थे और स्वयं भरत शिव का नृत्य नाट्याभिनय से पूर्व देख चुके थे।[3] अतः नृत्य भरत द्वारा प्रतिपादित नाट्य से पहिले विद्यमान था।

लोक जीवन में भरत से पूर्व अभिनय का होना भी अवश्यम्भावी ही है।[4] यहाँ यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि लोक जीवन में नृत्य ने नाट्य को जन्म दिया अथवा नाट्य से नृत्य की उत्पत्ति हुयी। सम्भवतः वे अनुकरणात्मक और आनन्द उपभोग की प्रवृत्तियों से सहारा प्राप्त कर आगे बढ़े और भिन्न भिन्न क्षेत्रों में प्रगति कर गये। हाँ, साहित्यिक नाटकों में भरत मुनि के नाट्यशास्त्र के आधार पर कहा जा सकता है कि नृत्य को अभिनय के पश्चात् स्थान मिला। अतएव निष्कर्ष के रूप में निवेदन है कि नाटक व नाट्य शब्दों को अभिनयार्थक नट धातु से व्युत्पन्न मान लेने में कोई आपत्ति दृष्टिगोचर नहीं होती है और लोक जीवन में प्रचलित नृत्त व नृत्य को साहित्यिक नाटकों में कालान्तर में ही स्थान प्राप्त हुआ ऐसा प्रतीत होता है। आज तो नाट्य शब्द में अर्थतः नृत्य तथा नाटक दोनों ही समाविष्ट रहते हैं। नाटक संगीत नृत्य काय व्यापार तथा कविता की सर्वतोमुखी कला के रूप में स्वीकार किया जाता है।[5]

नाटक और रूपक

आज तो नाटक रूपक का पर्याय बन गया है। वास्तव में शास्त्रीय दृष्टि से

---

1 ना० शा० (डा० घोष) पृ १
2 वही
3 वही ४-८-४८
4 देखिये प्रथम पृ०। भारतीय नाट्य साहित्य पृ० १।
5 वही

है ।[1] श्री मोहनवल्लभ पत भी यह नही मानत कि मूकाभिनय, सगीत और सवादो की सहायता से ही नाट्य म परिवर्तित हो गय। व इस सिद्धान्त को भ्रमास्पद बतलाते है ।[2] यही नही भरत मुनि का नाट्यशास्त्र तो स्पष्टत इगित करता है कि पहले अभिनय का सूत्रपात हुआ और तत्पश्चात् उसम नृत्य को स्थान दिया गया ।[3] सव प्रथम तो इन्द्रध्वज उत्सव पर असुर पराजय का अभिनय हुआ। इसके बाद शिवजी के सामने त्रिपुरदाह डिम खेला गया। इसे देख कर महेश ने भरत को नाट्य मे नृत्य के समावेश का सुझाव दिया ।[4] इससे ज्ञात होता है कि इससे पूर्व नाटको म नृत्य का अभाव था। शिवजी ने विभिन्न अगहारो युक्त ताल लयमय नृत्य किया[5] और तण्डु नामक गण को बनाया जिसने रेचक, अगहार नृत्य और पिण्ड (भिन्न भिन्न प्रकार के नृत्य) को सगीत युक्त भी बनाया। इसीलिय इस नृत्य का नाम ताण्डव नृत्य पडा। शिवजी के नृत्य को देख कर पार्वती ने भी लास्य नृत्य किया ।[6]

नृत्य और नाट्यशास्त्र

उपर्युक्त कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि अभिनय के बाद नृत्य को नाटको म स्थान मिला। ऋषियो ने तो नाट्य म नृत्य के अस्तित्व पर ही शका प्रकट की ।[7] वे तो कहने लगे कि नाटक म नृत्य की आवश्यकता ही क्या है।' फिर भी ऐसे प्रमाण प्राप्त होते हैं कि नाट्य म नृत्य (नाचना) आधार रूप से विद्यमान था। हरिवश पुराण म भी नाटक के नृत्य (नाच) प्रधान होने का उदाहरण मिलता है ।[8] कपूरमजरी मे भी 'सट्टक को नाचने की सामग्री बतलाया गया है ।[9] नाटको

---

1 सायण भाष्य नत (१० १८ ३) नट (४ १०५, २३)
2 अष्टाध्यायी (४ ३, १२६)
3 भारतीय नाटय शास्त्र और रगमच गोविन्दवल्लभ पत, पृ० ६ स० सन १९५१
4 नाटय शास्त्र अध्याय तीन एव चार।
5 तथा त्रिपुरदाहश्च डिम सज्ञ प्रयोजित। महादेवश्च सुप्रीत पितामहमथाब्रवीत्। अहो नाटय मिद सम्यक त्वया सृष्ट महोमते। मयापीद स्मृत नृत्य सध्या कालेषु नृत्यता। एर्भिविमिश्रितश्चाय चित्रो नाम भविष्यति।
(ना शा १०, ११, १३, १६,)
6 डा० मनमोहन घोष द्वारा अनूदित नाटय शास्त्र ४–२५५, २६३, २६४, वही ४—२५३ २५४।
7 ना० शा०—५/२५८ से २६०
8 नाटक ननृत्य ।' हरिवश (९३–९८)
9 सट्टम न चिद्दा कपूरमजरी।

म नृत्य व नटो की प्रधानता तो नाट्यशास्त्र के मगलाचरण से हा प्रतिपादित हाती है। वहा ब्रह्मा के साथ नटराज शिवजी का भी नमस्कार किया गया है।[1] इससे स्पष्ट है कि नृत्य प्रदान करने के कारण ही भरत के लिए शिवजी नाटक सिखाने वाले ब्रह्मा के समान ही पूजनीय वन गये। डा० मनमोहन घोष का कथन है कि अन्य ग्रन्थो म ब्रह्मा के साथ शिवजी को वहुत कम वार नमस्कार किया गया है।[2]

निष्कर्ष

इस प्रकार एक मत नट धातु को नृत् का विकसित रूप मानता है एव दूसरा नाट्य व अभिनय को 'स्वयभू' तथा अपने म पूर्ण समझता है। दूसरा मत नाट्य का उद्गम 'नट धातु स मानता है और नृत्त व नृत्य का कालान्तर म सम्मिलित हुआ घोषित करता है किन्तु प्रस्तुत प्रवन्ध के लेखक का यह प्रतीत हाता है कि लोक-जीवन मे नृत्त व नृत्य प्रचलित थे और स्वय भरत शिव का नृत्य नाट्याभिनय स पूर्व देख चुके थे।[3] अतः नृत्य, भरत द्वारा प्रतिपादित नाट्य से पहिले विद्यमान था।

लोक जीवन म भरत से पूर्व अभिनय का हाना भी अवश्यभावी ही है।[4] यहा यह निश्चित रूप से नही कहा जा सकता कि लोक जीवन म नृत्य ने नाट्य को जन्म दिया अथवा नाट्य से नृत्य की उत्पत्ति हुयी। सभवत वे अनुकरणात्मक और आनन्द उपभोग की प्रवृत्तिया से सहारा प्राप्त कर आगे बढे और भिन्न भिन्न क्षेत्रो म प्रगति कर गये। हा साहित्यिक नाटका मे भरत मुनि के नाट्यशास्त्र के आधार पर कहा जा सकता है कि नृत्य का अभिनय के पश्चात् स्थान मिला। अतएव निष्कर्ष के रूप म निवेदन है कि नाटक व नाट्य शब्दो को अभिधायक नट धातु से व्युत्पन्न मानने म कोई आपत्ति दृष्टिगोचर नही होती है और लोक जीवन म प्रचलित नृत्त व नृत्य का साहित्यिक नाटको म कालान्तर म ही स्थान प्राप्त हुआ एसा प्रतीत होता है। आज तो नाट्य शब्द म अथत नृत्य तथा नाटक दोनो ही समाविष्ट रहते है। नाटक सगीत नृत्य काय व्यापार तथा कविता की सर्वतोमुखी कला के रूप म स्वीकार किया जाता है।[5]

नाटक और रूपक

आज तो नाटक, रूपक का पर्याय वन गया है। वास्तव मे शास्त्रीय दृष्टि स

---

1 ना० शा० (डा० घोष) पृ १

2 वही

3 वही ४-८-४६

4 देखिये प्रथम पृ०। भारतीय नाट्य साहित्य पृ० १।

5 वही

है।[1] श्री मोहनवल्लभ पंत भी यह नहीं मानते कि मूकाभिनय, संगीत और संवादों की सहायता से ही नाट्य में परिवर्तित हो गये। वे इस सिद्धान्त को भ्रमास्पद बतलाते हैं।[2] यही नहीं भरत मुनि का नाट्यशास्त्र तो स्पष्टतः इंगित करता है कि पहले अभिनय का सूत्रपात हुआ और तत्पश्चात् उसमें नृत्य को स्थान दिया गया।[3] सर्व प्रथम तो इन्द्रध्वज उत्सव पर असुर पराजय का अभिनय हुआ। इसके बाद शिवजी के सामने त्रिपुरदाह डिम खेला गया। इसे देख कर महेश ने भरत को नाट्य में नृत्य के समावेश का सुझाव दिया।[4] इससे ज्ञात होता है कि इससे पूर्व नाटकों में नृत्य का अभाव था। शिवजी ने विभिन्न अंगहारों युक्त ताल लयमय नृत्य किया[5] और तण्डु नामक गण को बताया जिसने रेचक, अंगहार नृत्य और पिण्ड (भिन्न भिन्न प्रकार के नृत्यों) को संगीत युक्त भी बनाया। इसीलिये इस नृत्य का नाम ताण्डव नृत्य पड़ा। शिवजी के नृत्य को देख कर पार्वती ने भी लास्य नृत्य किया।[6]

नृत्य और नाट्यशास्त्र

उपर्युक्त कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि अभिनय के बाद नृत्य को नाटकों में स्थान मिला। ऋषियों ने तो नाट्य में नृत्य के अस्तित्व पर ही शंका प्रकट की।[7] वे तो कहने लगे कि नाटक में नृत्य की आवश्यकता ही क्या है। फिर भी ऐसे प्रमाण प्राप्त होते हैं कि नाट्य में नृत्य (नाचना) आधार रूप से विद्यमान था। हरिवंश पुराण में भी नाटक के नृत्य (नाच) प्रधान होने का उदाहरण मिलता है।[8] कर्पूरमंजरी में भी सट्टक को नाचने की सामग्री बतलाया गया है।[9] नाटकों

---

1 सायण भाष्य नत (१० १८, ३), नट (४ १०५, २३)
2 अष्टाध्यायी (४ ३ १२९)
3 भारतीय नाट्य शास्त्र और रंगमंच गोविंदवल्लभ पंत, पृ० ९ सं० सन १९५१
4 नाट्य शास्त्र अध्याय तीन एवं चार।
5 तथा त्रिपुरदाहश्च डिम सज्ञ प्रयोजित। महादेवश्च सुप्रीत पितामहमथाब्रवीत्। अहो नाट्य मिद सम्यक् त्वया सृष्ट महोमते। मयापीद स्मृत नत्य सध्या कालेषु नृत्या। एभिर्विमितिश्रर्त्रत्नाय चित्रो नाम भविष्यति।
(ना शा १०, ११, १३, १६,)
6 डा० मनमोहन घोष द्वारा अनूदित नाट्य शास्त्र ४–२५५, २६३, २६४, वही ४—२५३ २५४।
7 ना० शा०—५/२५८ से २६०
8 'नाटक ननर्तत।' हरिवंश (९३-९८)
9 सट्टम न चिट्ठा, कर्पूर मजरी।

मे नृत्य व नटो की प्रधानता तो नाट्यशास्त्र के मगलाचरण से ही प्रतिपादित होती है। वहा ब्रह्मा के साथ नटराज शिवजी को भी नमस्कार किया गया है।[1] इससे स्पष्ट है कि नृत्य प्रदर्शन करने के कारण ही भरत के लिए शिवजी नाटक सिखाने वाले ब्रह्मा के समान ही पूजनीय बन गये। डा० मनमोहन घोष का कथन है कि अन्य ग्रन्थो मे ब्रह्मा के साथ शिवजी को बहुत कम बार नमस्कार किया गया है।[2]

निष्कर्ष

इस प्रकार एक मत नट' धातु को नृत् का विकसित रूप मानता है एव दूसरा नाट्य व अभिनय को 'स्वयभू' तथा अपने मे पूर्ण समझता है। दूसरा मत नाट्य का उद्गम 'नट' धातु से मानता है और 'नृत्त' व नृत्य का कालान्तर मे सम्मिलित हुआ घोषित करता है किन्तु प्रस्तुत प्रबन्ध के लेखक को यह प्रतीत होता है कि लोक-जीवन मे नृत्त व नृत्य प्रचलित थे और स्वय भरत शिव का नृत्य नाट्याभिनय से पूर्व देख चुके थे।[3] *अत नृत्य, भरत द्वारा प्रतिपादित नाट्य से पहिले* विद्यमान था।

लोक जीवन मे भरत से पूर्व अभिनय का होना भी अवश्यभावी ही है।[4] यहा यह निश्चित रूप से नही कहा जा सकता कि लोक जीवन मे नृत्य ने नाट्य को जन्म दिया अथवा नाट्य से नृत्य की उत्पत्ति हुयी। सभवत ये अनुकरणात्मक और आनन्द उपभोग की प्रवृत्तियो से सहारा प्राप्त कर आगे बढे और भिन्न भिन्न क्षेत्रो मे प्रगति कर गये। हा साहित्यिक नाटको मे भरत मुनि के नाट्यशास्त्र के आधार पर कहा जा सकता है कि नृत्य को अभिनय के पश्चात् स्थान मिला। अतएव निष्कर्ष के रूप मे निवेदन है कि नाटक व नाट्य शब्दो को अभिनयार्थक नट धातु से व्युत्पन्न मान लेने मे कोई आपत्ति दृष्टिगोचर नही होती है और लोक जीवन मे प्रचलित नृत्त व नृत्य को साहित्यिक नाटको मे कालान्तर मे ही स्थान प्राप्त हुआ ऐसा प्रतीत होता है। आज तो नाट्य शब्द मे अर्थत नृत्य तथा नाटक दोनो ही समाविष्ट रहते हैं। नाटक सगीत नृत्य कार्य व्यापार तथा कविता की सर्वतोमुखी कला के रूप मे स्वीकार किया जाता है।[5]

नाटक और रूपक

आज तो नाटक रूपक का पर्याय बन गया है। वास्तव मे शास्त्रीय दृष्टि से

---

1 ना० शा० (डा० घोष) पृ १

2 वही,

3 वही, ४-८-४८

4 देखिए प्रथम पृ०। भारतीय नाट्य साहित्य पृ० १।

5 वही

है।[1] श्री मोहनवल्लभ पंत भी यह नहीं मानते कि मुखाभिनय, संगीत और संवाद की सहायता से ही नाट्य में परिणित हो गये। वे इस सिद्धान्त का प्रमाण वाल्मीकि देते हैं।[2] यही नहीं भरत मुनि का नाट्यशास्त्र तो स्पष्ट दर्शित करता है कि सब प्रथम तो इन्द्रध्वज उत्सव पर असुर पराजय का अभिनय हुआ। इसके बाद शिवजी के सामने त्रिपुरदाह डिम खेला गया। इस देख कर महादेव ने भरत को नाट्य में नृत्य के समावेश का सुझाव दिया।[4] इससे पता होता है कि इससे पूर्व नाट्य में नृत्य का अभाव था। शिवजी ने विभिन्न अंगहारों युक्त ताल लयमय नृत्य किया और तण्डु नामक गण को बताया जिसने रेचक अंगहार नृत्य और पिण्ड (भिन्न भिन्न प्रकार के नृत्यों) का संगीत युक्त भी बताया। इसीलिए इस नृत्य का नाम ताण्डव नृत्य पड़ा। शिवजी के नृत्य को देख कर पार्वती ने भी लास्य नृत्य किया।[6]

नृत्य और नाट्यशास्त्र

उपर्युक्त कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि अभिनय के बाद नृत्य को नाटक में स्थान मिला। ऋषियों ने तो नाट्य में नृत्य के अस्तित्व पर ही शंका प्रकट की।[7] वे तो कहने लगे कि नाटक में नृत्य की आवश्यकता ही क्या है। फिर भी ऐसे प्रमाण प्राप्त होते हैं कि नाट्य में नृत्य (नाचना) आधार रूप में विद्यमान था। हरिवंश पुराण में भी नाटक के नृत्य (नाच) प्रधान होने के उदाहरण मिलते हैं।[8] कर्पूरमंजरी में भी सट्टक को नाचने की सामग्री बतलाया गया है।[9] नाटक

---

1 सायण भाष्य नृत (१०, १८ ३), नट (४ १०५ २३)

2 अष्टाध्यायी (४ ३, १२९)

3 भारतीय नाटय शास्त्र और रंगमंच गोविन्दवल्लभ पंत, पृ० ९, सं० सन १९५१

4 नाटय शास्त्र अध्याय तीन एवं चार।

5 तथा त्रिपुरदाहश्च डिम संज्ञ प्रयोजित। महादेवश्च सुप्रीत पितामहमथाब्रवीत्। अहो नाटय मिदं सम्यक त्वया सृष्ट महामते। मयापीव स्मृत नृत्य सध्या कालेषु नृत्यता। एभिर्विमिश्रितश्चाय चित्रो नाम भविष्यति।

(ना शा १०, ११, १३, १६,)

6 डा० मनमोहन घोष द्वारा अनूदित नाटय शास्त्र ४–२५५, २६३, २६४, वही ४—२५३ २५४।

7 ना० शा०—५/२५८ से २६०

8 'नाटक ननृत्य।' हरिवंश (९३–९८)

9 सट्टम न चिद्रा कर्पूर मंजरी।

म नृत्य व नटा की प्रधानता तो नाट्यशास्त्र के मगलाचरण से ही प्रतिपादित होती है। वहा ब्रह्मा के साथ नटराज शिवजी का भी नमस्कार किया गया है।[1] इसस स्पष्ट है कि नृत्य प्रदान करने के कारण ही भरत के लिए शिवजी नाटक सिखाने वाले ब्रह्मा के समान ही पूजनीय बन गय। डा० मनमोहन घाप का कथन है कि अन्य ग्रथो मे ब्रह्मा के साथ शिवजी को बहुत कम बार नमस्कार किया गया है।[2]

निष्कर्ष

इस प्रकार एक मत नट धातु का 'नृत्' का विकसित रूप मानता है एव दूसरा नाट्य व अभिनय को स्वयभू तथा अपन म पूर्ण समझता है। दूसरा मत नाट्य का उद्गम नट' धातु से मानता है और 'नृत्त' व नृत्य का कालान्तर म सम्मिलित हुआ घोषित करता है किन्तु प्रस्तुत प्रबन्ध के लेखक को यह प्रतीत हाता है कि लोक–जीवन म नृत्त व नृत्य प्रचलित थे और स्वय भरत शिव का नृत्य नाट्याभिनय स पूर्व देख चुके थे।[3] अत नृत्य, भरत द्वारा प्रतिपादित नाट्य से पहिले विद्यमान था।

लोक जीवन म भरत से पूर्व अभिनय का हाना भी अवश्यभावी ही है।[4] यहा यह निश्चित रूप स नही कहा जा सकता कि लोक जीवन म नृत्य न नाट्य को जन्म दिया अथवा नाट्य स नृत्य की उत्पत्ति हुयी। सभवत व अनुकरणात्मक और आनन्द उपभोग की प्रवृत्तिया से सहारा प्राप्त कर आगे बढे और भिन्न भिन्न क्षेत्रा मे प्रगति कर गय। हा साहित्यिक नाटका म, भरत मुनि के नाट्यशास्त्र के आधार पर कहा जा सकता है कि नृत्य को अभिनय के पश्चात् स्थान मिला। अतएव निष्कर्ष क रूप म निवेदन है कि नाटक व नाट्य शब्द को अभिनयार्थक नट धातु स व्युत्पन्न मान लेन म कोई आपत्ति दृष्टिगोचर नही होती है और लोक जीवन म प्रचलित नृत्त व नृत्य का साहित्यिक नाटका म कालान्तर म ही स्थान प्राप्त हुआ एसा प्रतीत हाता है। आज ता नाट्य शब्द म अथत नृत्य तथा नाटक दाना ही समाविष्ट रहत हैं। नाटक सगीत, नृत्य काय व्यापार तथा कविता की सवतोमुखी कला क रूप मे स्वीकार किया जाता है।[5]

नाटक और रूपक

आज ता नाटक रूपक का पर्याय बन गया है। वास्तव म शास्त्रीय दृष्टि स

---

1 ना० शा० (डा० घोष) पृ १

2 वही

3 वही ४-८-४६

4 देखिये प्रथम पृ०। भारतीय नाटय साहित्य पृ० १।

5 वही

नाटक, रूपक का एक भेद मात्र है। शास्त्रीय नियमो से अवगत विद्वान तो इस भेद को स्पष्ट करने का प्रयास करते हैं परन्तु आधुनिक आलोचक तो इसे नाटक का प्राचीन नाम तक कह देते हैं।[1] अतएव, वर्तमान समय में रूपक शब्द नाटक के रूप में तथा सभी प्रकार के नाट्य भेदो को अन्तर्निहित रखने वाले शास्त्रीय शब्द के अर्थ में भी प्रयुक्त होता[2] है। इनके अतिरिक्त रूपक एक अन्य विशिष्ट अर्थ में भी प्रयुक्त होता है। वे नाटक जिनमें भावनाओं का मानवीकरण किया जाता है जैसे प्रबोधचन्द्रोदय और कामना अथवा, वे नाटक जिनमें पात्र किसी प्रतीयमान तत्त्व या प्रवृत्ति का प्रतिनिधित्व करते है रूपक कहलाते है।[3]

व्युत्पत्ति की दृष्टि से रूपक

रूपक शब्द रूप धातु में णवुल् प्रत्यय जोडने से उत्पन्न हुआ है। स्टेन कोनाने इसे छाया नृत्य से सम्बन्धित माना है। डा० कीथ भी इससे सहमत है।[4] परन्तु वास्तव में जैसा कि एस० के० डे का मत है रूप का तात्पर्य चक्षुग्राह्य प्रदर्शन (विजिबल रिप्रजण्टेशन) है।[5] ऋग्वेद संहिता में रूप शब्द वेश बदलने के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।[6] तैत्तरीय ब्राह्मण थेरगाथा और मिलिन्द प्रकाशन आदि में इसका प्रयोग विवाद का विषय बना हुआ है। पर नाट्यशास्त्र में इनका प्रयोग निर्विवाद सिद्ध होता है।[7] इससे यह प्रतीत होता है कि रूपक शब्द प्राचीन काल से चला आ रहा है। यहां यह कहना ठीक ही होगा कि रूपक शब्द के इन प्रयोगो के प्राप्त होने पर भी उसका अधिक और सर्व प्रचलित प्रयोग दशरूपककार के उपरान्त ही प्रारम्भ हुआ। यद्यपि पार्वती परिणय नामक नाटक में रूपक शब्द का प्रयोग हुआ है किन्तु उसका काल निश्चित न होने के कारण रूपक शब्द के प्रचलन का अधिकांश श्रेय दशरूपककार को ही दिया जाता है।

---

1 हिन्दी साहित्य कोश ज्ञानमंडल लि० पृ० ६७०।

2 वास्तव में अब नाटक एक ही अर्थ का बोधक नहीं रहा, बल्कि दो भिन्न अर्थ देने लगा है। नाटक रूपक और नाटक रूपक भेद। रूपक रहस्य, चतुर्थ सं० पृ० ५०८।

3 व 4 टाइप्स आव संस्कृत ड्रामा द्वितीय अध्याय।

5 *Types of Sanskrit Drama, chap 2*

6 ऋग्वेद ६—४६—१८।

7 दशरूप विधानन्तु पाठय योग्य प्रयोक्तिमि। ना० शा० निर्णय सागर प्रेस संस्करण सन १६४३ पृ० ५।

दशरूपककार एव रूपक

दशरूपककार का मत है कि रूप के आराप के कारण नाट्य का रूपक कहते हैं। इसमे अवस्थानुकृति के साथ रूप का भी आराप होता है।[1] इसमे अवस्था के अनुकरण के साथ नयनाभिराम प्रदशन का सम्मिलित किया गया। साहित्य दपण कार ने रूपक का वणन करते समय तद्रूप[2] शब्द पर अधिक बल दिया है। वास्तव म अभिनय कला का पूण और सफल रूप हमे रूपक म ही मिलता है। नृत्त, नृत्य व नाट्य ये तीना रूपक की प्रारम्भिक भूमिकाएँ हैं। अभिनय कला का पूण और चरम रूप हम रूपक म ही मिलता है।[3] शाब्दिक अथ की दृष्टि से यह कथन उपयुक्त प्रतीत होता है किन्तु नृत्त, नृत्य, नाट्य और रूपक के ही क्रम से अभिनय का विकास मानने के कोई ठोस प्रमाण नहा है।[4] श्री डी० आर० माकड का मत है कि रूपक कम अका व कम पात्रा वाले रूपा को पार कर भाण, वीथी, अक, प्रहसन और व्यायाग आदि रूपा का पार कर अय रूपा म परिवर्तित व पुष्पित हुआ[5] किन्तु भरत मुनि प्रथम अभिनीत रूपक का समवकार और दूसरे को डिम बतलाते हैं न कि भाण या वीथी। इन दोना नाट्यप्रकारा म पात्रा का बाहुल्य पाया जाता है अतएव उपरूपकों को रूपको का प्रारम्भिक चरण नहीं माना जा सकता। फिर भी, यह मानने म कोई आपत्ति नहीं है कि प्रारम्भिक दिना म लोक जीवन म सरल नाटका का प्रादुर्भाव हुआ होगा। श्री माकड का मत पूण नाटका व नाटका के विकासोन्मुखी अकुरा के बीच के काल का समझने म सहायक होता है। प्रारम्भ म जब नाटका के बीज विभिन्न स्रोतो से लिय गये उस समय के नाटका म सभवत सारल्य रहा होगा। (भारतीय शास्त्रीय नाट्य शिल्पविधान के प्रथम प्राप्य प्रामाणिक ग्रन्थ नाट्य शास्त्र

---

1 हिंदी दशरूपक पृ० ५

2 दश्य तत्राभिनेय तद्‌पारो छ पस्तुत रूपकम। ३/६।

3 भारतीय ना० सा० पृ० २३।

4 देखिये पृ० ३–८।

5 टाइप्स आव स० ड्रामा, द्वितीय एव चतुथ अध्याय प्रकाशन सन् १९३६।

6 यद्यपि राजशेखर ने नन्दिकेश्वर को भरत से पूवकाल मे रस का अधिष्ठाता *माना है पर तु नन्दिकेश्वर के ग्रन्थ व जीवन आदि पर* अभी प्रकाश नहीं पडा है। साथ ही नन्दी नटराज शिव का वाहक भी है। अतएव सभवत रस का अधिष्ठाता नटराज के वाहन को ही मान लिया गया हो। श्री एस० के० डे० इस मत से सहमत हैं। भरत से पूव कतिपय आचार्यों के नाम बताये जाते हैं यथा शाण्डिल्य पर उनके ग्रन्थ अप्राप्य ही है। एतदथ ना० शा० ही प्रथम प्राप्य प्रामाणिक ग्रन्थ है।

म नाट्य वद की उत्पत्ति नाटका व अभिनय उनरा वस्तु व उनर प्रयाजन आदि के बारे म एक सुदर कथा दा गयी है) ।

नाट्यवेद का प्रादुर्भाव

ऋषियो की जिज्ञासा

एक दिन अनाध्याय क दिन जब भरत मुनि अपने पुत्रा व शिष्या क सहित बठे हुए थ तब आत्रय आदि प्रमुख ऋषिया और श्रष्ठ मुनिया न भरत मुनि स प्रश्न किया श्रद्धय आपने नाट्यवेद का सपादन क्या और किसर लिए किया है ? इसके कितने अग है ? प्रयाग किस प्रकार किया जाता है ?[1] ऋषिया और तपस्विया की जिज्ञासशमन क लिय भरत न कहा कि हे मुनिया आप ध्यानपूवक सुनिय ।

भरत मुनि कहन लग कि स्वयभू मनुवाल सत्ययुग क समाप्त हान पर ववस्वत मनु क शासनकाल त्रेतायुग म जम्बूद्वीप पर भी काम क्राध मद मा‍ह लाभ का सचरण हान लगा और सवत्र गधव यक्ष मत्सरोग आदि न अधिकार जमा लिया। इन्द्र का सहायक जम्बूद्वीप भी शत्रुआ के अधिकार म चला गया यह देवताआ क लिय अनिष्टकारी घटना हा गई। तब इन्द्रादिक देवता पितामह ब्रह्मा क समीप उपस्थित हुय और उनसे एक एसी युक्ति निकालने का प्राथना की जिसम वेदा क अनाधिकारी स्त्रियो व शूद्रादि भी भाग ले सकें[2] एव जिसका आनन्द श्रवणेद्रियो के साथ चक्षुआ स भी प्राप्त किया जा सके ।[3] ब्रह्माजी ने उन्ह तथास्तु कह कर विदा किया और उनके प्रस्थान क पश्चात वे ध्यान मग्न हो गय । ध्यानावस्थान म उन्ह एस वद की रचना का आभास मिला जिसस धम अथ और यश का प्राप्ति हो सके। वह उपदेश इतिहास शिल्पकला तथा सवशास्त्रतत्व समन्वित था । तब पितामह न ऋग्वेद स पाठ सामवेद स गीत यजुर्वेद से अभिनय और अथववद स रस लेकर पचम वद नाट्यवद की रचना की।[4] इसम शिव स ताण्डव[5] पावती[6] स या सारवशा[7] स लास्य तथा मधुकटभ वध

---

1 हि० ना० उदभव और विकास ले० डा० दशरथ ओझा प्रथम स० वि० स० पृ० १३ ।

2 Natya Shatra ascribed to Bharat Muni-Translated in English by Dr Man Mohan Ghosh I Edition—(1—7 to 12)

3 We want an object × × × × which must be audible as well as visible Ibid

4 ना० शा० १४ १५ १६ १७ ।

5 दशरूपक १—८

6 ना० शा० अध्याय

7 दशरूपक १—४

करते समय विष्णु की कायकुशलता से अभिनय तत्व वत्तियो, का सम्मिलित किया गया।[1] नाट्य शास्त्र म यह भी उल्लेख मिलता है कि वृत्तिया की वंश स भी लिया गया। यथा ऋगवेद स भारती यजुर्वेद से कशिकी एव अथववद आदभटी को प्राप्त किया गया।[2]

नाट्यशास्त्र एव प्रारम्भिक अभिनय

उपयुक्त नाट्यवेद की रचना के उपरान्त ब्रह्मा न इन्द्र को कुशल व प्रगल्भ दवताओ की सहायता से इसके प्रचार और प्रसार को कहा। इन्द्र न देवताओ की असमथता प्रकट की। तब यह काम भरत को सौंपा गया।[3] भरत न ब्रह्मा से उक्त विद्या सीख कर अपने सौ भरतो को सिखाया। सुकुमार भावो की अभिव्यक्ति के लिय कैशिकि वत्ति का प्रदशन स्त्रियो के बिना सभव न हो सकने के कारण ब्रह्मा न अपने मानस से मजुकेशी, सुकेशी, मिश्रकेशी, सुलोचना, सौदामिनी, देवता देवसना, मनोरमा, सुदूर्ति सुन्दरी विदग्धा सुमाला, सतति, सुनन्दा, सुमुखी, मागधी अजुनी सरला करला, धति नन्दा, सुपुष्पलता आदि अप्सराओ की सष्टि की। नाट्य विद्या म पारगत भरत न अपन शिष्यो व पुत्रो की सहायता स प्रथम समवकार 'असुर पराजय' का अभिनय किया। अभिनय से पूव विभिन्न देवी देवताओ का अभिनय किया गया।

नाटक और जजर पूजन

इस अभिनय को देख कर दवता अत्यन्त प्रसन्न हुय व भरत को कई उपहार दिय। भरत न इन्द्र का ध्वज भी उपहार के रूप म प्राप्त किया।[4] दानव अपनी पराजय स अप्रसन्न हुय और विरुपाक्ष की अध्यक्षता म[5] उपद्रव करन लगे। तब इन्द्र न अपन उपरिकथित ध्वज स असुरो का जजर (चूर चूर) कर दिया। इसी स इन्द्र ध्वज को जजर नाम स अभिहित किया जान लगा तथा नाट्यारम्भ म उसकी स्थापना व पूजा रगशाला म (पूव) प्रथम होने लगा। ब्रह्मादिक देवताओ न विश्वकर्मा को आज्ञा देकर एक ऐसी रगशाला बनवाई जिसम भविष्य म निर्विघ्न अभिनय

---

1 ना० शा० डा० मनमोहन घोष द्वारा अग्रेजी मे अनूदित प्र० सस्करण,१ १६, २० २१, २२, २३ २४

2 वही १७, २४

3 ना० शा० डा० म० मो० घोष द्वारा अग्रजी मे अनूदित प्र० स० ५५ स ५६

4 वही १-५८ से ६१

5 वही १—६४ ६८

हो सके। उसकी रक्षा निमित्त उसके भिन्न भिन्न भागों की रक्षा का भार विभिन्न देवताओं को सौंपा गया।

रंगपीठे मण्डपस्य विनियुक्तस्तु चन्द्रमा ।
यथा लोकपालाश्च विदिक्ष्वपि च मारुत ।
नेपथ्य भूमौ मित्रश्च निक्षिप्तो वरुणो म्बरे ।
वेदिका रक्षा वह्निर्भाण्डे सर्व दिवौकसः ।
\+ \+ \+ \+ ॥ १ २ आदि।

सभी भागों की रक्षा के लिये देवताओं की नियुक्तियां की गयीं। (एक ही देवता को एक से अधिक स्थानों की रक्षा का भार भी सौंपा गया। इससे विदित होता है कि देवता का उस भाग पर विद्यमान रहना आवश्यक नहीं था।)

तब ब्रह्मा ने दैत्यों को सम्बोधित करके कहा कि यह नाट्य सर्वदुःखहारी, शास्त्रज्ञानकारी, महागुणकारी, शान्तिकारक, धर्म सहायक, आयुर्वेदक, बुद्धि प्रगल्भता दायक, यशोवर्धक एवं हितकारी होगा।[3] इसमें धर्म, अर्थ, काम, हास्य, युद्ध शिल्प तथा विनाश के किसी भी कार्य का अनुकरण किया जा सकता है। इस पर दैत्य प्रसन्न हो गये और फिर भविष्य में उन्होंने बाधा नहीं डाली। भरत ने शिवजी के सम्मुख त्रिपुर दाह नामक डिम का भी अभिनय किया। त्रिपुरारि इस डिम से अत्यन्त प्रसन्न हुये। कालान्तर में भरत के पुत्रों ने ग्राम्य (अश्लील) अभिनय कर दिखाया। इस पर देवता अप्रसन्न हुये व उन्हें मृत्युलोक में शूद्र बन कर रहने का शाप दिया। तब नट पृथ्वी पर आ गये और उनके अभिनय की उन्नति में पहले उर्वशी ने व बाद में नहुष ने सहयोग किया।

नाट्यशास्त्र स्वरूप व रचयिता

उपरिलिखित कथा पर प्रकाश डालने वाले नाट्यशास्त्र के दो रूपों का उल्लेख मिलता है। प्रथम तो द्वादश साहस्री और दूसरा षट् साहस्री।[4] यही नहीं दोनों के आधार पर प्रणेताओं का भी संकेत विद्वानों ने किया है।[5] उपलब्ध नाट्य शास्त्र में छत्तीस अध्याय हैं। इनमें विभिन्न शास्त्रों का सार तत्व लिखा गया है।[6]

1 ना० शा०, डा० म० मो० घोष द्वारा अनूदित ८६ से ८७।
2 ना० शा० प्र० अध्याय ८८ से ९३।
3 ना० शा० डा० घोष द्वारा अनूदित १०३ ११४, १२०
4 शिकार और भरत, भूमिका ले० डा० रा० कु० वर्मा प्र० [illegible]
5 मो० घ० प० । ना० शा० और रंगमंच पृ० ३३ प्र० सं० एवं डा० म० मो० घोष नाट्य शास्त्र की भूमिका में।
6 ना० शा० और रंगमंच पृ० ३०।

इस ग्र थ मे विवेचन करते समय पहले तो नामत उल्लेख किया जाता है और फिर कमत । कही केवल सूचना मे ही काम चला लिया जाता है ता कही सविस्तार वर्णन किया जाता है। व्युत्पत्ति की दृष्टि से शब्द की व्याख्या भी की जाती है। अन्य ग्रथो से उद्धरण भी दिये गय हैं।[1] नाट्य शास्त्र म श्लोको व आर्य छन्दो को मुख्य स्थान मिला है। इस ग्र थ म अटठावन प्रकार के सम, अर्ध सम, व विषम छन्द प्राप्त होत हैं और गद्य के भी दर्शन होते है।[2] इसम अलकारो, दोषो आदि का सुन्दर वर्णन किया गया है। विद्वानो का मत है कि भरत से पूर्व कोहल दत्तिल, शाडिल्य, वत्स्य आदि ने नाट्यशास्त्र पर कुछ लिखा था और शारकरण अश्मकुट्ट नाकहकुट्टा और बादरायण आदि सग्रहकार हो चुके थे।[3 4] परन्तु ये लेखक आज नाम मात्र ही रह गय हैं। श्री एस के डे ने नाट्य शास्त्र को ही प्रथम प्राप्य आलोचना शास्त्र माना है जो वस्तुत यथार्थ है।[5] उक्त ग्रथ की विषय प्रतिपादन शैली भी सुन्दर बन पडी है।

---

1 भा० ना० शा० और रगमच पृ० ३७।

2 ना० शा० डा० म० मो० घोष भूमिका।

3 4 डा० घोष ना० शा० की भूमिका प्रथम सस्करण।
उपर्युक्त अधिकाश नाम भरत द्वारा प्रस्तुत किये गये उसके सौ पुत्रों के नामों से मिलते हैं जसे कौहल, दत्तिल शालिकर्ण बादरायण आदि। इन ग्र थाकारों का उल्लेख दामोदरदत्त, हेमचद्र, शागदेव शारदातनय, सिंहभूपाल आदि विद्वानों ने अपने ग्र थो मे किया है।

5 भरत के ना० शा० के बारे में ही नही भरत के निजी अस्तित्व के बारे मे भी विद्वानों मे मतभेद है। यथा डा० दास गुप्त (क) ने भरत मे भाव, राग और ताल का सम्मिश्रण पाया है। ये भरत शब्द को अक्षरों मे बांट कर अर्थ करते हैं। उन्होने भ को भाव का र को राग का और त को ताल का प्रतीक मानते हुये भाव ताल और रस के समन्वय कार को भरत कहा है। डा० प्रभूनारायण नाटयाचार्य ने (ख) भरत के पदवी होने की सभावना प्रकट की है। उनका यह अनुमान दशरूपक पर आधारित है (ग) कतिपय अन्य विद्वानों ने भरत जाति की ओर सकेत किया है (घ) चाहे जो कुछ हो आज नाटय शास्त्र भरत मुनि के नाम से ही सम्बधित माना जाता है।

(क) Indian Stage Volume I

(ख) राजस्थानी लोक नाटक ख्याल सा० भूमिका खड अप्रकाशित।

(ग) दशरूपानुकारेण यस्य मर्यति भावका नम सर्वविदे तस्मै विष्णव भरताम च। (पद १), (पृ० १) (घ) डा० उमराव बहादुर

नाट्यशास्त्र वर्णित नाट्यवेद की दैवी उत्पत्ति की कथा से हम निम्नांकित निष्कर्ष निकाल सकते हैं

नाट्यवेद की दैवी उत्पत्ति कथा में निष्कर्ष

(१) नाट्यशास्त्र की रचना से पूर्व संगीत नृत्य व अभिनय के तत्त्व विद्यमान थे। साहित्यिक नाटकों में जिनके आचार्य भरत माने जाते हैं उनमें अभिनय के पश्चात् नृत्य को स्थान मिला।

(२) भरत मुनि के समय में नट व नटी अभिनय में भाग लेते थे। उनके समय में रूपक के कई भेद प्रचलित थे।

(३) नाटकों की सृष्टि दुःख से विमुख होकर सुख प्राप्ति के लिये की गई थी।

(४) नाट्यसृष्टि के मूल में वेदाध्ययन के अयोग्य लोगों को भी ज्ञान प्रदान करने की भावना विद्यमान थी। नाटकीय प्रदर्शन मनोरंजनपूर्ण होते हुए भी सामाजिक एकता का प्रयास थे। इनके द्वारा सामाजिक भेदभाव को दूर करने के प्रयत्न किए गए थे।

(५) भारतीय प्रवृत्ति सदा ही आध्यात्मिकता की ओर रही है। भारतीय मनीषी ऐहिक क्रिया कलापों व वस्तुओं को पारलौकिकता तथा आध्यात्मिकता से सम्बन्धित करते रहे हैं। उदाहरणार्थ आयुर्वेद पंचम वेद कहलाता है और वाराहमिहिर का ज्योतिष ग्रन्थ वाराहि संहिता कहलाता है। राजशेखर ने काव्यमीमांसा में काव्य शास्त्र की दैविक उत्पत्ति बताई है।[1] वाल्मिकी रामायण में कहा गया है कि ब्रह्मा के आदेश से सरस्वती ने कवि के मुख से श्लोक की सृष्टि करवाई और पितामह ने आदेश दिया कि कवि नारद द्वारा सुनाई गई रामकथा को काव्यबद्ध करें।[3] और तो और, बेलिनिसन

---

1 बच्चनजी आधुनिक युग में कहते हैं नूपुर भङ्गी सभी यहाँ पर साथ बैठ कर पीते हैं सौ सुधारकों का करती है काम एक अकेली मधुशाला। मधुशाला ५७, प्रथम संस्करण, यही भाव नाट्याभिनय द्वारा युगों पूर्व पूर्ण करने का प्रयत्न किया गया था।

2 ऐस० के० डे०, हिस्ट्री ऑव इण्डियन पोइटिक्स प्रथम भाग प्रथम संस्करण पृ० २५ से ६५।

3 रामायण—बालकाण्ड।

रुक्मिणीरी' (प्रथिराज लिखित) को भी पचम वेद कहा गया है।

(६) नाटकीय प्रदशन पर धम का उल्लेखनीय प्रभाव था और वग विशेष (देवताओं) का प्रमुख हाथ था। उसमे उक्त वग विशेष का उत्कष बताया जाने पर भी नाट्याभिनय सिद्धान्तत वग सकीणता से दूर थे।

(७) प्रथमत अभिनय म बाधाए उत्पन्न हुई थी और उन्हें दूर करने के लिये रगशालाओ का निर्माण किया जाने लगा। भरत मुनि के समय तक रग मञ्चो के विभिन्न प्रकार निर्धारित हो चुके थे।

नाट्यवेद की दवी उत्पत्ति प्रस्तुत करने वाले नाट्यशास्त्र का उल्लेख है कि नाटको म शकर से ताण्डव पावती से लास्य तथा विष्णु के रग कौशल एव उनकी कायकुशलता से वत्तिया को लिया गया व नारद को सगीत सहायक के रूप म नियुक्त किया गया। इस कथा से ज्ञात होता है कि वेदो म नाटक के तत्त्व विद्यमान थे। इससे डॉ० कीथ ने निष्कष निकाला है कि वैदिक साहित्य म नाटको का अभाव था।[1]

वेद और नाट्य तत्त्व

वेदो म कम से कम १५ स्थलो पर सवाद सम्मता[2] मानते हुये वे कहते हैं कि नाटक का वास्तविक उदय तभी माना जा सकता है जब कि अभिनय करने वाले जागरूकतापूवक अभिनय करें और यदि वह अभिनय लाभ के लिए नही हो तो कम स कम उसस सामाजिक व नरो को आनन्द की उपलब्धि अवश्य ही होनी चाहिये। वैदिक कमकाण्ड करन वालो का उद्देश्य प्रत्यक्ष रूप से अभिनय करना न

---

1 Indeed if it were worthwhile the conclusion × × × × might legitimately be drawn that the absence of any drama in the vedic literature was recognized since it was necessary for Gods to a k Brahma to create a completely new type of literature suitable for an age posterior to that in which the Vedas already existed
A B Keith Sanskrite Drama P 13 Year of pubi cation-1924

2 There are atleast fifteen (hymns) whose characters as dialogues is quite undeniable and most of these hymns are of marked interest -Sanskrite Drama—by A B Keith P 13 Edition Year-1924

होने के कारण वे वैदिक कर्मकाण्डों में नाटक का अभाव पाते हैं।[1] यहाँ यह कहना उपयुक्त होगा कि वेद धर्म ग्रन्थ हैं नाट्यग्रन्थ नहीं। अतएव वैदिक साहित्य नाट्य साहित्य नहीं है फिर भी वैदिक कर्मकाण्डों में अभिनय व नाट्य तत्वों को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है। डॉ० कीथ की नाटकों को परखने की कसौटी अधिक उपयुक्त नहीं दिखाई देती है। यदि यह सत्य है तो भारत के वे नाटक जिनमें मंच पर द्वन्द्व दिखाया जाता था और अभिनेताओं को शारीरिक कष्ट होता था नाटक नहीं ठहरते हैं। इसी प्रकार हैमलेट नाटक में जो दिखाया जाता है वह हैमलेट के चाचा के दुःख का कारण बनते हुए भी नाटक ही माना जाता है। यही नहीं इब्सन के नाटक भी सामाजिकों को मूर्च्छित कर देते हैं।[2] अतएव डॉ० कीथ का मत कि नाटक सर्वदा नटों व सामाजिकों को आनन्द ही प्रदान करते हैं उपयुक्त प्रतीत नहीं होता है। साथ ही वैदिक ऋषियों को तो कर्मकाण्ड से आनन्द उपलब्ध होता था और वे जागरूकता पूर्वक कर्मकाण्ड में इन्द्र या जिस किसी देवता की भूमिका में कार्य करते थे उसके अभिनय में भाग लेते थे। डा० कीथ स्वयं इससे सहमत हैं।[3, 4]

ऋग्वेद १६५ १७०, १७१ में जहाँ इन्द्र की विजय घोषित की जाती है वहाँ पाठ व नृत्य करने वाले सशस्त्र भी[4] रहते थे जो अभिनय के अनुरूप है। यह अभिनय धार्मिक भावनाओं के अनुकूल लोक में प्रचलित किसी नाट्यप्रणाली के आधार पर हुआ करता होगा। इसी प्रकार सोमयज्ञ के समय सोम विक्रेता और सोम क्रय करने वाले के संवाद भी अभिनय के साक्षी हैं।[5] उपर्युक्त कथन की

---

1 'A drama proper can only be said to come into being when the actors perform parts deliberately for the sake of the performance to give pleasure to themselves and others if not profit also if a ritual includes elements of *representation*, the aim is no representation but actors are seeking a direct religious or magic result Ibid— P 24

2 Types of Tragic Drama by C E Vahghan Edited in the year 1924 Lecture XI

3 *There is threfore*, × × × *no fatal objection to assuming that* the period of the Rig Veda knew dramatic spectacles, religious in-character in which the priests assumed the roles of Gods *and sages in order to imitate on earth the events of the* heaven Sanskrit Drama P 27

4 the performers of the rites assumed for the time being person alities other than their own —Keith Sanskrit Drama P 23

5 संस्कृत ड्रामा लेखक डॉ० कीथ, पृष्ठ २०।

6 कात्यायन सूत्र ७-८-२५।

पुष्टि वेन्र म प्राप्त होने वाले सवादो से होती है।[1] यमी यम से प्रणय याचना करती है।[2] इसी प्रकार से पुरूरवा अप्सराओ को प्रणय म विश्वसनीय न होने के कारण कोसता है एव उवशी उसका उत्तर देती है। मैंन तो तुम्हे पहले ही सावधान कर दिया था किंतु तुमने तो मेरी बात ही नही सुनी। अब कुछ भी कहने सुनने का क्या प्रयाजन ?

× × × जमे एक उपा से पहले की अनेक उपायें जा चुकी होती है, उसी प्रकार मैं भी अब तुम्हारे पास से जा चुकी हू। पुरूरवा। अब तुम मेरा ध्यान छोडे, चलो जाओ मैं तो वायु की तरह हू पकड मे नही आ सकती। × × × × × पुरूरवा। तुम क्या मृत्यु की कामना करते हो ? अपने शरीर को भेडियो का आहार बनाने की बात मत सोचो। समभो की स्त्रियो के साथ मित्रता नहीं हो सकती। उनका हृदय भेडियो के हृदय के समान (कठोर) होता है।[3,4] कही कही तो तीन वक्ताओ का भी उल्लेख मिलता है जो सवादात्मक अभिनय पर प्रकाश डालता है। उदाहरणार्थ इन्द्र अरुन्धति और वामदेव सलाप।[5] इन्द्र इन्द्राणी और वपाकपि

---

1 Yami intent on an effort × × × × to induce Yama to accept and make fruitful her proferred love sanskrit Drama A by B Keith P 13 publication Year 1924

2 ऐसे अन्य सवादो मे ऋग्वेद की X–108 X–51–3 I–179 X–28 III—33 I–165 170, IV–42, X–95 I–165 V—11 आदि ऋचायें प्रस्तुत की जा सकती हैं।

3 ज्ञानोदय प्रणय अक आठ अक्टूबर १९५८ पृ २७ लेखक श्री शिवप्रसादसिंह।

4 अशासत्वा विदुषी सस्मिन्न हुन्नम
अश्रुणो किम भुन जावदासि × ××
किमतो वाचा कृणवा तवा है
प्रक्र मियभुष सामप्रियेव
पुरूरवा पुनरस्त परहि दुरा यवा
वात इवा हमस्मि।
पुरूरवा मामृया मा प्रापप्तो
मात्वा वृका सो अशिवसिदक्षन
नवे स्त्रैणानि सख्यानि सन्ति
वृकाणां हृदया येता।' ऋग्वेद १०, १०।

5 ऋग्वेद ४–१८।

संलाप¹ ग्रादि म स्वगत भाषण में भी स्थान प्राप्त है जिनसे नाटकीय मन्त्र भी प्राप्त सम्भवत विद्वानो का ध्यान नहीं गया है। यथा

ग्रभिनहाना यविनु गर्याश्चित्र श्रवराम ।
नेषा दशाभिगण मता। ऋग्वेद (१-१ ५)।

ऐसी ऋचाओ का पाठ वस्तुतः ऋषि सस्वर करता रहा होगा। अत यहां अभिनय हस्त सचालन व स्वगत भाषण के विद्यमान होने म सन्देह नही है। ऋग्वेद के सवाद सूक्तो म नाटकीय अश अवश्य ही विद्यमान हैं।² डा० श्रूडर और डा० हर्टल भी इन सवादो म नाटकीय विराग के मत म सहमत है।

ऋग्वेदकाल म नाटकीय तत्वो के होने की सम्भावना तो डॉ कीथ को भी है, तभी तो वे कहते हैं कि ऋग्वेदकाल काल म तो अवश्य ही नाटयाभिनय का अभाव था।³ डॉ० दासगुप्त का कथन है कि वैदिक मन्त्रो म नाटकीय तत्व विद्यमान हैं और तत्कालीन धार्मिक सगीत और नृत्य के साथ नाटकों का सम्बन्ध रहा है।⁴ आगे चलकर, वैदिक काल म नाट्य सबधी शब्दावली व नट जाति के नाम न पाकर वे पुन सन्देहात्मक बन जाते हैं।⁵

वैदिक साहित्य और नाट्य सम्बन्धी शब्दावली

डा० कीथ का भी मत है कि यजुर्वेद म सभी धधे करने वालो के नाम तो हैं पर नट का नाम क्यो नहीं है। यहा यही सकेत उपयुक्त होगा कि वेदो म 'नट्' धातु⁶ व 'शलूष' शब्द के प्रयोग अवश्य ही प्राप्त होते हैं।⁷ डा० दशरथ ओझा भी इससे सहमत हैं।⁸ डा० कीथ ने शलूष शब्द का नाचने वाले के अर्थ म ग्रहण

---

1 ऋग्वेद १० ८६।

2 बलदेव उपाध्याय सस्कृत साहित्य का इतिहास चतुर्थ सस्करण पृ० ४०६।

3 We are infact in every case presented with a bare possibility wich sometimes involves absurdities and in all cases does nothing whatever to help us in interpreting the hymns What is certain is that later vedic period knew nothing whatever of such possibilities Keith s Sanskrit Drama P 19

4 History of Sanskrit Literature vol I P 44 Year of publication—1947 by Dr S K Das Gupta & S N De

5 Ibid P 40 47

6 ऋग्वेद ७-१०४-२३।

7 "नताय सूत गीताय शलूष समाचार निरष्ठायें।"
यजुर्वेद सहिता तीसवा अध्याय छठा मन्त्र।

8 हिन्दी नाटक उदभव और विकास, प्रथम सस्करण पृष्ठ २६।

किया है, नट के अर्थ में नहीं। कुल परम्परागत नाचने वाले के अर्थ में वशवर्ती शब्द का प्रयोग होता था शलूष का नहीं।[1] महाभाष्यकार महीधर ने शैलूष का अर्थ नट किया है और वैयाकरण सम्प्रदाय में 'नट शलूषा' कहा गया है।[2] अतएव शैलूषा को नट मान लेने में कोई भी विप्रपत्ति नहीं दीख पड़ती है।[3]

यह भी विचारणीय है कि शब्दों के अर्थ का परिवर्तन होता रहता है। यह उनकी प्रवृत्ति है।[4] इसलिए आजकल समाज में प्रचलित शब्दों को तत्कालीन साहित्य में खोजना दुस्साहस ही होगा। इसके अतिरिक्त डा० कीथ प्रभृति पाश्चात्य विद्वानों के पास यदि शैलूष को नट मानने के प्रमाण नहीं थे तो उन्हें पक्का निश्चय भी कैसे हो गया कि शैलूष का अर्थ नट नहीं ही होता था।

निष्कर्ष

अतएव हम कह सकते हैं कि वैदिक काल में संवाद, स्वगत, संगीत और अभिनय आदि विद्यमान थे। ये तत्त्व आगे चलकर पंचम वेद-नाट्यवेद को साकार स्वरूप प्रदान करने में सहायक हुए। वैदिक कर्मकाण्ड में भाग लेने वाले अन्य पात्रों की भूमिका में भाग लेते थे और वे सशस्त्र भी रहते थे। इनके अभिनय को समाज में प्रचलित किसी नाट्य प्रणाली की छाया माना जा सकता है। आलोच्य युग में 'नट' धातु व शलूष शब्द आदि के प्रयोग अभिनय के प्रतीक हैं। साथ ही यह नहीं भुलाना चाहिए कि वेद नाट्य ग्रन्थ नहीं हैं अतः वैदिक कर्मकाण्डों को नाटक ही कह देना उनका अनादर करना होगा।

नाटकों का प्रारम्भ

कठपुतली-नृत्य से—डॉ० पिशेल

नाटकों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में दूसरी विचार धारा इनके लौकिक प्रादुर्भाव पर बल देती है जिसके अनुसार नाटकों का आविर्भाव लोक जीवन में ऐहिक क्रिया कलापों से हुआ। इस सम्बन्ध में अनेक मत हैं। एक मत यह है कि नाटक की उत्पत्ति कठपुतली के खेल से हुई। इस मत के प्रतिपादक पिशेल महोदय हैं। इस सम्बन्ध में दो शब्द बड़े महत्त्व के हैं। उनमें से एक है सूत्रधार और दूसरा स्थापक। वे सूत्रधार को डोरी पकड़ने वाला समझते हैं व स्थापक को किसी वस्तु

1 गोविन्द वल्लभ पंत भारतीय ना० शा० और रङ्गमंच पृष्ठ २४, प्रथम संस्करण।
2 वही।
3 बलदेव उपाध्याय संस्कृत साहित्य का इतिहास। पृष्ठ ४०६ चतुर्थ संस्करण।
4 लिगवी एण्ड कजामियाँ—ए हिस्ट्री आव इंगलिश लिटरेचर, प्रथम संस्करण, भूमिका।

को नागर रखने वाला। डॉ० श्यामसुन्दरदास ने कठपुतली व नृत्य को रूपकों की प्रारम्भिक अवस्था माना है।[1] प्रो० हिलब्रा ने पिछले मन्तव्य के मत का खण्डन किया है और अधिकांश भारतीय विद्वान भी इसम सहमत नहीं हैं।[2]

छाया नाटकों से–प्रो० लूडर

इस सम्बन्ध म दूसरा मत प्रो० लूडर का है जो नाटकों की उत्पत्ति छाया नाटकों म मानते हैं। इस मत की पुष्टि प्रो० कोनो ने की है। उन्होंने रूप शब्द का छाया से सम्बन्धित सिद्ध करने का असफल प्रयास किया है। डा० कीथ ने उसका खण्डन किया है।

यहाँ यह कहना अनुपयुक्त न होगा कि उपर्युक्त दोनों नाट्य प्रणालियाँ उनके अपने अस्तित्व निमित्त आधार स्वरूप नाट्य प्रणाली की अपेक्षा रखती हैं। अतएव इस प्रकार के सिद्धान्त अमान्य हैं।

मृतक और वीर पूजा–डॉ० रिजवे

डा० रिजवे ने नाटकों की उत्पत्ति मृतक वीरों की पूजा म मानी है। विद्वान् इस मत से भी असहमत हैं।[4] डा० कीथ ने इसका खण्डन करते हुए फसल पकने की प्रसन्नता को नाटकों का मूल स्रोत माना है।

वेजीटशन सिद्धान्त (फसल पकना)–––डॉ० कीथ

उनका सिद्धान्त है कि खेती पकने पर जैसे रोमन सटिक (Satic) और कोरेटस (Kouretes) और फ्रजियन कोरियबेनेट (Phygian Korybanets) थे वैसे ही भारतीय नाटकों की भी अवस्था रही होगी। यह मत स्पष्टत अनुमान पर ही आश्रित है। इसका आधार भारत की प्रत्यक्ष वस्तु को पाश्चात्य वस्तु के अनुरूप आकने की प्रवृत्ति दिखाई देती है।

यूनानी नाटकों की अनुकृति–––वैबर और विंगिश

इसी प्रवृत्ति का विकसित रूप हमे दिखाई देता है भारतीय नाटकों को यूनानी नाटकों की अनुकृति घोषित करने वाले मत म। इस मत को मानने वाले विद्वान पाश्चात्य नाट्यकला को ही भारतीय नाट्यकला का मूल मानते हैं। वबर और विंडिश इस मत के प्रबल स्तम्भ हैं।

---

1 रूपक रहस्य पृ० १४ से १७ चतुर्थ संस्करण संवत २००६।

2 प्रो० मोहन वल्लभ पंत भारतीय नाट्यशास्त्र और रंगमंच, प १०, ११।

3 प्रसाद–'काव्य और कला हिन्दीनाट्यविमर्श पृ० १७ प्रथम संस्करण। 'भारतीय नाट्य शास्त्र और रंगमंच प० १२।

4 डा० कीथ संस्कृत ड्रामा" प० ४८ एवं 'हिन्दीनाट्य विमर्श" प १४

वेबर का मत

वबर का मत है कि सम्भवत भारतीय नाटक को यूनानी नाटका स प्रेरणा मिली है। व अनुमान क आधार पर ही यूनानी अभिनय को भारतीय नाटका का मूल मानते है। व स्वय अनुभव करत है कि इस मानन का न तो कोई प्रत्यक्ष प्रमाण है और न इन दाना नाट्य प्रणालिया म कोई आन्तरिक साम्य ही है।[1] इनके मत का मुख्य आधार सस्कृत नाटका म प्रयुक्त यवनिका शब्द है। इस उन्होंने यूनान स आया हुआ माना है। अब यह अमान्य है।

आज तो विद्वाना न यह भी सिद्ध कर दिया है कि मूल रूप जवनिका है। यवनिका नही।[2] यही नही जब यूनानी नाटका म पर्दा होना ही नही था तब अस्तित्व विहीन पर्द क आधार पर भारत मे कस जवनिका का निर्माण हुआ, कुछ ज्ञात नही होता।

विंडीश का मत

जहा डा० पिशल और अन्य विद्वाना न वबर क उपयुक्त मत का खण्डन किया है[3] वहा ब्राण्श महोदय न उस स्वीकार भी किया है। विडिश न सस्कृत रूपका पर यूनानी प्रभाव के सम्बन्ध म लिखत हुए वबर क मत का प्रबल समर्थन किया है। उनका आधार यूनानी और सस्कृत नाटका क कतिपय भाव या कथा साम्य रहे है। य साम्य किसी कृति विशेष क न होकर मानवीय भावनाओ स सम्बन्ध रखन

---

1 Consequently the conjecture that it may possibly have been the representation of Greek dramas at the Courts of Greekian Kings in Bactria, in the Punjab and in Gujrat (for 20 fardid Greek Supremacy for a time extended) which awakened the Hindus Faculty of imitation and so gave birth to the Indian Drama does not in the meantime admit of direct verification × × × No internal connection with Greek drama exists The History of Indian Litt III Edn by A Webber Translated into English by Dr Theodor and Johnnmann

2 हिंदी नाटय विमश पृ० २७। प्रसादजी ने भी जवनिका को ही शुद्ध रूप माना है वही। अमरकोषकार का कथन है प्रतिसीरा जवनिका स्यात तिरस्करिणी चसा। जो जवनिका को प्रयोग मे लाता है। इसी प्रकार हलायुध मे भी जवनिका का ही प्रयोग मिलता है। अपटी काण्डपट स्यात् प्रतिसी राजवनिका तिरस्करणी।

3 भारतीय नाटय शास्त्र और रगमच पृ० १३।

है। अतएव यदि दोनों देशों में एकसी बात गायी भी गयी हो तो उसको एक दूसरे का भावापहरण न कहना चाहिए।[१,२,३,४,५,६,७,८]

भारतीय और यूनानी नाटकों में पाया जाने वाला भेद भी हमारे मत की पुष्टि करता है।

(१) भारत में सुखान्त नाटक ही होते थे जबकि अरस्तू ने दुखान्त नाटकों को श्रेष्ठ माना है।

(२) भारत में अवस्था का अनुकरण होता था तो यूनान में कार्य का।

(३) भारतीय नाट्यगृह सीमित व शिल्प विधान के आधार पर बने हुए होते थे जबकि यूनान में अभिनय खुले में होता था।

(४) संस्कृत के नाटकों की कथा वस्तु भारतीय श्रोतों से रामायण, महाभारत या लोक प्रचलित कथाओं से चुनी गई है। उन पर यूनानी प्रभाव दिखाई नहीं देता है। हाँ पाश्चात्य लेखकों व नाटककारों द्वारा हमारे यहाँ के सिद्धान्तों एवं पौराणिक कथाओं के अपनाये जाने के प्रमाण अवश्य प्राप्त होते हैं।[९,१०]

(५) भारतीय नाटक अंकों में विभाजित होते थे परन्तु यूनानी नाटकों में ऐसा कोई विभाजन नहीं था। वहाँ दो दृश्यों को अलग करने के लिये समगान (कोरस) से ही काम चला लिया जाता था।

---

1 हिन्दी नाट्य विमर्श पृ० २८।

2 Indian Drama by Dr N Corambs P 115

3 Ibid P 118

4 एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका में डॉ० वाइ भी भारतीय नाटकों के स्वतन्त्र विकास के समर्थक हैं।

5 सुतरां हम भारतीय नाटशास्त्रों पर विदेशी प्रभाव पड़ने की बात नहीं मानते। हिन्दी में नाट्य साहित्य का विकास प० वि० प्र० मिश्र पृ० १०। द्वितीय संस्करण।

6 रूपक रहस्य चतुर्थ संस्करण पृ० २५।

7 भा० ना० शा० और रंगमंच पृ० १४

8 हिस्ट्री ग्राव क्लासिकल संस्कृत लिटरेचर ले० डा० कृष्णमाचारी द्वितीय संस्करण सन १९३७ पृ० ५०० ५६०।

9 भारतीय संस्कृति के चार अध्याय ले० रामधारीसिंह दिनकर प्रथम संस्करण पृ० १६७ १७८ १८०, ४१६ से ४५० इत्यादि।

10 जी० के० चेस्टर्टन चासर, प्रथम प्रथम और तृतीय अध्याय।

(६) भरतमुनि ने नृत्य के महत्व का भी स्वीकार किया है किन्तु अरस्तू के काव्यशास्त्र म ऐसी व्यवस्था नही की गई है।

(७) अरस्तू के सकलन त्रय का भारतीय नाटका से कोई सीधा साम्य नही है।

यूनानी प्रभाव और डॉ० कीथ का मत

वबर के अनुमान के समान ही डॉ० कीथ न भी अन्दाज लगाया। उन्होंने भी भारतीय नाटका द्वारा यूनानी नाटका स प्रेरणा ग्रहण करन की सभावना को ग्राह्य माना।[1] विद्वाना द्वारा इस सभावना की खिल्ली उडाई गई है।[2] डा० कीथ न सभवत जब इस मत म अधिक सार नही पाया ता अन्त म कह ही दिया कि जितनी सभावना भारतीय नाटका को यूनानी नाटका से प्रभावित मानने की है उतनी ही सभावना भारतीय नाटका के स्वतन्त्र विकास का मानन की भी है।[3]

यूनानी प्रभाव और भारतीय नाट्यशालाएँ

बीसवी शताब्दी के प्रारम्भिक दिना तक यहा के पुरातन नाट्यग्रहा पर भी पाश्चात्य प्रभाव सिद्ध करने के असफल प्रयास किए गए थ।[4] भारतीय विद्वानो न भी इस मान लिया था[5] किन्तु आज वह प्रयास भी असफल हो चुका है।[6]

निष्कर्ष

अतएव आज ता यही माना जाता है कि भारत की नाट्यकला भारत की निजी सम्पत्ति है वह किसी बाहरी देश से उधार लिया हुआ धन नही है। नाटकीय पट भी भारत का अपनी वस्तु है मगना की चीज नही है।[7] विद्वाना का[8] तर्कसगत व न्याय सगत मत है कि भारतीय नाटक भारतीयो की वस्तु है, उन पर यूनानी प्रभाव

---

1 It is undoubtedly a matter far from easy for any people to create from materials such as existed in India a true drama and it was perfectly legitimate suggestion of Weber s that the necessary impetues to creation may have been given by the contact of Greek with India (Sanskrit Drama P 57)

2 मोहनवल्लभ पत भारतीय नाट्य शास्त्र और रगमच, पृ० १३।

3 Dr Keith—Sanskrit Drama discussion of Western Inf in Indian Drama P 348

4 Ibid P 347 513

5 रूपक रहस्य, चतुर्थ सस्करण पृ० २१२ एव २०।

6 प्रो० बलदेव उपाध्याय स० सा० का प० ४०० से ४०८ चतुर्थ सस्करण।

7 वही।

8 वही। क्रमश

है।[1] यत्परमेष्वा रग गच्छ्न्ति आदि म पातञ्जलि क समय म नाटक म ही नहीं रग मच के भी अस्तित्व का प्रमाण मिलता है।[2] नाटको व नटो का और भी अधिक उल्लेख हम कौटिल्य क अर्थशास्त्र म प्राप्त होता है।

नाटक और अर्थशास्त्र

चाणक्य की आज्ञा है कि जो सत तमाश म कभी नही दवें उनक कुटुम्बी, उस अभिनय को नही देख सकते और यदि व छिप कर देख तो उन्हें सजा दी जाए।[3] उन्होने वर्जित दृश्यो की भी व्यवस्था की है यथा —

"कामम् दानवृति मात्र म कस्या निपात व वजयथु ।
× × × × × ×
काम दश जाति गात्र चरण मैथुन ना पहास नभयथु ।"[4]

इसी प्रकार चाणक्य न शत्रुराजा क वध म नाट्यशाला क उपयोग की ओर सकेत किया है। उनकी नीति है कि जिन दशा म राजा नाट्यशाला म जाकर अभिनय देखता है उसका तीक्ष्ण पुरुषो द्वारा वध करवा दिया जाव।[5] मित्र राजा को शिक्षा दी गई है कि व अग्नि विष और शस्त्र व्यवहार क खेल न देख। नटो को उपदश है कि वे अग्नि विष और शस्त्र व्यवहार के खेल राजा को न दिखाव।[6] उन्होंने नटो को अपने रूप को छिपाकर काय करने म कुशल बनाया है।[7] अतएव चाणक्य के काल म नटो नाटको और नाट्यशालाओ का अस्तित्व अवश्य ही प्रमाणित होता है।

---

1 अमरकोष कारने भ्रूकंसु 'स्त्री वेशधारी नतक पुरुष', कहा है। डा० कीथ इससे सहमत हे। सस्कृत ड्रामा पृ० ३६ से ४७।

2 भा ना शा और रग पृ० ३०।

3 अर्थशास्त्र तीसरा अधिकरण, पाचवा अध्याय, प्रकरण ५२, ५३, ६० पृ० २७०। अनुवादक पडित गगाप्रसाद शास्त्री, प्रथम सस्करण।

4 वही, प्रथम अध्याय, प्रकरण ७३ पृ० ३१४।

5 प्रेक्षु देशेषुया प्रेक्षाय पेक्षते पार्थिव स्वामु।
क्रा विहारे रमते यत्र क्रीडति चाम्भसि।"
वही, अधिकरण १३ दूसरा अध्याय १७२ प्रकरण, श्लोक ४७, पृ० ६२३।

6 कुशालवा शस्त्राग्निसवज न भेंपुपे ।
आतोद्यानि चपमन्तस्तिष्ठे युश्वरथ दिलपालकारश्च।'
वही, अधि २१ वा अध्याय, ७२ वा श्लोक, पृ० ३३, ४४

7 वही १५ १३ पृ० ५६।

बौद्धकाल मे नाटक

बौद्धकाल म नाटका की सूचना हम अवदान श्लावस से [1]प्राप्त होती है। बुद्ध न स्वय राजाढ म अभिनय म भाग लिया था।[2]कुवलय नामक नत्तकी के दुराचरण क कारण बुद्ध ने उसे वद्ध बना दिया था।[3] विनय पिटक के चुल्लवुग्ग म यह कथा मिलती है कि अश्वजित और पुनवसु नामक भिक्षुआ ने कीटागिरि की अभिनयशाला मे अभियन दखा और तदुपरान्त व नत्तकी स वार्ते करन लग। इस पर महास्थविर न उह विहार से निर्वासित कर दिया।[4] इसी प्रकार जैन धम भी नाटको के अभिनय का साक्षी है।

जैन धर्म और नाटक

जनिया के शत्रपसणीय ग्र थ म ज्ञात हाता है कि अमलकप्पा नगरी म महावीरजी सूर्याभिदेव के अभिनय का दख कर अति प्रसन्न हुय।[5] महावीर स्वामी के लगभग सवा दो सा वष पश्चात् भद्रबाहु स्वामी हुय उनके कल्पसूत्र म एक जडवत्ति साधु कथा प्राप्त हाती है। स्वामीजी का कथन है कि जब एक जड वत्ति साधु को नटो का अभिनय देखन का निषेध किया गया तो वह नटिया का अभिनय दखने लगा।[6]

निष्कर्ष

अतएव यह स्पष्ट है कि नाटका के तत्व वदा म भी प्राप्त हात हैं। वदिक कमकाण्डा म अभिनय सवाद व सगीत का स्थान प्राप्त था। वदिक ऋषिया के सस्वर सकेता सहित पाठ व पात्रो की भूमिका म सशस्त्र अवतीर्ण हाने म पूव प्रचलित अथवा तत्कालीन नाट्याभिनय की छाया भी हो सकती है। वेदोत्तर काल मे य तत्व विकसित हुय। रामायण, महाभारत अष्टाध्यायी महाभाष्य, विनय पिटक शत्रपसेणीय सुत इत्यादि ग्र थ नाटका के अस्तित्व क साक्षी हैं। अत भारतीय नाटक भारत भूमि पर अति प्राचीन काल स अभिनीत होत आय हैं। यहाँ के पुरातन नाटका व नाट्यशालाआ पर यूनानी प्रभाव को सिद्ध करन के प्रयास असफल हो चुके हैं। विदेशिया ने भी[7] भारतीय नाट्य परम्परा

---

1 Ava tem calakas Sanskrit Drama by A B Keith II Chapter 3rd Part P 36 to 57
2 Ibid
3 Ibid
3 हिन्दी नाटक उद्भव और विकास ले डा दशरथ ओझा, प्र० स० पृ० ३१, ३२
5 यही।
6 रूपक रहस्य चतुर्थ सस्करण, पृ० १२।
7 कीथ सस्कृत ड्रामा पृ० ४५।

को ईसा पूर्व द्वितीय शताब्दी से अर्वाचीन नहीं माना है और संस्कृत नाटकों को भारत की अपनी वस्तु कहा है।[1] डा० कीथ ने संस्कृत नाटकों की परम्परा का विवेचन करते हुये लिखा है

इससे यह निष्कर्ष निकला कि यदि संस्कृत नाटक ईसा पूर्व द्वितीय शताब्दी से प्राचीन नहीं तो, उससे अधिक अर्वाचीन भी नहीं और इनकी प्रेरणा महाकाव्यों के गायन तथा कृष्ण जीवन की उन नाटकीय घटनाओं से प्राप्त हुयी जिनमें बालक कृष्ण अपने शत्रुओं से संघर्ष करके विजय प्राप्त करता है।[2] [3]किन्तु जब नाट्याभिनय के संकेत रामायण में तथा नट सूत्रों के उल्लेख अष्टाध्यायी में पाये जाते हैं तो संस्कृत नाट्य परम्परा को ई० पू० ५ वीं शती के बाद की सिद्ध नहीं किया जा सकता। डा० कीथ के उपर्युक्त मत में वस्तु सम्बन्धी त्रुटियाँ भी पायी जाती हैं। यथा भास के प्रतिज्ञायौगन्धरायण स्वप्नवासदत्ता अश्वघोष के शारिपुत्रप्रकरण और शूद्रक के मृच्छकटिका आदि प्राचीन नाटकों के कथा व्यापार न तो महाकाव्यों से चुने गये हैं और न वे कृष्ण के जीवन से ही सबंधित हैं। यदि हम संस्कृत नाटकों को महाकाव्यों व कृष्ण जीवन की घटनाओं से ही सम्बंधित मानते हैं तो हम उनके मूल्य की अवहेलना करते हैं। संस्कृत के नाटककार अपनी निजी वस्तु भी हमें प्रदान करते हैं।[4] संस्कृत नाट्य साहित्य की समृद्ध धारा हमारे मत का समर्थन करता है।

संस्कृत नाट्य साहित्य

पाश्चात्य विद्वानों ने अश्वघोष[5] को संस्कृत के प्रथम नाटककार के रूप में

---

1 होरेस एच, विलसन, डा० वाइ प्रभृति के सिद्धान्तों का उल्लेख पहले किया जा चुका है।

2 The balance of probability therefore is that Sanskrit Dramas came into being shortly after if not before the middle of the 2nd B C, and that it was evoked by the combination of epia recitations with the dramatic movement of the Krishna legenc in which a young God strives against and over comes enemies —Sanskrit Drama-Keith p 45

3 डा० दशरथ ओझा "हिं० ना० उद्भव और विकास" पृ० ३२।

4 We would be paying but a poor compliment to our drama tists × × we merely treated them as perveyours of the epic or traditional stories with some embellihments They had to give something their own x x x Preface of the Drama in Sanskrit literature by R V Jagirdar Year of publication 1947

5 I Cent B C-Royal Asaitic Society of Bengal Monograph series Vol I P 1 to 20-1946

उल्लेख किया है[1] किन्तु प्राच्य[2] [3]विद्वान उससे असहमत है। स्वर्णाक्षी के पुत्र अश्वघोष के शारिपुत्र प्रकरण नामक रूपक के कुछ भाग को प्रो० लूडस ने प्रकाशित करवाया।[4] यह ग्रन्थ दो बिना नाम के रूपकों के साथ भोजपत्र पर लिखा हुआ मिला।[5] डा० कीथ तीनों को अश्वघोष कृत मानने का अनुमान लगाते हैं। प्रो० लेवी के अनुसार अश्वघोष एक अन्य प्रीतात्मक नाटक का भी रचयिता था।[6] जानस्टन ने इन्हें केवल प्रतीकात्मक नाटक शारिपुत्र प्रकरण का ही रचयिता माना है। प्रो० लूडस द्वारा प्रकाशित नाटक का पूरा नाम शारद्वतीपुत्र प्रकरण है। यह प्रकरण नौ अंकों में विभाजित है। इसमें बुद्ध के शिष्य शारिपुत्र के बौद्ध बनने का चित्र अंकित किया गया है। विदूषक मौद्गल्यायन नायक शारिपुत्र से कहता है कि बुद्ध से जो कि जाति से क्षत्रिय हैं शिक्षा ग्रहण करना अनुचित है। इस पर उसे उत्तर मिलता है जिस प्रकार औषधि अपने से नीच व्यक्ति से ले लेने में पाप नहीं है वैसे ही बुद्ध के उपदेशों को ग्रहण करने में भी कोई अपराध नहीं है। वह बुद्ध का शिष्य बन जाता है।

इसकी निम्नांकित विशेषताएं उल्लेखनीय हैं —

(१) प्रकरण में बुद्धि, धृति, कीर्ति यश आदि का वार्तालाप होता है। इसमें भावनाओं का मानवीकरण किया गया है। पात्रों के रूप में मानवीय भावनाओं को स्थान मिला।

(२) ऊंच नीच के भेद भाव को मिटा कर बौद्ध धर्म के प्रचार का प्रयास किया गया है। कथावस्तु न तो महाकाव्यों से ली गयी है और न कृष्ण के जीवन से ही।

(३) भरतवाक्य का पाठ नायक द्वारा न करवा कर बुद्ध द्वारा कराया गया है।

---

1 Sanskrit Drama P 80-90

2 सं० साहित्य की रूपरेखा ले० च० शे० पांडेय और डा० शान्तिकुमार नानूराम व्यास प्रथम संस्करण।

3 राजबली पांडेय का मत है कि संस्कृत में बौद्ध ग्रन्थ बाद में लिखे गये पहले वे पालि एवं प्राकृत में लिखे गये। अतएव अश्वघोष के नाटक जो संस्कृत में हैं कालिदास के बाद की रचनायें हैं।

4 Royal Asiatic Society of Bengal Monograph series Vol I P 1 to 15 Published in 1946

5 Sanskrit Drama P 79 to 90

6 R A S B Monograph series Vol I P 15 to 25

(४) इसका नो अको में विभाजन शास्त्रसम्मत है और इसमें प्रकरण के नियमों का पालन किया गया है।[1]

(५) विदूषक को स्थान मिला है और उसका नामकरण नाट्यशास्त्र के अनुकूल ही है।

भास के नाटक

अश्वघोष के नाटकों के समान ही भास के[2] नाटकों की भी प्रमाणिकता के बारे में मतभेद है।[3] उनके नाटकों का उद्धार टी गणपति शास्त्री ने अनन्त शयनग्र थावली में किया। उन्होंने तेरह नाटकों को भास लिखित बताया। प्रतिमा नाटक प्रतिज्ञायौगन्धरायण, पचरात्र, मध्यमव्यायोग स्वप्नवासदत्ता दरिद्रचारुदत्त अभिषेक नाटक, दूत वाक्य, कर्णभार, उरूभग अविमारक, बाल चरित व दूत घटोत्च।

इनकी प्रमाणिकता के बारे में मतभेद होते हुये भी इतना तो सब सम्मत है कि "स्वप्नवासवदत्त की मूलरूप में भास ने रचना की। इसके बारे में संस्कृत में एक किंवदंती प्रचलित है कि —

'भास नाटक चक्रे, पिच्छक्ष क्षिप्ते परीक्षितुम्।
स्वप्न वासवदत्तस्य दाहं का भून्न पावक ।'

उपर्युक्त किंवदंती से ज्ञात होता है कि भास स्वप्नवासदत्ता के

---

1 x x He had abundunt precedent to guide him is clear from the classical form already assumed by his dramas x x x Sanskrit Drama P 79 to 90

2 वी वरदाचार्य ने अपने संस्कृत साहित्य मे, इनका समय ई० पू० ३०० वर्ष सिद्ध किया है। उन्होंने इनके यज्ञफल नामक चौदहवें नाटक का भी उल्लेख किया है।

3 At first it was accepted that all the thirteen plays were written by Bhasa Later on doubts were expressed Those special features are also found in other South Indian Mss plays as late as the 17th Cent The verses ascribed to Bhasa by authologies do not occur in the Trivendrum plays Trivendrum plays Vol I Edited in 1930 by Woolner and Swraup

अतिरिक्त अन्य नाटकों की भी रचना की जो अग्नि म चल गये।[1], [2], [3], [4] भास के नाटकों म निम्नांकित विशेषताये पायी जाती हैं —

भास के नाटकों की विशेषताये

(१) नाट्यशास्त्रीय नियमों का पूर्ण रूपेण पालन नही किया गया है यथा भास ने स्थापक को स्थान न दे कर लिखा है —

'नान्द्यन्ते तत प्रविशति सूत्रधार'। इन्होने युद्ध व जादू के प्रदर्शन भी किये हैं, जो शास्त्रीय दृष्टि से वर्जित माने जाते हैं।[4] इसी प्रकार से सस्कृत नाट्यशास्त्र के अनुसार तो नायक का हर अक म रहना अनिवार्य होता है पर भास के प्रतिज्ञायौगन्धरायण म नायक नायिका के कही दर्शन तक नही होते है।

नाटककार ने प्रस्थापना को स्थापना कहा है। उसम प्रचलित परिपटी के प्रतिकूल रचयिता एव नाटक के नाम नही बताये गये हैं। मुद्रालकार द्वारा प्रारम्भ म प्रमुख पात्रो के नाम लिख देना भास की अपनी विशेषता है जो काव्य प्रतिभा और परिश्रम पर आधारित। जैसे

---

1 प्रो० बलदेव उपाध्याय ने अपने स साहित्य के इतिहास चतुर्थ सस्करण पृ० ४३४ पर लिखा है कि बाण, वामन, भामह और अभिनवगुप्त आदि ने भास की कई रचनाओ का उल्लेख किया है। उपाध्यायजी ने उनकी प्रमाणिकता पर विचार करके अन्त मे पृ० ४४० पर उन्हें भास कृत माना है।

2 विद्वानों का मत है कि किंवदन्ती मे कही गयी अग्नि वास्तविक वह नि न होकर आलोचना की अग्नि थी। अग्रेज कवि कीटस को भी आलोचना की अग्नि मे जलना पड़ा था। "ब्लकवुड मेगजीन "और "क्वाटरली रिव्यू" ने उनकी कटु आलोचना की और कीटस की अकाल मृत्यु मे पत्रिकाओं ने सहयोग दिया। लेखक।

3 "सूत्रधार कृतरम्भैर्नाटिकै बहु भूमिकै
सपताकैर्यशो लेभे भासो देवकुलैरिव" हर्ष चरित-लेखक बाण।

4 In technique Bhasa does not accord entirely with the later rules of the theorists The Natya Shastra it is true when it forbids the exhibition of battle scenes contradicts itself and Bhasa freely permits them x x x Free use is made of magic weapon Sanskrit Drama Part III (4) P 106 to 126

5 स० सा० का इतिहास मूल ले की वरदाचार्य, अनुवादक डा क वे द्विवेदी। देखिये भास के नाटकों का विवेचन।

"सीता भव पातु सुमन्त्रतुष्ट सुग्रीव राम सहलक्ष्मणश्च ।
यो रावणार्य प्रतिमश्च लक्ष्म्या विभीषणात्मा भरतोनुसर्गम ॥[1]

विष्कम्भक में तीन से अधिक पात्र भाग लेते हैं और भरतवाक्य का पाठ नायक के अतिरिक्त अन्य व्यक्ति भी करते हैं—मध्यम व्यायोग और दूत घटोत्कच में प्रचलित प्रणाली के अनुसार भरतवाक्य प्राप्त नहीं होते हैं।[2] [3]

(२) भास कथानक को क्षिप्रगति से संचालित करते हैं और वे घटनाओं को बार बार दोहराते है। मध्यमव्यायोग पंचरात्र दूत घटोत्कच आदि उदाहरण स्वरूप लिये जा सकते हैं।[4] घटनाओं की ही नहीं शब्दों की भी पुनरावृत्ति हुई है।[5]

---

1 सीता के मगल मोद के हेतु, अच्छी मन्त्रणा से प्रसन्नचित्त रहनेवाले जात का भरण करनेवाले, शोभाशाली कण्ठवाले लक्ष्मणसहित मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम जिन्होंने सीता के कारण रावण सहार किया था और जो अनुपम वीर तथा शत्रुओ के लिये सदा भयकारी थे जन्म जन्म मे तुम्हारी (अथवा हमारी) रक्षा करें। प्रतिमा, नाटक स० हि० टीका द्वयोपेतम् टीकाकार प० परमेश्वर नन्द शास्त्री तथा भाषानुवादक प० विजयानन्द शास्त्री द्वि० स० सवत् १९९६।

2 ना० शा० अनुवादक डा० घोष, इन्ट्रोडक्शन पृ ६४ प्रथम सस्करण।

3 इसके लिये विद्वानो का कथन है कि उस समय तक या तो भारतीय नाट्यशास्त्र (भारत के नाट्यशास्त्र) का प्रणयन ही नहीं हुआ था और यदि हो भी चुका था तो उसके नियमो का प्रचलन अधिक नहीं था। (क) अन्य विद्वान इससे असहमत हैं और वे कहते हैं कि नियमोल्लघन तो विचार स्वातन्त्र्य के कारण हुआ है। यह भी माना जाता है कि (ग) भास ने किसी पूर्व प्रचलित नाट्य शास्त्र का अनुसरण किया अथवा उन्होने स्वय किसी नाट्य शास्त्र का प्रणयन किया (जो आज अप्राप्य है) और उसी का उन्होंने अपने नाटकों में पालन किया। चाहे जो कुछ भी हो भरत के नाट्यशास्त्र का अन्धानुकरण उनके नाटकों मे नहीं मिलता है।

(क) सस्कृत साहित्य का इतिहास पृ० ४३७ ले प्रो ब दे उपाध्याय, चतुर्थ सस्करण

(ख) डा० म० मो० घोष ना० शा० का अनुवाद, भूमिका।

(ग) वही

4 शेक्सपीयर के नाटकों मे भी घटनाओ को दोहराया गया है।

5 प्रतिमा नाटक मे राम का लक्ष्मण से कहना कि किवाडों के समान वक्षस्थल की कलाओ आदि छद दो बार प्रयुक्त हुआ।

(३) वे वस्तु प्रतिपादन म पद्य के साथ गद्य का प्रयोग करते हैं, जिसका उपयोग परवर्ती नाटककारो ने नही किया है ।[1]

(४) इन्होने रामायण, महाभारत और लोक प्रचलित कथाओ से वस्तु का चुनाव किया है और उन कथाओ म यथास्थान अपनी कल्पना का भी सुदर पुट दिया है। प्रतिनायोग घरायण लोक प्रचलित उदयन की कथा पर आधारित है तो दरिद्र चारुदत्त मे चारुदत्त जसे पात्रो की अवतारणा कवि की मौलिक देन है। इस नाटक मे वेश्या तथा बद भाषा को भी स्थान मिला है। पचरात्र, मध्यमव्यायोग, दूत घटोत्कच करणाभरण और उरूभग आदि महा भरत पर आधारित हैं तो प्रतिमा नाटक मे कैकयी तो केवल श्रवण कुमार के पिता के शाप को पूरा करने के लिय ही राम के वनवास की आकाक्षा करती है। वह तो चौदह दिन का वनवास माग रही थी परन्तु उसकी जिव्हा फिसल जाती है और चौदह वष कह देती है।[2] उसी प्रकार बनवास की सूचना से पूव राम का स्वय वल्कल धारण करना, नाटकीय व्यग्य का सफल उदाहरण है।

(५) भास की उक्तियाँ कालिदास के नाटकों मे भी पायी जाती है। जैसे, पचरात्र मे द्रोणाचाय कहते हैं कि शिष्य की त्रुटि अध्यापक के ऊपर आती है।[3]

(६) भास की भाषा म अपाणिनीय व आप प्रयोग मिलते मे। इन्होंने पद्य के बीच सीमित व लघु किन्तु सुदर और आकषक गद्य को स्थान दिया है जो सुखद और श्लाघ्य है।

(७) नाटको मे नृत्य की योजना द्वारा चार चाद लगा दिये गये हैं। बाल-चरित् क तृतीय अक म नृत्य इसका उदाहरण है जिसम ग्वाले भाग लेते हैं। अभिषेक नाटक म गधर्वों और अप्सराओ के नृत्य व सगीत की लहरें विद्यमान हैं।

---

1 कीथ—'भास'

2 प्रतिमा नाटक छठा अक इसे अग्रेजी का 'विस मेजर' कह सकते हैं।

3 A pupil s fault comes home to the teacher Passing by kin and ignoring friends —Drona मालविकाग्नि मित्र, अ० अंक नां० चा० ग० दा०

मृच्छकटिका और शूद्रक

भास के नाटकों के पश्चात् उल्लेखनीय नाटक है मृच्छकटिका इसका लेखक शूद्रक माना जाता है। विद्वानों ने उस पौराणिक पुरुष कह कर उसकी सत्ता को अस्वीकार किया है।[1] श्री चन्द्रवली पाडेय ने शूद्रक (राजा तथा कवि) नामक पुस्तक में यह सिद्ध किया है वह एक ऐतिहासिक पुरुष था पौराणिक नहीं। वे कहते हैं कि राजा शूद्रक की प्रेरणा से ही राज्याश्रित कवि भास ने चारुदत्त नाटक की रचना को प्रारम्भ किया। दुर्भाग्यवश भास बीच में ही चल बसा। तब राजा ने स्वयं उसे पूरा किया और नाम दिया मृच्छकटिका। अतएव मृच्छकटिका चारुदत्त का परवर्द्धित संस्करण है। नाट्यशास्त्र के अनुसार इस रूपक का एक भेद सकीर्ण प्रकरण कहते हैं। इसमें लुच्चा लफंगा इत्यादि का खुलकर वर्णन किया गया है।

नाम करण

उक्त नाटक का नामकरण नायक या नायिका के आधार पर न होकर एक मिट्टी की गाड़ी के आधार पर किया गया है।[2] इसमें अंकों के नाम दिये गये हैं। जैसे प्रथम अंक को अलंकारन्यास, द्वितीय अंक को द्यूतकरसंवादक तृतीय को सविच्छेद और चतुर्थ को मदनिकाशर्विलक आदि कहा गया है।

चरित्र चित्रण

जिस प्रकार नाम करण में नवीनता के दर्शन होते हैं उसी प्रकार से पात्रों के चित्रण में कलाकार की महानता दिखायी देती है। इसके पात्र एक देशीय न होकर सम्पूर्ण विश्व के मानव हैं। ये संस्कृत नाटकों के अधिकांश पात्रों के समान क्षेत्र

---

1 King Shudraka whom tradition credits with the authorship of the famous play Mrichha Katika has remained so far like king Vikramaditya a merelegendry figure —The Age of Imperial unity शूद्रक, ले० चन्द्रवली पांडय के ग्रन्थ से ये उद्धृत एव डा० कीथ का संस्कृत साहित्य का इतिहास पृ० १२८ से १३१।

2 The naming of the play in defiance of convention from a Minor incident may justly be ascribed to author himself S D P 140

3 Haward Oriental Series Vol IX the clay cart Ryder Introduction

राइडर महोदय का कथन है कि कालिदास और भवभूति के पात्र तो स्वदेशी (नेटिव) हैं, परन्तु शूद्रक की मच्छकटिका के पात्र विश्व के नागरिक हैं। डा० कीथ इस गुण का श्रेय शूद्रक को न देकर भास को देते हैं। आलोच्य नाटक विदेशों में भी अभिनीत हुआ है।

वस्तु ही मान बठते हैं[1] और नाटककार कह देता है कि धनाभाव ही सभी दुगुणो का मूल है।[2] इस प्रकार से इन नाटक मे यथाथ चित्रण को प्रमुखता मिली है।

छन्द

नाटककार का प्रिय छन्द श्लोक प्रतीत होता है। उसने विद्युन्माला का भी प्रयोग किया है जो किसी ग्रय श्रेण्य (क्लासिकल) रूपक म प्राप्त नही होता है।[3]

निष्कर्ष

ग्रतएव हम देखत है कि इस नाटक म नियमो का ग्रक्षरश पालन नही हुग्रा है। वहा तो नामकरण, वस्तु प्रतिपादन, पात्रो के चरित्रचित्रण सलाप ग्रौर भाषा शली मे यथाथ चित्रण को प्रमुखता दी गयी है। यह नाटक सस्कृत साहित्य मे ग्रपना ग्रद्वितीय स्थान रखता है।

मृच्छकटिका के बाद पूव कालिदास युग तक के नाटककारो मे सौमिल्ल व कविपुत्रादि तो नाम मात्र ही रह गये हैं।[4] राजशेखर ने सौमिल्ल ग्रौर रामिल्ल को शूद्रक कथा के सह लेखक माने है, ग्रौर डॉ॰ कीथ ने शुभासितावली के ग्राधार पर कविपुत्रा के ग्रस्तित्व की ग्रोर भी सकेत किया है।[5] किन्तु ग्राज इन नाट्यकारो की कोई प्रामाणिक कृतिया प्राप्त नही होती हैं। ग्रतएव जबतक खोज द्वारा उनकी कृतिया प्रकाश म नही ग्रा जाती हैं, उन पर ग्रधिकार पूवक कुछ भी कह सकना सभव नही है।

---

1 A candle shining the deepest dark
In happiness that follows sorrow s strief
But after bliss when man bears sorrows mark
His body lives a very death in life H O S Vol IX
Remember, you are common as the flower
That grows beside the road
You are the pool the flowering plant the boat
(Courtier—Ibid)

2 The lack of money is the root of all evil Ibid

3 सस्कृत ड्रामा—कीथ पृ० १४२

4 कालिदास मालविकाग्निमित्र—प्रस्तावना

5 सस्कृत ड्रामा—कीथ पृ० १२७-१२८

कालिदास

कालिदास[1] ने ब्राह्मण धम और सस्कृति के सु दर स्वरूप को प्रस्तुत किया है। इ हान विक्रमोवशी, मालविकाग्निमित्र और अभिज्ञान शाकु तलम् नामक तीन नाटको की रचना की। अभिज्ञान शाकुन्तलम् उनका सवश्रेष्ठ नाटक है जो सस्कृत साहित्य मे ही बेजोड नही है अपितु विश्व साहित्य मे भी अ यतम नाटको म से एक माना जाता है।[2]

इसमे उ होने महाभारत से प्राप्त की हुई वस्तु का सु दर रूप देकर उसमे मानवीय भावो का समावेश किया है। महाभारत मे जहा शकु तला दुष्य त से पुत्र प्राप्ति हेतु विवाह करती है वही नाटक म कालिदास ने उनके विवाह का कारण उभय पक्षीय प्रणय दिखाया है जिसमे निश्छल प्रेम के दशन होते हैं। यह विवाह अधिक आकपक दिखायी देता है। इसम स्वाथ की गध भी नही है। इसी प्रकार स दुष्यन्त द्वारा शकु तला के विस्मरण का कारण भी उसकी कामुकता या विलासिता न होकर ऋषि का शाप है। कवि की यह सूझ उसकी मौलिक उद्भावना है। अभिज्ञान शाकु तलम् मे अगूठी वाली कथा भी कवि की अपनी वस्तु है। भाव, भापा चरित्र चित्रण रसनिष्पत्ति आदि की दृष्टि से यह नाटक प्रौढ और प्राञ्जल समझा जाता है।

---

1 डॉ० कीय ने इ हें च द्रगुप्त द्वितीय का दरबारी कवि माना है। सस्कृत साहित्य का इतिहास पृ० १४३, १४७ वि० स्मिथ ने कहा है कि उनकी प्रारम्भिक रचनायें सन ४१३ ई० से पुव लिखी गयीं और कुमार गुप्त के समय मे भी उनका रचनाक्रम विद्यमान रहा। स्मिथ महोदय का कथन है कि कालिदास ने सभवत स्क दगुप्त के काल मे भी काव्य कृतियों का निर्माण किया। मालविकाग्निमित्र अनुवादक देवघर और सूर, भूमिका, सस्करण सन १९३७

2 जमन कवि गेटे के भाव हैं

यास न कुसम फलच युग पव प्रौष्मस्यसव चयत्
यच्चा म नसो रसायनयत स तपरा मोहनम्
एको मूत मूतपूव थवा सवलोक मूलोकयो
रेश्वय यदिवांछसि प्रियसखे। शाकु तल से व्यताम्।

गेटे की समालोचना अनुसरण कर मैं फिर भी यही कहता हू कि शकु तला के प्रारम्भ के तरुण सौंदय ने मगलमय परिणति से सफलता प्राप्त कर मत्य को स्वग के साथ सम्मिलित कर दिया है। (रवि द्रनाथ टगोर)
वि० जो सन ने कालिदास को भारत का शेक्सपीयर कहा है।

(२) **मनोभावो का सजीव चित्रण** शास्त्रानुकूल रहते हुए भी करुणा विषाद आदि का सुखद चित्रण प्रस्तुत किया है। शकुन्तला के कण्व के वहा से प्रस्थान करते समय कण्व अत्यन्त दुखी होते हैं

यास्यत्यद्य शकुन्तलेति हृदय ससृष्टमुत्कण्ठया
कण्ठ स्तम्भित वाष्पवृत्ति कलुषश्चिन्ता जड दर्शनम् ।
अधर किसलय राग कोमलविटपानुकारिणौ बाहू ।
कुसुम मिव लोभनीय यौवनमगेषु सनद्धम् ।

एव

पातु न प्रथम व्यवस्यति जल युष्मास्वपीतेषु या
नादत्ते प्रिय मण्डनापि भवता स्नेहेन या पल्लवम् ।

× × × ×

से य याति शकुन्तला पतिगृह सर्वै रनुज्ञायताम् । ४/१

अर्थात् हे वन शकुन्तला पहिले तुम्हे जल पिलाय बिना स्वय जल न पीती थी न वह पल्लवो के गहने पहनने की शौकीन होने पर जो प्रेम के मारे तुम्हारे पल्लवो को नहीं तोडती थी।[1] वही शकुन्तला आज पतिगृह को जा रही है तुम सब अनुमति दो।

मनुष्य तथा प्रकृति दोनो का मजुल सपर्क तथा अद्भुत एक रसता दिखाकर कवि ने प्रकृति के भीतर स्फुरित होने वाले हृदय को पहिचाना है।[2]

(३) भिन्नता म अभिन्नता का समावेश। त्याग प्रधान तपोवन म पली सभ्यता ही समाज सस्कार का बीज उठा सकती है।

(४) पुरातन कथाओ की सुन्दरतम नाटकीय रूप दिया यथा विक्रमोर्वशीय म वैदिक प्रमाख्यान ऋग्वेद (१०/९५) का जिसका शुद्ध विकसित रूप शतपथ ब्राह्मण (११/५/१) म प्राप्त होता है उसे प्रस्तुत किया है। शकुन्तला महाभारत से ली गयी है और वह मालविकाग्नि मित्र के प्रणयकीमी कथा को प्रकट करता है।

(५) औचित्य का पूरा ध्यान रखा है—वे अश्लील नही बने है। उनमे वर्ण्य विषय व वर्णन म अनुत सामञ्जस्य स्थापित करने की अद्भुत क्षमता है।

कालिदास ने नियमवत् प्राकृत भाषाओं का भी उपयोग किया है। गद्य के लिये शौरसनी और पद्य के लिये महाराष्ट्री का प्रयोग मे लिया है। भाषा-सौष्ठव के अतिरिक्त उनके नाटकों का भाव सौन्दर्य उल्लेखनीय है। उदाहरणार्थ कालिदास के

1 श्री बलदेव उपाध्याय स० ना० सा० का इतिहास, पृ० १६३ चतुर्थ संस्करण।
2 वही पृ० १६४

नाटकों में स्त्री सौंदय और पुरुष शौय सुदर रूप से पाए जाते हैं। अधिकाशत उन्होंने नारी सौंदय का ही वणन किया है। यथा —

नारी सौंदर्य चित्रण

मालविकाग्निमित्र के दूसरे अक में रगशाला का चित्रण करते हुए कवि ने वहा राजा विदूषक धारिणी और परिव्राजिका को चित्रित किया है। वही मालविका प्रवेश करती है। राजा को वह उसके चित्र से भी अधिक सुदर दिखायी देती है। वह कहता है —

"इसके नयन विशाल हैं, मुख की काति शरच्चन्द्र के समान है भुज स्कन्द के पास किंचित झुके हुये दिखायी देते हैं अशिथिल और उन्नत स्तनो से वक्ष स्थल भरा हुआ है बगलें दबी हुई हैं कमर केवल वित्ताभार है, नितम्ब भाग मोटा और परो की अगुलिया कुछ टेढी सी है, (साराश) नृत्याचाय के पसन्द के अनुसार ही ही इसका शरीर सुघड बना है।"[1] राजा उसे देखकर अति प्रसन्न होता है और कहता है कि इस विशाल नेत्रो का मन्दस्मित करता हुआ मुख थोडे से दिखाई देने वाले दशनो से ऐसा सुशोभित हो रहा है जसा कि वह अधखिला कमल जिसकी केशर पूरी न दिखायी देती हो।[2] इसी प्रकार से विक्रमोवशीय मे राजा पुरूरवा उवशी की सुन्दरता का वणन हैं। उसके निर्माणकर्ता की भूरी भूरी प्रशसा करता है।[3] अभिज्ञान शाकुन्तल म शकुन्तला की रूप छबि दशनीय ह।

शकुन्तला वल्कल धारण किये हुये है। कधे पर सूक्ष्म गाठ लगाकर वह वल्कल पहना गया है। उस वल्कल ने दाना स्तनो के मडलो को ढक रखा है। इस कारण शकुन्तला का अभिनव शरीर उसी तरह अपनी शोभा को नही प्रकट करता जस पके हुय पीले पत्ता के बीच मे रखा हुआ फल।[4] प्रथम अक मे कही शकुन्तला को चन्द्र के समान सुन्दर बनाया गया है तो कही उसके निर्माणकर्ता विधाता की सराहना की गयी है। कही उसे निर्दोष पुष्प कहा गया है तो कही उसकी रति वशीभूत देह की काति को चित्रित किया गया है।

---

1 वासुदेव विष्णु मिराशी कालिदास पृ० १५१, द्वितीय परिवर्द्धित एव सशोधित सस्करण, प्रकाशन सन १९५६
2 कालिदास, पृ० १५२
3 विक्रमोवशीय १–९
4 कालिदास और भवभूति, मूललेखक द्विजेन्द्रलाल राय, अनुवादक पडित रूपनारायण पांडेय द्वितीय सस्करण सन् १९५६, पृ० १०२

पुरुष–शौर्य–चित्रण

कालिदास न अधिकाशत नारी-सौन्य वगन प्रस्तुत किया है। पुरुष सौंदय वरान बहुत ही कम किया है।[1] फिर भी, उसकी पूर्णरूपेण अवहेलना नही की गई है। अभिज्ञान शाकुन्तल के द्वितीय अक द्वारा किया गया दुष्यन्त का वरान इसकी पुष्टि करता है।[2]

प्राकृति और मानव सौंदय

स्त्री पुरुष के सौन्य को ही नहा कालिदाम ने तो प्रकृति को भी मानवीय गुणा म सम्पन पाया है। उमकी कमनीयता मोहक है। उन्हाने सध्या, रात्रि प्रात वन, उपवन आदि का सजीव चित्रण किया है। उन्य होत हुये चन्द्रमा को देख कर राजा पुरूवा का कथन है —

उन्य पवत की आड म छिपे हुय चन्द्र की किरणा ने अन्धकार दूर किया है माना बाल गू थे जान के कारण पूव दिशा का मुख हमार नेत्रा को आनन्ददायक हो गया है।[3,4]

उपमाएँ

उपयु क्त रम्य विवरणा क साथ कालिदास कृत उपमाओ का सौदय प्रथम ही दृष्टि म आ जाने वाली विशेपता है।[5] ये अत्यन्त स्वाभाविक और चित्ताकपक है। उनकी यथायता विविधता और स्पष्टता और स्पृहणीय है। उन्हाने व्याकरण दशन राजनीति वद्यक एव प्रभृति अनकानेक शास्त्रा से सुन्दर उपमायें ली है जिनकी व्याव हारिक्ता और जिनका औचित्य स्तुत्य है।

हास्य विनोद

कालिदास की एक अन्य महत्त्वपूर्ण विशेपता है उनका विनोद। विनोद के स्वभावनिष्ठ प्रसग निष्ठ और शब्दनिष्ठ आदि तीन भेन्द किय जाते हैं। ये तीना ही

---

1 कालिदास और भवभूति पृ० ११३

2 राजा दुष्यन्त करारी धूप को सहते हुये लगातार धनुष की डोरी खींचकर × × × × क्रूर कम कर रहे हैं। करारी धूप मे भागने पर भी उनके शरीर मे पसीने की बूदे नहीं निक्ली हैं। इन सब कारणों से उनका शरीर क्षीण होने पर भी अत्यन्त विस्तृत, अर्थात् लम्बा चौडा, होन के कारण क्षीण नहीं प्रतीत होता है उसकी कृशता अलक्ष्य है। वे पवत पर विचरने वाले हाथी की तरह × × × × बलिष्ठ जान पडते हैं। कालिदास और भवभूति पृ० ३१

3 4 5 वही पृ० १६७ और २२८

इनके ग्रंथो मे पाये जाते है। विदूषक उनके नाटको म अवश्य ही पाया जाता है। मालविकाग्निमित्र मे गौतम, विक्रमोवशी म माणवक और शकुतला म माढव्य। तीनो ही पेटू ब्राह्मण है। इन्हे देखकर ही हसी आ जाती है और उनकी बातें हास्य रस की सृष्टि करती हैं। साथ ही वे नायक के अन्तरग मित्र भी हैं जिनके द्वारा कभी नायक नायिका के कोप से बच जाता है[1] कभी नायक के भाव सामाजिकों को विदित हो जाते है।[2]

नायक के मित्र विदूषक के समान नायिका की सखिया भी विनोद प्रिय हैं यथा मालविका की सखी बकुलावलिका उवशी के साथ रहनेवाली चित्रलेखा और शकुन्तला की स्नेहमयी विनोदिनी सहेली प्रियवदा के सवाद श्लिष्ट हास्य के उदाहरण है। इसी प्रकार से इन्होंने प्रसग निष्ठ विनोद भी प्रस्तुत किया है। मालविकाग्निमित्र के नाट्यचार्यों का कलह और शकुन्तला म मछुआ के हाव भाव कटाक्ष वाले प्रसग हास्य के कारण बनते हैं। कालिदास के विदूषक के शब्दो मे सहेलियो के मीठे तानो मे और प्रेमियो के हास परिहास म शब्दगत[3] हास्य भी पाया जाता है।

हास्य और शृगार रस

कहने का तात्पय यह कि विदूषक जसे हास्योत्पादक पात्र वार्त्तालाप द्वारा हसी की सरिता बहाने वाली सखिया और हास्य रस की सृष्टि करने वाले सुन्दर स्थल, कालिदास के नाटको की स्तुत्य विशेषता है। उनके नाटको मे शृगार रस की सफल अभिव्यक्ति मिलती है, जिसम हास्य का अद्भुत सयोग रहता है।

कालिदास और नाटक

कालिदास के नाटक बतलाते हैं कि नाटक साफल्य उसके अभिनय म निहित है। मालविकाग्निमित्र म नाट्याभिनय द्वारा ही नाट्याचार्य की परीक्षा ली जाती है। इसी प्रकार से अभिज्ञानशाकुन्तल म सूत्रधार कहता है कि जब तक विद्वानो को नाटक से सतोष न हो जब तक वे अभिनय द्वारा प्रसन्न नही हो जाते तब तक नाट्यकृति सफल नही मानी जा सकती।[4] इसी भाति उन्होने यह भी बताया है कि सभी पुराने नाटककार सब श्रेष्ठ हैं और सभी नये हीन, वाली सम्मति अमान्य है।

---

1 जसा मालविकाग्निमित्र म।

2 जसा अभिज्ञान शाकुन्तल में।

3 कालिदास पृ० २४४।

4 अभिज्ञान शाकुन्तल १।२।

टककार वही सफल नाटककार है जो सभी को आनंद प्रदान कर सके। आचार्य रिदास द्वारा उन्होंने इसे स्पष्ट करवाया है।[1]

अश्लीलत्व

उपर्युक्त गुणों के साथ कालिदास के नाटकों में कहीं कहीं अश्लीलत्व दोष भी पाया जाता है। उनका यह दोष नाटकों में उत्तरोत्तर कम होता गया है। उनकी थम नाट्यकृति मालविकाग्निमित्र में यह खटकने वाली वस्तु है। उदाहरणार्थ शोक की तरह मुझे भी पादप्रहार कर मेरे मनोरथ को पूर्ण करें ऐसी विनती राजा मालविका से करता है। उस समय इरावती एकाएक आगे बढ़कर कहती है इनका मनोरथ पूर्ण करो पूर्ण करो अशोक तो सिर्फ फूल देगा परन्तु ये तुम्हें फूल और फल दोनों देंगे।[2] ऐसी उक्तियां अश्लीलता की परिचायक है जो उनकी नाट्यकृतियों में चन्द्रकलंक सी दीखायी देती है। आनंदवर्द्धन का तो कहना है कि जिन्होंने सहस्रों सुन्दर सूक्तियों से अपने को उज्जवल किया है ऐसे महात्माओं के दोषों का उद्घाटन करना आलोचकों के लिये दोषवाह है।[3] द्विजेन्द्रलाल राय ने उनके नाटकों के कई अंकों व स्थलों को शेक्सपीयर के तथा अन्य नाटककारों के नाटकों से श्रेष्ठतर माना है।[4] सुभाषित[5] बाण, दण्डि राजशेखर, गोवर्धनाचार्य और रवीन्द्रनाथ ठाकुर आदि ने कालिदास की मुक्त कंठ से प्रशंसा की है।[6]

निष्कर्ष

अतएव निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि कालिदास में वस्तु को सुघर बनाने की पात्रों को सुन्दररूप से चित्रित करने की और हृदयस्पर्शी रसधारा प्रवाहित करने की अद्भुत क्षमता विद्यमान थी। उनके नाटकों में शृंगार का सफल प्रवाह आदर्श

---

1 त्रैगुण्योद्भवमत्र लोक चरितं नानारसं दृश्यते।
नाट्यं भिन्नरुचेर्जनस्य बहुधाप्येकं समाराधनम्। मालविकाग्निमित्र, प्रथम अंक।

2 कालिदास पृ० २५

3 वही पृ० २४६

4 मैं शकुन्तला नाटक के इस पंचम अंक को जगत् भर के नाट्यसाहित्य में अद्वितीय अद्भुत अपूर्व और अतुलनीय समझता हूं। ग्रीक नाटकों में ऐसे दृश्य नहीं पढ़ा, फ्रेंच नाटकों में नहीं पढ़ा, जर्मनी नाटकों में ऐसा दृश्य नहीं देखा अंग्रेजी के नाटकों में भी नहीं देखा। कालिदास और भवभूति, द्वितीय संस्करण पृ० ४३।

5 कालिदास स्तुति कुसुमांजलि—कालिदास, पृ० २६१।

6 वही

का निर्वाह भाषा की स्वाभाविकता नाटक योग्य और महानता का सुन्दर निरूपण प्रभृति प्रशंसनीय गुण एक साथ और अधिक मात्रा म प्राप्त होते हैं ।

जिस प्रकार से श्री हर्ष के नाटकों म कालिदास व भवभूति के प्रभाव को माना गया है उसी प्रकार कन्नगाभूति भवभूति के नाटकों का बहुत भाग के नाटकों म तुलनीय है । विशेषकर भागवत स्थल कामकन्दला की तुलना उत्तररामचरित के द्वितीय अंक से की जा सकती है । इन्होंने महावीर चरित मालती माधव व उत्तर रामचरित से संस्कृत साहित्य की अभिवृद्धि की है ।

भवभूति के नाटको की विशेषताय

भवभूति की सबसे बड़ी विशेषता विदूषक का स्थान न रखना है । उत्तर राम चरित म नाटक दिखा कर राम के हृदय के भावो का उद्घाटन किया गया है ।[1] डा० कीथ का मत है कि राम और सीता दुष्यन्त और शकुन्तला से अधिक सजग है ।[2] अतएव इनके चरित्र चित्रण की कुशलता प्रशंसनीय है ।

सप्तम अंक म गर्भाङ्क का स्थान मिला है ।
प्रकृति के उग्र रूप का सुन्दर चित्रण बन पड़ा है ।
निष्कूजस्तिमिता क्वचित् क्वचिदपि प्रचण्डसत्त्वस्वना
स्वेच्छासुप्तगभीरभोग भुजग श्वास प्रदीप्ताग्नय
सीमान प्रदरे दरेषु विरल स्वल्पाम्भसो यास्वय
तृष्यद्भि प्रतिसूर्यकैरजगरस्वेद द्रव पीयते ।[3] (उत्तरा रा च २।१६)
एकोरस करुण एव (३।४७ उत्तर राम०)
की सफल स्थापना की गई है ।

जहा भवभूति ने करुणा की मूर्तिमता प्रदान की है वही विशाखदत्त ने राजनीति का सजीव चित्रण प्रस्तुत किया है ।

---

1 यह हैमलेट मे नाटक दिखाने वाली पद्धति से तुलनीय है ।

2 काथ संस्कृत ड्रामा १६५ ।

3 जगल का कोई भाग बिलकुल शान्त है और कहीं हिंसक जानवरों की प्रचण्ड ध्वनि सुन पड़ती है । कहीं पर स्वेच्छा से सोये हुये विस्तृत फनवाले भुजगो के श्वास से आग पैदा हो रही है । जलने का भय नहीं है छोटी गड्ढियो मे थोड़ा सा पानी झिलमिला रहा है, बिचारे प्यासे गिरगिटो को पानी नहीं मिलता । क्या करें अजगर के पसीने को पी कर अपनी प्यास बुझाते हैं । 5 बलदेव उपाध्याय स० सा० का० इ० पृ० ५१५ ।

विशाखदत्त※

सस्कृति साहित्य म प्रणय प्रधान ग्रौर रसराज युक्त नाटक पर्याप्त सख्या म प्राप्य है परन्तु राजनीति व कूटनीति परिपूर्ण सामाजिक जीवन को चित्रित करनेवाले नाटको की सख्या अगुलिया पर गिनने योग्य है । विशाखदत्त का मुद्राराक्षस इसकी क्षति पूर्ति करता है । वह चाणक्य ग्रौर राक्षस क राजनीतिक घात प्रतिघात का सुन्दर विवेचन करता है । वहा हम महाराष्ट्री, शौरसनी ग्रौर मागधी क भा दशन होते है ।

विशेषताए

(१) इसम नायिका का अभाव है ।

(२) विदूषक का भी स्थान नहा मिला है ।

(३) कौतुहलवधक घटनाग्रो का सुन्दर निदशन कराया गया है ।

(४) इनका अपूर्णनाटक देवी चन्द्रगुप्त भी राजनीति स परिपूर्ण माना जाता है । जिस प्रकार मुद्राराक्षस राजनीति पर ग्राधारित ह उसी प्रकार भट्टनारायण न महाभारत से कथानक लकर वेणी सहार नाटक की रचना की ह ।[1],[2],[3] उनके वेणी सहार म से भी लक्षण ग्रथ कारा न उदाहरण प्रस्तुत किये है । इस नाटक म नियमो का कठोरता पूवक पालन करने की प्रवृत्ति दिखायी देता है ।

हनुमन्नाटक

सस्कृत नाट्य साहित्य म हनुमन्नाटक[4] क लेखक क बारे म एक रोचक कथा प्रचलित है । कहते हैं कि हनुमानजी न अपने ग्राराध्य देव की प्रशसा म एक नाटक लिखा था किन्तु जब उन्ह यह ज्ञात हुग्रा कि वाल्मीकि रामायण का प्रणयन कर रहे हैं तो उन्होने सोचा कि हनुमन्नाटक रामायण की प्रसिद्धि म बाधक होगा । ग्रतएव उन्होने उसे समुद्र म फक दिया । कालान्तर म धारा नगरी क राजा भोज द्वारा उसका उद्धार कराया गया । ग्राज इस नाटक क दो रूप प्राप्त होते हैं पहला

※पाचवी छठी शताब्दी बी० वरदाचाय सस्कृत साहित्य का इतिहास पृ० १५५ ।

1 अठारवीं शताब्दी क (नियो) क्लासिकल अग्रेजी कवि पोप ने रेप ग्राव दी लोक ग्रन्थ काव्य लिखा है । उसका शीर्षक वेणीसहार से तुलनीय है ।

2 रचना काल सन ६५० सस्कृत साहित्य का इतिहास ले० वी वरदाचाय ।

3 भट्टनारायण का समय सातवीं शताब्दी का ग्रन्तिम काल माना जाता है, वही, पृ० १५६ ।

4 इस नाटक क सन ८५० से पूव प्राप्त होने का उल्लेख वी० वरदाचाय ने अपने सस्कृत साहित्य के इतिहास मे पृ० १६३ पर किया है ।

देवविशाल देव, वत्सराज, जयदेव रामचन्द्र जयसिंह सूरि, रविवर्मा वामन भटट, शक्ति भद्र प्रभृति लेखको ने सस्कृत नाट्यसाहित्य की वृद्धि का प्रयास किया था। वास्तव मे यह केवल प्रयास मात्र ही था। इन नाटककारो मे ह्वासकालीन नाट्यधारा के लक्षण दिखायी देने लगे थे। कतिपय ऐसे भी ग्रथ प्राप्त होते है जनकी प्रामाणिकता एव रचनाकाल आदि के बारे मे मतभेद है। यथा वषमजिका नाटिका इसे मधुरादास विरचित माना जाता है।[1] कौतुकसर्वस्व प्रहसन कल्याणसयगधिका, कृष्णाभ्युदय प्रेक्षणक आदि एसी ही रचनाएँ हैं। ये रचनाएँ भी सस्कृत नाट्यसाहित्य को नवीनता प्रदान नहीं कर सकी। दृश्यकाव्य श्रव्यकाव्य की ओर झुकने लगा। अत नाट्यसाहित्य का पतन अवश्यभावी था। क्योकि नाटक नाटक न रह कर पाठ्यसामग्री बन गये और वे पढे लिखो तक ही सीमित हो गये। इधर देशी राजा जो राज्याश्रित लेखक रखते थे गृहयुद्ध ग्रहण ग्रसित हो गये और उनका शौयमार्तण्ड अस्त होने लगा जिससे नाट्यलेखक निराश्रित होने लगे। मुसलमानो के आक्रमण ने सस्कृत नाट्यसाहित्य की इस निर्वाणोन्मुखी प्रकम्पित क्षीण लौ के लिए आधी का सा काय किया। सस्कृत भाषा भी बोल चाल की भाषा से दूर होती गयी। अतएव शासक और जनता दोनो के द्वारा सस्कृत की अवहेलना हुयी, जिससे सस्कृत नाट्यसाहित्य का पतन होने लगा। तत्कालीन नाटककार देशज भाषाओ मे नाट्य रचना करने लगे। इस तथ्य ने आलोच्य नाट्यसाहित्य की अवनति मे अपूर्व सहयोग दिया। यही नही, महाकाव्यो व पुराणो की कथाये जिन पर भास कालिदास भवभूति प्रभृति प्रखर प्रतिभावान् नाट्यकारो ने लेखनी चलायी उसमे मौलिक उद्भावना की अधिक सभावना नही थी। साथ ही लक्षण ग्रथो के बधन जटिल होने लगे और नियमो का पालन कठोरता पूर्वक किया जाने लगा। इस नियम बधन ने भी कलास्वातन्त्र्य को बडा भारी धक्का दिया जो मौलिकता के ह्रास का कारण बना।[2] इससे भी अधिक विचारणीय तथ्य यह है कि जिस चातुर्य से नियमपालन श्री हर्ष और भट्टनारायण ने किया, उससे अधिक चतुराई का परिचय देना कठिन ही था। कालिदास और भवभूति जैसे लेखक आदर्श बन गये अत उनसे आगे बढकर साहित्य उन्नति न कर सका।[3] नटो की हीनावस्था ने इस पतन अग्नि मे इधन का सा काम किया। वे शलूष जिन्हे भरत ने सम्मान प्रदान किया और वत्सराज उदयन और अग्निवर्ण आदि राजाओ ने जिन्हे अपनाया व कालान्तर मे जयाजीवी बनते गये।

---

1 सस्कृत साहित्य का इतिहास ले० वी वरदाचार्य, पृ० १६६

2 जब आलोचना बढती है तब रचना का ह्रास होता है। टी० एस० इलियट, रामधारीसिंह दिनकर द्वारा भारतीय सस्कृति के चार अध्याय, प्रथम सस्करण, पृ० १४७ पर उद्धृत।

3 Ideal is never achieved—Eng proverb

इस प्रकार उपयुक्त कारणों से संस्कृत भाषा तो अमर हो गयी और संस्कृत नाट्य साहित्य में गत्यवरोध उत्पन्न हुआ। इधर अग्रेजों के शासन पर सन् १८१३ में जब संस्कृत फारसी आदि की उन्नति के लिए एक लाख रुपया का व्यय सरकार द्वारा स्वीकृत किया गया तब राजा राममोहन राय और लाला भाई मोराजी आदि स्वदेशी नेताओं ने उसे अंग्रेजी शिक्षा में लगाना उपयुक्त समझा। लार्ड मैकाले को यह उपयुक्त प्रतीत हुआ। इस प्रकार से संस्कृत नाटक साहित्य की उन्नति न हो सकी और उसका ह्रास होने लगा। वस्तुतः आज भी संस्कृत में नाटक लिखे ही जाते हैं यथा श्री चन्द्रशेखर श्री हनुमानसिंह मिहल आदि संस्कृत नाटक लिखते है, किन्तु यह नगण्य हैं। आज तो संस्कृत अमर भाषा ही मानी जाती इसे न मानना सत्य से विमुख होना है। फिर भी संस्कृत नाट्य साहित्य ने भाषा साहित्य को प्रभावित करने में कोई उठा न रखी है तथा उसकी विशेषताओं पर दृष्टिपात कर लेना अप्रासंगिक न होगा।

रूपकात्मक नाटक

संस्कृत नाटक साहित्य में अतिप्राचीनकाल से अश्वघोष के समय से ही भाव नाओं का मानवीकरण प्रस्तुत करने की प्रवृत्ति दिखायी देती है। शारिपुत्र प्रकरण में बुद्धि कीर्ति और धृति का मानवीकरण किया गया है। धार्मिक प्रचार की भावना और नैतिक सिद्धान्तों को स्पष्ट करने के विचार ने इस प्रवृत्ति को प्रोत्साहन प्रदान किया। फलतः विवेक मोह काम दंभ अहकार और श्रद्धा आदि को मंच पर अव तरित किया जाने लगा। ग्यारहवीं शताब्दी में कृष्ण मिश्र ने प्रबोध चन्द्रोदय की रचना की जिसे जेजक मुक्ति के चन्देलवंशीय राजा कीर्तिवर्मा के समक्ष गोपाल की प्रेरणा से अभिनीत किया गया।[1] यह छः अंकों में अद्वैतवेदान्त और विष्णु भक्ति के सिद्धान्तों का प्रतिपादन करता है। इसमें विवेक और मोह का संघर्ष दिखाई देता है जिसमें विवेक की विजय होती है राजा मोह से छूट जाता है।[2] वैसे तो शारिपुत्र प्रकरण में ही बुद्ध एवं कीर्ति धृति व बुद्धि मंच पर एक साथ दिखाई देते हैं किन्तु मानव और मानवीकरण किये गये पात्रों ने वार्तालाप किया या नहीं यह एक शंका ही रह जाती है। इस शंका का समाधान प्रबोध चन्द्रोदय और मोहराज परा जय में हो जाता है। यशपाल नामक जैन नाटककार ने तेरहवीं शताब्दी में मोह राज की रचना की। इसमें मानवीकरण किये गये (कल्पित) पात्रों में एवं मानव पात्रों में (वास्तविक पात्रों में) वार्तालाप होता है। अब भावनायें और हाड मास के

---

1 संस्कृत साहित्य का इतिहास, ले० प्रो० बलदेव उपाध्याय, पृ० ५५५–५५६ चतुर्थ संस्करण।

2 केशव की विज्ञानगीता इसका छन्दबद्ध अनुवाद ही है। वही पृ० ५०७

3 सन १२२६ से १२३२ के बीच, संस्कृत साहित्य का इतिहास वही पृ० १६६

पात्र संवादों में खुल कर भाग लेने लगे। वेदान्तदेशिका सकल्प सूर्योदय इसकी पुष्टि करता है।[1] इसमें मोह की पराजय होती है और विवेक का उदय होता है। यह शान्तरस की महत्ता को प्रतिपादित कर उसकी श्रेष्ठता सिद्ध करता है।[2] सोलहवीं शताब्दी में चैतन्यदेव के पार्षद शिवानन्द सेन के पुत्र परमानन्ददास ने जिन्हें चैतन्य देव ने कवि कर्णपुर कहा है चैतन्य चन्द्रोदय नामक रूपक की रचना की। इसमें मूर्त व अमूर्त पात्रों का मिश्रण किया गया है मूर्त में चैतन्य तथा उनके प्रसिद्ध शिष्य आते हैं और अमूर्त में भक्ति विराग कलि आदि परिगणन करते हैं। सत्रहवीं शताब्दी के सात अंकों का रूपक विद्यापरिणय प्राप्त होता है जिसमें विद्या के विवाह का सुन्दर चित्रण किया गया है। इसमें जैन मत सोमसिद्धान्त चार्वाक सौगात आदि को पात्रों के रूप में स्थान मिला है। इसके ही लेखक ने[3] जीवानन्द नामक सात अंकों का रूपक भी लिखा है। इसमें पाण्डु उन्माद, गुल्म, राज्यक्ष्मा आदि रोगों को पात्रों के रूप में अवतरित कराया गया है। अठारहवीं शताब्दी का भूदेव शुक्र कृत धर्माभ्युदय रूपक में भी अमूर्त पात्रों को चित्रित करता है।

रूपकात्मक नाटक और विशेषतायें

मानवीय भावनाओं, रोगों धार्मिक सिद्धान्तों एवं अमूर्तपात्रों का मानवीकरण करना उपयुक्त नाटकों की विशेषता रही है। इनमें मानव पात्र एवं मानवीकरण किये गये पात्र आपस में वार्तालाप करते हैं जिससे वस्तु विकास में सहायता मिलती है। ये धार्मिक सिद्धान्तों व विभिन्न विचारों तथा भक्तिधाराओं का प्रतिपादन करते हैं।

रूपक और उपरूपक के भेद

जिस प्रकार संस्कृत नाट्यधारा विशाल और प्राचीन है उसी प्रकार से वह विविध और अनेक शाखा प्रशाखाओं से संयुक्त है। इसमें जीवन के विभिन्न क्षेत्रों का चित्रण किया गया है और उस चित्रण को प्रस्तुत करने की भिन्न भिन्न प्रणालियों का उल्लेख भी नाट्यशास्त्रकारों ने किया है। दृश्य काव्य की प्रणालियाँ रूपक और उपरूपक के भेदों के नाम से प्रख्यात हैं। इन भेदों का आधार वृत्तियाँ रही हैं क्योंकि वृत्तियाँ, नाटकीय रचना की प्रमुख अंग होती हैं। वृत्तियों के आधार पर रूपकों के

---

1 चौदहवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध संस्कृत साहित्य का इतिहास, ले० डॉ० व० चा० पृ० १६६

2 सकल्प सूर्योदय १६

3 लेखक के नाम के बारे में मत भेद है उसका नाम वेद कवि माना जाता है वही, पृ० १७०

नाटक प्रकरण, समवकार डिम, ईहामृग व्यायोग अक, प्रहसन वीथी और भाण दस भेद किए गए हैं।[1] जिस प्रकार षडज और मध्यम आलाप म सभी प्रकार की रागें अन्तर्निहित रहती हैं वैसे ही नाटक और प्रकरण की रचना म सभी वत्तियो का उपयोग किया जा सकता है।[2 3] नाटक और प्रकरण म नाट्यरचना के सभी गुणो का समावेश हो जाता है। इन दोनो म नाटक अपनी विशेषताओ के कारण प्रकरण से भी महत्वपूर्ण बन गया है। उसे सब प्रकार के रूपको का प्रतिनिधि मानना चाहिए।[4]

नाटक—नाटक की कथावस्तु प्रख्यात होती है किन्तु जो वृत्त नायक या रस के विरोधी होते हैं, उनमे आवश्यक परिष्कार वाछनीय माना गया है।[5] इसका नायक अभिगम्य गुणो से युक्त धीर गभीर उदात्त प्रतापी महाउत्साहवाला, राजर्षि या कोई दिव्य या दिव्यादिव्य पुरुष होता है।[6] इसम नायक के शौर्य अनिमाननीय कृत्यो और उसके प्रणय एव उसकी सफलता का चित्रण होता है।[7] नाटक विभिन्न क्षेत्रो म काम करने वाले मनुष्यो की क्रियाओ स उत्पन्न सुख दुखो से पूर्ण विश्व का निदर्शन कराता ह।[8] इसमे पाच से ऊपर तथा दस से कम अको की व्यवस्था होती है।[9] और अर्थोपक्षेपक स्थान प्राप्त करते हैं। यद्यपि साहित्य दर्पणकार ने पाच अक के नाटक को लघु नाटक तथा दस अक वाले इससे अधिक अको वाले को महानाटक कहा है।[10] फिर भी नाट्य शास्त्र एव दशरूपक के आधार पर नाटक के अक पाच से दस तक माने जाते है[11] इसम नायक के नौकरो की सख्या चार या पाच से

---

1 ना० शा० (डा० घोष) २०१८ प्र० स०

2 वही

3 वीथी, समवकार, ईहामृग उत्सृष्टाक, व्यायोग, भाण, प्रहसन और डिम मे कैशिकि वृत्ति का उपयोग निषिद्ध है।

4 रूपक रहस्य, चतुर्थ सस्करण, पृ० १५८

5 हिन्दी दशरूपक पृ० १४० १४१, प्र० स०

6 रूपक रहस्य, च० सस्करण पृ० १५८ १५९

7 ना० शा० (डा० घोष) २०।१०, ११ प्र० स०

8 नाट्य शास्त्र २१/११८

9 पाँच से दस तक अकों का विभाजन होना चाहिये। हमारी नाट्यसाधना पृ ३१

10 नाट्यशास्त्र (डा० मनमोहन घोष) (२०/५७)

11 बाबू भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने साहित्य दर्पणकार के समान ही कहा है नाटक के लक्षणों से पूर्ण प्रत्य आदि दस अकों मे पूर्ण हो तो उसको महानाटक कहते हैं। ब्रजरत्नदास, पृ० भारतेन्दुनाटकावली द्वितीय खड, पृ० ४२६

अधिक नही होती ह । डॉ० कीथ ने इस शौर्यपूण कामदी कहा है ।[१] नाटक का वस्तु विधान गोपुच्छसम हाना चाहिए । क्रमश अ का का छोटा हाना ही गोपुच्छ शैली है । वस्तु वि यास मे काय व्यापार की अवस्थाओ अथ प्रकृतिया और सधिया का सुखद सम वय होना चाहिए ।[२] इसम पताका स्थानक का समावेश भी वाछनीय होता ह । नाटक का अ गीरस वीर या शृ गार होता ह और अ य रस उसम सहायक हाते हैं । निवहणसधि म अदमुत रस भासित हाता ह ।[३] नाटक म रसाभास नही हाना चाहिए । अभिज्ञान शाकु तल नाटक का श्रेष्ठ उदाहरण ह ।

इसी प्रकार से नाट्यशास्त्र एव अ य (नाटक) लक्षण ग्र थो म प्रकरण[४] [५], [६] [७] भाण,[८], [९] [१०] प्रहसन [११], [१२], [१३], [१४] डिम[१५] व्यायोग [१६] समवकार,[१७] वीथी[१८] [१९] अ क[२०] और ईहामृग[२१] का सागापाग वणन किया गया है। इनम से डिम, व्यायोग, अ क और ईहामृग म एक एक अ क ही होत थे ।

---

1 डा० ए० बी० कीथ सस्कृत ड्रामा नाटक का विवेचन
2 देखिये प्रस्तुत प्रतिनिब ध—X
3 डी० आर० एन० ३/३३
4 ना० शा० २०।४८ से ५८
5 रामच द्र, नाटयदपण, पृ० १७७–७८
6 ब्रजरत्नदास, भारते दु नाटकावली, भाग दो, पृ० ४२४
7 डा० श्यामसु दरदास, रूपकरहस्य, पृ० १६१
8 दशरूपक III ४–५६, ५०, ५१
9 नाटयदपण, पृ० १२७
10 ना० शा० २०, १२८
11 ना० शा० XX १०५, १०७
12 डा० कीथ सस्कृत ड्रामा, पृ० ३४८
13 रूपकरहस्य पृ० १६०
14 डा० कीथ सस्कृत ड्रामा, पृ० ३४८
15 ना० शा० XX ६० से ६३
16 काव्यानुशासन पृ० ३२३
17 डा० नगे द्र द्वारा सपादित भारतीय नाटय साहित्य पृ० ३०
18 ना० शा० XX ६४ से ७६
19 डा० नगे द्र द्वारा सपादित भारतीय नाटय साहित्य पृ० ३०
20 ना० शा० XX ६४ से ६६
21 वही ७८ से ८२

रूपकों के समान उपरूपकों में भेदों की चर्चा भी सविस्तार की गई है। उपरूपकों में अधिकांशतः नृत्य की प्रधानता होती है—ये नृत्य के भेद भी माने जाते हैं।[1] इनमें डाम्बी[3] रासक[3] नाट्यरासक,[4] गोष्ठी काव्य, श्रीगदित और विलासिका[4] एक-एक अङ्क वाले उपरूपक हैं। उल्लाप्य के[6] अंक-विभाजन के बारे में विद्वानों में मतभेद है। कतिपय आलोचक इसमें एक से अंकों की भी व्याख्या देते हैं, हल्लीश[7],[8] में एक या दो अंक हो सकते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि संस्कृत नाट्यशास्त्र के अनुसार कई रूपक और उपरूपक एक-एक अंक वाले होते थे।

1 स० डा० न० भारतीय नाटयसाहित्य पृ० ३२
2 डॉ० आर० मांकड, टाइप्स ग्राव संस्कृत ड्रामा पृ० ६४
3 वही पृ० ११०-११५
4 वही
5 साहित्य दर्पण पृ० ३०१-३०२
6 (क) रूपक रहस्य, पृ० १६५
(ख) डा० सरनामसिंह जी शर्मा 'अरुण' तरंगिणी-भूमिका पृ० (घ)
7 डा० कीथ-संस्कृत ड्रामा पृ० ३५१
8 भावप्रकाश जा० ओ० एम०, पृष्ठ २६६

वस्तु, नेता और रस | 2

वस्तु

सस्कृत रूपको के भेदक तत्त्व हैं वस्तु[1] नता[2] और रस[3]। इनमे वस्तु प्रथम तत्त्व है। इनिवृत्त अधिकारी, अभिनय और कथापकथन की दृष्टि से वस्तु के कई किये जाते है। रूपक भेद के अनुसार या इतिवृत्त के अनुसार नाटक की वस्तु प्रख्यात उत्पाद्य या मिश्र हो सकती है। यथा नाटक एव व्यायोग की वस्तु प्रख्यात होती है तो प्रकरण की उत्पाद्य। धनजय के अनुसार उत्सृष्टाक की वस्तु मिश्र हो सकती है।[4] इतिहास पुराण सम्मत प्रसिद्ध कथानक को प्रख्यात कहते है तो कवि कल्पना प्रसूत उत्पाद्य कहलाती है। जिस कथा मे इतिहास और कल्पना का मिश्रण होता है उसे मिश्र वस्तु कहते है। इसी प्रकार अधिकार की दृष्टि से भी वस्तु के दो भेद किये जाते हैं अधिकारी और प्रासगिक।

वस्तु और अधिकार

रूपक के प्रधान फल का स्वामित्व अर्थात् उसकी प्राप्ति की योग्यता अधिकार कहलाती है। उस फल को प्राप्त करने वाले को अधिकारी कहते हैं। अधिकारी की कथा को मूल या आधिकारिक कथा कहते है। उसी कथा के सहायक इतिवृत्त को प्रासगिक कथा कहते हैं।[5] यथा राम कथाश्रित नाटको मे राम की कथा मूल

---

1 The assemblage of acts which fabricated with a view to the attainment of some particular result is to be known as the principal plot (Adhikari) Other than these constitute the subsidiary plot (Prasangik) Natya Shastra Translated by Dr M M Ghos XIX 3 First Edition

2 Ibid

3 Ibid

4 वस्तु नेता रसस्तेषा भेदक हिन्दी शब्दकोश पृ० ५४८

5 वही पृ० ६४४

6 रूपक रहस्य अध्याय चौथा व छठा

कथा कहलाती है और वालिवध या जटायु मुक्ति के प्रसग प्रासगिक कहलाते है। प्रासगिक कथा का पुन दो भागो म बाटा जाता है पताका और प्रकरी। पताका उस कथा की सना है जो प्रारम्भ होने के समय से अत तक निरतर प्रवाहित होती रहती है यथा सुग्रीव-कथा। प्रकरी सचारी भावो के समान कथाविकास मे सहायता पहुँचाने के लिए उत्पन्न होती है और पुन फलागम से पूर्व ही समाप्त हो जाती है जसे जटायु का प्रसग। पताका और प्रकरी सवदा मूल कथा म सहयोगी हुआ करती है उनका नाटक से भिन्न कोइ उद्देश्य नही हो सकता। जस मूल कथा को पताका और प्रकरी स पोषकत्व प्राप्त होता है उसी प्रकार से पताकास्थानक उसम आकषण और चमत्कार उत्पन्न करने के लिये या धारावाहिकता लाने के लिये प्रयुक्त होता है। वास्तव म पताका स्थानक पताका नामक प्रासगिक वस्तु स भिन्न है।[1]

पताका स्थानक

जहा पात्र का प्रयोजन कुछ और हो परन्तु शब्द या दृश्य सविधान के कारण किसी नय भाव या अथ की प्रतीति हो जाय वहा पताका स्थानक माना जाता है। नाट्यशास्त्रकार न इसक चार भेद किय है जिसस साहित्यदपणकार सहमत है।

(१) जहा अकस्मात प्रेमानुकूल उपचार (सदृश्य) क कारण उत्कृष्ट प्रयोजन सिद्ध हो।

(२) *जहा श्लिष्ट शब्द द्वारा अधिकारी या नायिका का मगल सूचना प्राप्त हो।*

(३) जहा प्रवचन वक्ता का अथ अस्पष्ट हान पर भी उत्पादित स भावी कथा पर प्रकाश डाला जा सके। और

(४) *जहा श्लिष्ट पदावली स प्रधानतर अथ का आभास प्राप्त हो।*[2 3 4]

उपयुक्त विवचन स ज्ञात होता है कि द्वितीय तृतीय, और चतुथ भेद को तो एक ही भेद क अन्तगत रखा जा सकता है। उस भेद को हम कह सकते हैं, चतुर शब्दयुक्त अतिशय श्लिष्ट वाक्य। वास्तव म दशरूपककार न पताका स्थानक क दो

---

1 रूपक रहस्य पृ० ४६, एव हिन्दी साहित्य कोश पृ० १८६ तथा ४३१, ४३२,

2 हिन्दी साहित्य कोश पृ ३३२,

3 ना० शा० (२१ ३१ ३५)

4 सहसवाय सर्वतिगुणवत्युप चारत । पताकास्थानकमिद प्रथम परिकीर्तितम् ॥
वच स्मतिशयश्लिष्टना ना बन्ध श्रयम् । पताका स्थानकमिद द्वितीय परिकीर्तितम् ॥

हो भेद किये हैं। प्रथम है तुल्य इतिवृत्त और द्वितीय है तुल्य विशेषण।[1] प्रथम में अन्य अर्थ की सूचना दी जाती है समान कथा प्रसंग से किन्तु द्वितीय में श्लेषादि आगन्तुक अर्थ के कारण बनते हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि वस्तु में चमत्कार उत्पन्न करने के लिये पताका स्थानक का प्रयोग किया जाता है। नाट्य शास्त्रकारों ने वस्तु पर यहीं तक प्रकाश नहीं डाला है अपितु उन्होंने इसका गहन और गूढ़ विवेचन भी प्रस्तुत किया है। वस्तु में कार्यव्यापार की अवस्थाओं अर्थ प्रकृतियों और सन्धियों की व्यवस्था इसकी साक्षी है।

कार्यव्यापार की अवस्थाएँ

संस्कृत नाटक का कथानक साधारणतया जब पूर्ण विकास प्राप्त करता है तो उसमें विकास की पांच अवस्थायें दिखाई देती हैं। इसका मुख्य प्रयोजन होना है फल कथा में इसी फल का विकास और विस्तार दिखाई देना है। विकास की इन पांच अवस्थाओं को कार्य व्यापार के नाम से अभिहित किया जाता है। ये हैं प्रारम्भ प्रयत्न प्राप्त्याशा नियताप्ति और फलागमन। प्रारम्भ में किसी इप्सित उद्देश्य को प्राप्त करने की लालसा दिखायी देती है तो प्रयत्न में फल लाभ के लिये किये जाने वाले अत्यन्त शीघ्रतापूर्ण क्रिया कलाप दृष्टि गोचर होते हैं। प्राप्त्याशा में[2] फल प्राप्ति की आशा होने लगती है किन्तु वह विघ्न बाधाओं से घिरी रहती है। उद्देश्य साफल्य की निश्चयात्मक अवस्था को कहते हैं नियताप्ति और जब नायक सम्पूर्ण फल प्राप्त कर लेता है। तब फलागमन के दर्शन होते हैं। जिस प्रकार से कथा के विकास की पांच अवस्थायें मानी गयी हैं उसी प्रकार से कथा को फलागमन की ओर अग्रसर करने वाले चमत्कार युक्त अंशों की संख्या भी पांच मानी गयी हैं जिन्हें अर्थप्रकृतियां कहते हैं।

अर्थ प्रकृतियाँ

फलसिद्धि की दृष्टि से कथानक में किये गये प्रयत्नों की संज्ञा अर्थ प्रकृतियां के नाम से विख्यात है। बीज, बिन्दु पताका प्रकरी और कार्य इसके भेद हैं। मुख्य फल का हेतु जो प्रारम्भ में स्वल्प संकेतित रहता है और कालान्तर में विकसित होता है, बीज कहलाता है। जिस प्रकार से छोटा सा बीज बड़े वृक्ष का कारण बनता है उसी प्रकार से कथा का बीज भी महत् कार्य की सिद्धि का कारण बनकर अपने नाम

---

१ रूपक रहस्य पृ० ४६,
प्रस्तुतागन्तुभावस्य वस्तुनो न्योक्तिसूचकम्।
पताकास्थानकम् तुल्य संविधाना विशेषणम्। दशरूपक १४,

2 इसे नाट्यशास्त्रकार ने प्राप्ति संभव कहा है। ना० शा० अध्या

को गतिशील प्रदान करता है। जो बात निमित्त या अन्य कथा को आगे बढ़ाती है या कथा के भेद को जोड़ती है उसे बिन्दु कहते हैं। जिस प्रकार तेल की बूंद जल पर फैल जाती है उसी तरह बिन्दु भी प्रसारित रहता है।[1] अर्थप्रकृतियों में से पताका और प्रकरी का उल्लेख वस्तु के साथ किया जा चुका है। फिर भी यहां इतना कहना अनुचित न होगा कि पताका और प्रकरी नामक कथांशों नायकों के अपने भिन्न फल नहीं निश्चित किये जाते हैं। वे सहायक नायक के सहयोगी बनते हैं। राम कथाश्रित नाटकों में सुग्रीव और जटायु के कथांश पताका और प्रकरी के क्रमशः उदाहरण हैं। जिस काम के लिए नाटक में प्रयत्न किये जाते हैं विभिन्न प्रकार की सामग्री जुटायी जाती है विघ्नबाधाओं का सामना किया जाता है उसकी प्राप्ति नाटक का कार्य कहलाता है। यह नाटक का प्रधान साध्य है जिसकी पूर्ति निमित्त सभी उपकरण एकत्र किये जाते हैं।

सन्धियाँ

उपर्युक्त पांचों कार्य व्यापार की अवस्थाओं अर्थप्रकृतियों के संयोग से संधियों की उत्पत्ति होती है।[2] कथात्मक पूर्वोक्त पांच अवस्थाओं के योग से अर्थप्रकृतियों के रूप में विस्तारी कथानक के पांच अंश हो जाते हैं। एक ही प्रधान प्रयोजन के साधक उन कथांशों का मध्यवर्ती किसी एक प्रयोजन के साथ सम्बन्ध होने को संधि कहते हैं।[3] अतएव संधियों के पांच भेद किये जाते हैं मुख प्रतिमुख गर्भ विमर्श और निर्वहण।[4]

मुख

मुख संधि में प्रारम्भ नामक नामक अवस्था और बीज नामक अर्थ प्रकृति के संयोग से अनेक अर्थ और रस व्यंजित होते हैं। इसके बारह उपभेद किये जाते हैं उपक्षेप, परिकर परिन्यास विलोभन युक्ति प्राप्ति समाधान विधान, परिभावना, उद्भेद करण और भेद। उपक्षेप में वस्तुविन्यास की सूक्ष्म सूचना प्राप्त होती है तो परिकर में उसकी वृद्धि। परिन्यास में बीज की निष्पत्ति या सिद्धि का निश्चय होता है। विलोभन में गुणकथन सुनायी देता है। युक्ति द्वारा कार्य प्रयोजन का सम्यक् निर्णय हो जाता है और प्राप्ति में सुख का अनुभव होता है। समाधान में

1 रूपक रहस्य पृ० ५४

2 अर्थ प्रकृतयः पंच पंचावस्था समन्विता यथासंख्येन जायन्ते मुखाद्याः पंचसंधयः। (दशरूपक २२)

3 रूपक रहस्य पृ० ५५

4 निर्वहण को उपसंहृति भी कहते हैं। हिन्दी साहित्य कोश, पृ० ७१३

बीज के पुन दर्शन होते हैं जिससे नायक या नायिका का मतव्य प्रकट होता है। विधान, मे सुख दुख का विधान रहता है और परिभावना मे आश्चयजनक दृश्य एव कुतूहलपूर्ण वार्त्तालाप का समावेश होता है। उद्भेदल बीज के अप्रकट रहस्य को स्पष्ट कर देता है और करण मे वाञ्छनीय अथ की प्रतीति होनी है। भेद म प्रोत्साहन मिलता है। इन भेदो से आचार्यों की विद्वता प्रकट होती है और उनके द्वारा किये गये नाटका के सूक्ष्म अध्ययन का भी पता चलता है। साथ ही यह भी नात हाता है कि हमारे आचाय सूक्ष्म भागोपभाग करने के पक्ष म थे। उनको भी यह नात था कि साधारणतया इनका निर्वाह कठिन है। अत उन्होने यह भी अनुमति दे दी कि उपक्षेप परिकर, परिन्यास, युक्ति समाधान और उद्भेद के अतिरिक्त अन्य अगो को प्रयोग मे न ला पाना क्षम्य है।[1]

प्रतिमुख

जिस प्रकार मुखसधि बीज और प्रारम्भ म सम्मिलन से उत्पन्न होनी है उसी प्रकार से प्रतिमुख की सृष्टि बिन्दु और प्रयत्न के सयोग से होती है। इसमें कभी बीज स्पष्ट लक्षित होता है तो कभी वह अलक्षित ही रहता है। इसके विलास, परिसप विद्युत, तपन, नम, नमद्युति, प्रगमन, निरोध, पयुपासन, पुष्प, वज्र, उपन्यास और वर्णसहार, नामक तेरह भेद किये जाते हैं। विलास म आनन्द देन वाले पदाथ की आकाक्षा की जाती है तो परिसप म नात किन्तु उस समय अप्राप्य वस्तु की खोज की जाती है। विद्युत म सुखप्रद वस्तुओ का तिरस्कार किया जाता है और तापन मे उस तिरस्कार का होता है समाहार। नम म परिहास युक्त वार्त्तालाप होता है जो द्युति या नम द्युति मे आनन्द का कारण वनता है। प्रगमन म भी उत्तर प्रत्युत्तर सौंदय विद्यमान रहता है। प्रगमन के पश्चात् निरोध मे हितरोध उत्पन्न हो जाता है, हितकर वस्तु के प्राप्त करने म बाधायें आ जाती हैं। पयुपासन म क्रुद्ध के सम्मुख विनती की जाती है और पुष्प म अनुराग उत्पन्न करने वाले वचना की ध्वनि सुनायी देती है उपन्यास के युक्तिपूर्ण वचन उसम सहयोग देते हैं जिसस वज्र–विद्यमान निष्ठुर वचनो का अन्त होकर वर्णसहार म भेदभाव का अन्त हो जाता है, चारा वर्णों का सम्मेलन दृष्टिगोचर होता है। यहाँ यह भी कहा जाता है कि वर्णसहार सधि म वर्णभेद दूर न होकर पात्रा का भेद दूर हो जाता है। वर्ण म यहा तात्पय केवल नाटक के पात्रो से है न कि समाज मे पाये जाने वाले वर्णों स।[2] चाह जो कुछ हो, इसम मच पर विद्यमान भेद भाव तिरोहित हो जाता है, जो समाज क भेद को मिटाने का भी कारण बन सकता है।

---

1 रूपक रहस्य पृ० ६६

2 रूपक रहस्य पृ० ६४

गर्भ संधि[1]

प्रतिमुख संधि के पश्चात् प्राप्त्याशा कार्य-व्यापार की अवस्था को पताका द्वारा सहयोग प्राप्त होता है। प्राप्त्याशा और पताका के इस सम्मिलन को गर्भ संधि कहते हैं। इसमें बीज का विकास होता है फिर भी उसका तिरोभाव भी होता रहता है जिससे उसका अन्वेषण आवश्यक हो जाता है। यहां यह ध्यान देने योग्य है कि पताका का प्राप्त्याशा के साथ सन्निवेश वैकल्पिक ही है अनिवार्य नहीं।[2, 3, 4]

इस संधि के बारह अंग माने गये हैं अभूताहरण, मार्ग रूप उदाहरण क्रम संग्रह, अनुमान, अधिबल तोटक उद्वेग संभ्रम और आक्षेप। अभूताहरण में कपट वचना मार्ग में सच्ची बातों रूप में तर्क वितर्क युक्त सलापों उदाहरण में उत्कर्षमय वार्तालापों, क्रम में अभिलाषापूर्ण उक्तियों और संग्रह में सामदाम से परिपूर्ण बातों को स्थान मिलता है। अनुमान में किसी बात का अनुमान लगाया जाता है जिसमें कोई चिह्नविशेष सहायक होता है। अधिबल में धोखा तोटक में आवेशमय वचन उद्वेग में शत्रु की आशंका और संभ्रम में आशंका के साथ त्रास स्थान प्राप्त करते हैं। अन्त में आक्षेप द्वारा गर्भस्थिति स्पष्ट हो जाती है।

दशरूपककार ने तो उपर्युक्त १२ अंग ही माने हैं किन्तु साहित्य दर्पणकार ने १३ अंगों को स्थान दिया है। उन्होंने प्रार्थना नामक एक भिन्न अंग की भी व्याख्या दी है। उसमें भाव रति हर्ष और उत्सवों के लिये प्रार्थना की जाती है। साहित्य दर्पणकार ने आक्षेप को क्षिप्ति संभ्रम को विद्रव नामों से अभिहित किया है। यदि यहाँ तेरह अंगों की व्यवस्था स्वीकार की जाती है तो कुल ६५ अंग हो जाते हैं। परन्तु नाट्यशास्त्रकारों ने उनकी संख्या ६४ ही मानी है। अतएव यहां तेरह अंग मानने वाले निर्वहणसंधि में प्रशस्ति नामक अंग की अवहेलना करते हैं।[5]

विमर्श संधि

जिस प्रकार गर्भ संधि में पताका की स्थिति वैकल्पिक है उसी प्रकार से यहां नियताप्ति नामक कार्य व्यापार की अवस्था के साथ प्रकरी का प्रयोग नाट्यकार

---

1 वही पृ० ६५
2 ना० शा० अध्याय २१, ४० ४१
3 इसकी विशद व्याख्या, संधियों की व्याख्या करने के पश्चात् जहाँ डा० कीथ के आक्षेपों पर विचार किया जायगा, वहाँ होगी।
4 रत्नावली जैसी शास्त्रसम्मत नाटिका में भी पताका को स्थान नहीं दिया।
5 रूपक रहस्य पृ० ६६

की इच्छा पर आद्रत रहता है। इसम बीज क विकास को रोध विपत्ति या प्रलोभन आदि के द्वारा बाधा पहुचायी जाती है।[1] इसके अपवाद सफेट, विद्रव, द्रव, द्युति शक्ति, प्रसग छलन व्यवसाय विरोधन प्ररोचना विचलन और आदान नामक तेरह अग माने जात हैं। अपवाद म दोष फलता है सफेट म रोषाग्नि लहलहाती है विद्रव म वधन आदि दृष्टिगोचर होते हैं। इसम हाहाकार शोक अग्निदाह आदि की सूचना भी दी जाती है। द्रव म गुरुजना का अपमान किया जाता है। शक्ति म विरोध का अन्त हो जाता है रोषाग्नि शान्त हो जाती है। द्युति म डाट फटकार तजन और उद्वेजन तथा शत्रु क प्रति रोष आदि का चित्रित किया जाता है। द्रव म तो गुरुजना का अपमान किया जाता है किन्तु प्रसग म उनकी कीर्ति का गुणगान होता है। हम छलन म अपमान भरे शब्द एव व्यवसाय में प्रवचनकर्त्ता की प्रशसा को सुन सकत है। इसके पश्चात् प्ररोचन आगामी सफलता का सूचक होता है किन्तु विचलन म वहकन का स्थान मिलता है। और तब आदान म अर्थ सिद्धि या फलसिद्धि की आशा दिखायी दती है।

निर्वहण सधि

इसम मुख्य फल की प्राप्ति हो जाती है और अन्य सधियों म वर्णित अर्थों का समाहार हो जाता है। इसम फलागम काय व्यापार की अवस्था क साथ काय अथ प्रकृति प्राप्त होती है। इसके सधि, विवाध ग्रथन निर्णय, परिभाषण प्रसाद, आनन्द समय कृति भाषण पूर्वभव उपग्हन काव्य सहार एव प्रशस्ति नामक चौदह भेद किय गये हैं। सधि म वीज की उद्भावना होती और विवाध म काय का उल्लेख या विवरण प्राप्त होता है। निर्णय म अनुभव कथन होता है जिससे पूव कथा पर प्रकाश डाला जाता है। परिभाषण म वार्तालाप द्वारा एक दूसर के दुख को दूर करन का प्रयास किया जाता है। प्रसाद कार्यों या वचना से प्रसन्नता का कारण बनता है। आनन्द म इप्सित उद्देश्य प्राप्त होता है जिसमे समय पर दुख दूर होता है और कृति म शोक आदि क समन की सामग्री तैयार हो जाती है। भाषण द्वारा मान ऐश्वय एव यश प्रभृति की प्राप्ति होती है। पूव भाव और उपगूहन म काय का दर्शन होता है या वस्तु की प्राप्ति हो जाती है। काव्य सहार म वरदान मिल जाता है और प्रशस्ति म आशी वचन सुनायी दत हैं। इस प्रकार नाटक का नायक इप्सित उद्देश्य की प्राप्ति करता है जिससे सामाजिका को आनन्द की उपलब्धि होती है।

---

1 इसमें प्राप्त होने वाली बाधाओं को दृष्टिपथ पर रख कर ही

कतिपय शास्त्रकारों ने सधियों के अन्तगत २१ अत सधियोका-सध्यतरोको भी व्याख्या की है।[1] इनका उद्देश्य भी काय व्यापार को सुसगठित सुरुचिपूर्ण और अत्यन्त रोचक बनाना ही प्रतीत होता है। इनके द्वारा वस्तु शथिल्य को दूर करने का प्रयास किया गया था। इन सध्यगो और सध्यतरो के इष्टाथ गोप्यगोपन, प्रकाशन, राग भाव सचार, आश्चय प्रयोग और वतान्त का अनुपक्ष उद्देश्य बताये जात है।

सध्यगो तथा सध्यतरो का उद्देश्य

इष्टाथ अर्थात् अभिप्सित उद्देश्य की पूर्ति हेतु रचना विधान गोप्यागोपन अर्थात् गुप्त बात को गुप्त रखत हुये आवश्यक कथा को प्रकाश म लाना। प्रकाशन स तात्पय है वाछनीय कथा भाग का पूर्णरूपेण स्पष्टीकरण। राग भाव सचार का अथ है अनुराग या स्नेह एव तत्सम्बन्धी भावो का प्रस्फुरण और विकास। आश्चय प्रयोग है चमत्कार उत्पन्न करने के साधनों की सनाएव वत्तान्त अनुपक्ष का तात्पय है सामाजिको की रुचि बनाये रखना। इससे स्पष्ट हो जाता है कि सधियो के अगो व सध्यतरो का उद्देश्य कथा म चमत्कार उत्पन कर सामाजिको क आनद की वृद्धि करना है। य रसोद्रेक म बाधक न हो कर साधक ही बनते थे।

सधिपचक

उपरिलिखित विवेचन स स्पष्ट हो जाता है कि काय व्यापार की अवस्थाओ अथप्रकृतियो और सधियो म आपस म निकट सम्बध रहा है। वे एक दूसरे की सहायक होती है। इन्हे सधि पचक कहते है। निम्नाकित सारिणी से यही प्रकट होता है

अर्थ प्रकृतियाँ	कार्य व्यापार की अवस्थायें	सधियाँ
१ बीज	आरम्भ	मुख
२ बिन्दु	प्रयत्न	प्रतिमुख
३ पताका	प्राप्त्याशा	गभ
४ प्रकरी	नियताप्ति	विमश
५ काय	फलागम	निवहण

सधिपचक आक्षेप

अथप्रकृतियो अवस्थाओ और सधियो क सम्बध और उनक विवचन पर विद्वानो न कई आपत्तियाँ प्रकट की है। मुख्य रूप स पाश्चात्य विद्वानो न इसम दोष

---

[1] रहस्य पृ० ७५।

दशन किय[1] और आज भारतीय विद्वान भी उनका समथन करते है।[2]

डॉ० कीथ न भी विवेचन की असारता पर प्रकाश डाला है। उनके दोष दशन का आधार पताका, प्राप्त्याशा और गभ तथा प्रकरी, नियताप्ति और विमश मे क्रमानुकूल निकट सम्बन्ध का अभाव है। अन्य विद्वान यह कहत हैं कि यह सूक्ष्म विवेचना नाटक को पगु बना देती है।[3]

डा० कीथ के मत का खडन

डॉ० कीथ का उपयुक्त दोष दशन युक्ति सगत प्रतीत नही होता है। कारण यह है कि पताका और प्रकरी का उपयोग नायक की जनप्रियता पर अवलम्बित रहता है। य तो वस्तु के प्रासगिक वत हैं जिनमे नायक, उपनायक अथवा सहायक के प्रयत्नो की भी अपेक्षा रखता है।[4] अतएव नाटक म इनका होना अनिवाय नही है।[5]

नेता

जसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है नाटक के फल का भोक्ता नायक होता। वह अधिकारी कहलाता है जो नाटक म प्रमुख पात्र भी होता है। नाट्य शास्त्रो म उसके गुणो का सागोपाग विवेचन प्राप्त होता है। वह नेता का पर्यायवाची बन गया है। नेता शब्द की व्युत्पत्ति नी धातु से हुई है। जिसका अथ होता है ले चलना। नेता शब्द से मानवीयगुणो और सीमाओ से सीमित होते हुए भी अपने सम्मुख उपस्थित घटनाओ को इप्सित उद्देश्य की ओर अग्रसर करनेवाले व्यक्ति का बोध होता है। दशरूपक म धनजय ने उसे विनीत मधुर, दक्ष प्रियवद, पवित्र रक्त लोक वाग्मी, पवित्र रूढवश, स्थिर युवा बुद्धिमान प्रज्ञावान स्मृतिसम्पन्न, उत्साही कुलवान, शास्त्र चक्षु, आत्मसम्मानी शूरवीर, दृढ तेजस्वी और धार्मिक प्रवत्तिवाला त्यागी पुरुष माना है। नायक मे शोभा विलास माधुय, गाभीय स्थिरता जिलालित्य और औदायनामक आठ सात्विक या पौरुषेय गुण भी पाये जाते हैं। बढे हुये से बढ्ने की कामना करता है और वह नीच से घणा करता हैं और अधिक से करता है स्पर्धा। उसम शौय शोभा (वीरता का प्राधान्य) तथा दक्ष शोभा (क्षिप्रकारिता) पायी जाती है। गुणो के या स्वभाव के अनुसार नायक के चार भेद होत हैं धीर

---

1 सस्कृत ड्रामा पृ० २६६ ३१०।

2 हिन्दी साहित्य कोश स० डा० बच्चनसिंह पृ० ७६३।

3 डा० बच्चनसिंह, हिन्दी साहित्य कोश पृ० ७६३ प्रथम सस्करण।

4 नाटयशास्त्र २१।२७।

5 सपादक डा० नगेन्द्र भारतीय नाटय साहित्य पृ० ५५।

नाट्याचार्य भरत के अनुसार इन्हीं नायकों के ज्येष्ठ मध्यम और अधम तीन और भेद किये जाते हैं। नायकों को दिव्य, अदिव्य और दिव्यादिव्य भेदों में भी बाँटा जा सकता है। दिव्य देवता को, अदिव्य मनुष्य को और दिव्यादिव्य मनुष्य देह धारी देवता को कहते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि नायकों के शास्त्रकारों ने एक सौ चवालीस भेद किये है।[1] रूपक में नायक के अतिरिक्त अन्य पात्र भी पाये जाते हैं जिनमें से कई उसके सहायक होते हैं और कई विरोधी।

नायकों के सहायक

नायक के सहायकों में पीठ मर्द का उच्च स्थान प्राप्त है। वह नायक का सहायक होता है और पताका का नायक भी। उसमें नायक के अधिकांश गुण प्राप्त होते है किन्तु वे अल्पमात्रा में ही होते हैं। नायक के अन्य सहायकों में शृंगारसहाय, अर्थ चिंता सहाय, धर्मसहाय दण्डसहाय अंतःपुर सहाय संवाद सहाय या दूत भी अपना स्थान रखते हैं। विट चेट विदूषक मालाकार रजक तमोली और गंधी आदि उसके शृंगार सहायक कहलाते हैं। इन सहायकों के कार्य इनके नामसे ही प्रकट होते है। नाटक में नायक के सहायकों के साथ उसके विरोधी भी होते हैं।

नायक-विरोधीदल

नायक विरोधी दल में प्रतिनायक का स्थान सर्वोच्च होता है। वह पाप, बुराई और अनाचार की प्रतिमा होता है। उसके भी नायक के सहायकों के समान सहायक हो सकते हैं होते हैं। वे भी गुणों में प्रतिनायक के ही समान होते हैं यद्यपि उनमें वे गुण अल्पमात्रा मे प्राप्त होते है।

पात्र वर्ग विशेष का प्रतिनिधित्व

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि नायक प्रतिनायक तथा अन्य पात्रों के गुण संस्कृत नाटकों मे बंधे बंधाये होते थे। वे व्यक्ति विशेष (इंडिविज्वल) न होकर वर्ग विशेष का प्रतिनिधित्व करने वाले (टाइप्स) होते थे। नाट्यशास्त्रकारों ने नायिका चित्रण नायक से भी अधिक विस्तारपूर्वक किया है।

नायिका चित्रण

नायक नायिका भेद सम्बन्धी समस्त अध्ययन और काव्य रचना मे नायक की

---

1 चार स्वभावगत् उनके हो चार शृंगार की दृष्टि से फिर तीन अवस्था के अनुसार और तदुपरान्त तीन योनि दृष्टि से।

अपेक्षा नायिका का महत्व प्रारम्भ से ही अधिक रहा है।[1] संस्कृत नाट्याचार्यों ने नायक की पत्नी या प्रिया को ही नायिका के रूप में स्वीकार किया है।[2] प्रतिनायोगन्धरायण, स्वप्नवासवदत्ता, अभिज्ञान शाकुन्तल, रत्नावली, नागानन्द और उत्तरराम चरित्र प्रभृति रूपक इस कथन की पुष्टि करते हैं। इसका समर्थन नायिका के स्वकीया, परकीया और सामान्या भेद भी करते हैं क्योंकि ये भेद उसके नायक के साथ सामाजिक सम्बन्ध पर आधारित है।[3] अतएव नायक और नायिका का प्रणय सम्बन्ध वाञ्छनीय ही नहीं अनिवार्य भी दिखाई देता है।

नायिका के सामान्य गुण और चेष्टाएँ

नायिका प्रधानपात्र नायक की प्रिया या पत्नी होने के नाते प्रधान पात्री होती है और रसोद्रेक में सहायक बनती है। यह सुन्दरी आकर्षक और आनन्ददायक होती है। इसकी देह से शोभा, कान्ति और दीप्ति प्रकट होती है तो इसके कथन माधुर्य प्रगल्भता और औदार्य से परिपूर्ण होते हैं। यह लीला प्रधान प्रेम सभापण युक्त होती है। प्रिय के दर्शन मात्र से इसके विलास आकृति परिवर्तन का कारण बनते हैं। प्रिय आगमन पर कभी वह विभ्रमवश आभूषणों को यथा स्थान नहीं पहन सकती तो कभी प्रियसंग से प्रसन्न दिखाई देती है। कभी यह मोहाचित अवस्था को भी प्राप्त करती है प्रियतम सम्बन्धी बातें सुनने की इच्छुक रहती है और कभी अपने आनन्द को दबा कर कुट्टमती बन जाती है। गर्व के कारण प्रिय वस्तु के अनादर का दिखावा करती है तो साथ ही अपने को आकर्षक बनाने का यत्न भी। कभी वह प्रियससंग मे सुखी होते हुये भी व्रीडा वश उसे व्यक्त नहीं कर सकती है। तो कभी वियोगाग्नि में झुलसती दिखाई देती है। मुग्धता, कुतूहल और विक्षेप इसे सुषमामयी बनाने में सहायक होते हैं। हास, परिहास, आश्चर्य और केलिक्रीडा इसके सौन्दर्य वृद्धि के कारण होते हैं। इसे दिव्या कुलस्त्री, नृप पत्नी और गणिका नाम के भेदों में बाँटने का प्रयास किया गया किन्तु सर्वमान्य भेद स्वकीया परकीया और सामान्या ही बन सके।

स्वकीया पति के आधीन परकीया प्रणयी के आधीन (पति के नहीं) और सामान्या गणिका या वेश्या होती है। स्वकीया के मुग्धा, मध्या और प्रगल्भा नामक तीन भेद किए गए हैं। ये भेद वय क्रमानुसार किए हैं। मुग्धा में तरुणाई के आगमन का आभास दिखाई देता है। इसके भी दो भेद किये गये हैं ज्ञात यौवना और अज्ञात

---

1 हिन्दी साहित्य कोश पृ ४०१।

2 रूपक रहस्य पृ० ६६

3 हिन्दी साहित्य कोश पृ० ४०२

यौवना। जिसे यौवन के आगमन का आभास मिलता है वह ज्ञात यौवना और जो यौवन के आगमन को लक्षित न कर सके वह अज्ञात यौवना कहलाती है। मध्या और प्रगल्भा के गुण उनके नामों से ही स्पष्ट हो जाते हैं।

परकीया

स्वकीया के उपयुक्त भेदों के साथ परकीया को भी ऊढ़ा तथा अनूढ़ा में बाटा जाता है। ऊढ़ा विवाहिता की संज्ञा है तो अनूढ़ा अविवाहिता प्रेमिका का नाम। इन दो मुख्य भेदों के अतिरिक्त इसके और भी भेद किये जाते हैं जो भेद प्रभेद की प्रवृत्ति के परिचायक हैं। इन भेदों प्रभेदों के होते हुये भी संस्कृत नाटक साहित्य में कभी भी परकीया को नायिका रूप में चित्रित नहीं किया गया है क्योंकि उससे रसनिष्पत्ति में बाधा पहुँचती है।[1] डा० विलसन ने इसकी प्रशंसा करते हुए कहा है कि यह निषेध संस्कृत नाटकों के सम्मान की वस्तु है और यदि अंग्रेजी में ऐसा होता तो डायडन और कांग्रीव की कल्पनाशक्ति कुण्ठित हो जाती।[2] नायिका का तीसरा और निकृष्टतम भेद सामान्या है।

सामान्या

जैसा कि पहले अंकित किया जा चुका है सामान्या नायिका गणिका या वेश्या होती है। उसमें धनलोलुपता, कुटिलता और वञ्चना दिखाई देती है। गणिका ऐसी भी हो सकती है जो वेश्या का व्यापार न करती हो। यथा मृच्छकटिका वसन्तसेना। यहा यह उल्लेखनीय है कि गणिका को वेश्यावृत्ति करने वाली युवती को संस्कृत नाटकों में प्रधान पात्री या नायिका का स्थान प्राप्त नहीं हुआ है। संस्कृत नाटकों में प्रहसन के अतिरिक्त वेश्या की अवतारणा केवल सच्चे प्रेम के प्रदर्शन के लिये ही होती है। मृच्छकटिका मे गणिका वसन्तसेना इसी रूप में दृष्टि गोचर होती है।

नायिका की दूतियाँ

जिस प्रकार से नाटक मे नायक के सहायक होते है उसी प्रकार से नायिका की भी सखियाँ और दासियाँ नाटक में स्थान प्राप्त करती है। इनमें से जो उसके प्रणय व्यापार में सहायक होती है उन्हें दूतियाँ कहते हैं। कभी-कभी नायिका अपना प्रणय षडयन्त्र अपने हाथ में रखकर स्वयं ही उसे आगे बढाती है। नायक का अपना

---

1 रूपक रहस्य पृ० १०६

2 We may observe to the honour of Hindu Drama that Parkiya or she who is the wife of another person is never to be made the object of dramatic intrigue a prohibition that would have cooled the imagination and crubed the wit of Dryden and Congreve

3 रू र पृ० १०६

ली परिचय न देकर उससे दूती रूप में मिल कर अपने इप्सित उद्देश्य की पूर्ति प्रयत्न करती है तब वह स्वय दूती कहलाती है।

निष्कर्ष

उपरिकथित नायक खलनायक व उनके सहायक एव नायिका और उसकी खया तथा दूतिया के विवचन से ज्ञात होता है कि संस्कृत नाट्याचार्यों ने चरित्र त्रण को एक परिपाटी विशेष में बाधने का प्रयास किया था। वहा तो पात्र यथा ल्य एक पूर्वनिर्धारित परिपाटी का पालन करते हुए दिखाई देते हैं। अतएव यह कहना अनुपयुक्त न होगा कि संस्कृत के पात्र वर्ग का प्रतिनिधित्व अधिक करते हैं और क्तिगत विशेषताओं का प्रदर्शन कम। हा यह अवश्य ही उल्लेखनीय है कि नाटककारों द्वारा पूर्णरूपेण नियमों का पालन नहीं किया जाने या नहीं किया जा सकने के कारण अथवा कथा गत विशेषता के कारण एव नाटककारों की प्रतिभा के अनुसार, पात्र अपने वर्ग की विशेषताओं को भिन्न भिन्न रूपों में अंकित करने में सफल होते । ये सभी एक निर्दिष्ट दिशा की ओर प्रस्थान का प्रयास कर रसोद्रेक में सहायक होते हैं। संस्कृत नाटकों में रस को बहुत महत्ता दी गई है।

रस शब्द की व्युत्पत्ति व इतिहास महत्त्व

वस्तु और नेता के साथ नाटक का तीसरा प्रमुख तत्त्व रस है। व्युत्पत्ति की दृष्टि से इसके निम्नांकित दो अर्थ किये जा सकते हैं —

(१) रस्यते आस्वाद्यते इति रस अर्थात् जिसका भी स्वाद लिया जा सके वही रस है एव

(२) सरते इतिरस अर्थात् रस द्रव्य पदार्थ है। इसमें रस के द्रवत्व पर बल दिया गया है।

तैत्तिरीय उपनिषद् में रसो वस कह कर ब्रह्म को ही आनन्दरूप या रसस्वरूप कहा गया है। नाट्यशास्त्र में इसका अर्थ काव्यस्वाद या काव्यानन्द के रूप में किया जाता है। इसे अखण्ड चमत्कार पूर्ण लोकोत्तर ब्रह्मानन्द सहोदर, स्वप्रकाशानन्द चिन्मय एव वेद्यान्तर स्पर्श शून्य माना गया है। लक्षण ग्रन्थों में नाटक के सम्बन्ध में ही उसका सर्व प्रथम उल्लेख हुआ है। नाट्यशास्त्र ही प्रथम प्राप्य ग्रन्थ है जो इस पर शास्त्रीय रूप से प्रकाश डालता है किन्तु नाट्यशास्त्र स्वय उससे पूर्व रस चर्चा के प्रमाण प्रस्तुत करता है।[1] [2] भरतमुनि से पहले के आचार्यों के नाम भी उनके ग्रन्थ

---

1 नाट्यशास्त्र अध्याय ६ व ७ एव भारतीय काव्यशास्त्र की भूमिका से० डा० भागीरथ मिश्र पृ० १६ प्रथम संस्करण।

2 Hist of Sanstkrit Poetics S K De Vol I (1925) P 21-22 देखिये नाटकों की उत्पत्ति एव उसके तत्वों का विवेचन।

वणन मिलता है जिनके प्रति पाठको या सामाजिको के हृदय म पूज्य भाव रहता है। इस स्थिति म इनके शृगारादि व्यापार का ग्रहण पाठक इस रूप म कसे कर सकता है ? इसके उत्तर म भट्ट नायक ने भावकत्व और भोजकत्व की कल्पना कर यह प्रतिपादित किया कि आलम्बन अपनी विशेषता त्यागकर साधारण रूप म उपस्थित होते हैं। वे व्यक्ति मात्र रह जाते है–विशेषता या उपाधि रहित। इसे साधारणीकरण कहा जाता है।

(२) इस सिद्धान्त के बारे म उपयुक्त दोनो आचार्यों म मतवभिन्य रहा है। भट्ट नायक का कथन है कि साधारणीकरण आलम्बनत्व का धम होता है और इसम कवि कौशल की प्रधानता रहती है। अभिनव गुप्त का कहना है कि साधारणीकरण दशक या पाठक का होता है।

निष्कष

वास्तविक रूप से चिन्तन पर ज्ञात होता है कि नाटककार भावविभार होकर नाट्यकृति का निर्माण करता है। तब अनुकाय का अभिनय करने वाले अनुकत्ता अपने हावभाव–कटाक्ष से शिक्षा कौशल और यत्नज व अयत्नज अनुभावो द्वारा सहृदय पाठको के हृदय को साधारण रागद्वेष से मुक्त कर उनके चित्त को मधुमती भूमिका पर ले जाते हैं। जहा वितक की सत्ता नही रहती। दूसरे शब्दो म वस्तु वस्तु का सम्बन्ध और वस्तु के सम्बन्धी इन तीनो के भेद का अनुभव तिरोहित हो जाता है। सभी वस्तुएँ सुखकर बन जाती हैं। कहने का तात्पय यह कि नाट्यकार द्वारा अनुभूत आनन्द नाट्यकृति के माध्यम स अभिनय द्वारा अनुकर्ताओ के सहयोग स सहृदय सामाजिको को मधुमती भूमिका मे ले जाता है जहा व ब्रह्मानन्द सहोदर रस की अनुभूति करते है।

पर अवलम्बित तथा देशकाल सापेक्ष अनुभितिया को भी बाधक माना है।[1] नाटककार का निजी सुख दुख की अनुभूतिया म ही रमा रहना भी रस विघ्न का कारण बनता है। प्रतीति के उपाया की क्लिष्टता भी रस विघ्न मानी जाती है।[2] अप्रधानता अर्थात् नाटक म अप्रधान घटनाओ या चरित्रो का अधिक चित्रण अथवा स्थायी भावो के अतिरिक्त अन्य विभावादिको का गहन वर्णन इस विघ्न का कारण बनते है। सशययोग भी एक रस विघ्न माना गया है। नाटक के अन्त मे सामाजिको के हृदय म किसी भी प्रकार का शका नही रहनी चाहिये। ये विघ्न रस निष्पात म बाधक सिद्ध होते हैं। आचार्य मम्मट न रस दोपो का अधिक विस्तृत वर्णन किया है।

रस दोप

आचार्य मम्मट न स्व शब्द वाच्यत्व, कष्ट कल्पना परिपथि रसाग (परिग्रह) उसकी पुन पुन दीप्ति, रस का अकाण्ड कथन, रस का अकाण्ड छेदन अगभूत रस की अतिवृद्धि अनुसधान या अगी की विस्मृति प्रकृति विपय और अनगवर्णन दस रस दोप माने है। नाटक म रसनिष्पत्ति व्यजना द्वारा होनी चाहिये, अभिधा के द्वारा नहीं। रस का नाम विपय वर्णन म नही आना चाहिये। यदि आ जावे तो उसे स्वशब्द वाच्यत्व दोप कहते हैं। सचारी भावो की स्वशब्दवाच्यता भी उसी दोप के अन्तर्गत मानी जाती है। जहा विभाव और अनुभाव का स्वरूप स्पष्ट न हो वहा कष्ट कल्पना दोप माना जाता है। परिपथिरसाग (परिग्रह) दोप तब होता है जबकि प्रस्तुत रस विरुद्ध विभाव या अनुभाव का वर्णन किया जाता है अर्थात् जिस रस का वर्णन करना हो उसकी विरोधी भावनाओ का वर्णन या विरोधी सामग्री का चित्रण किया जाता है। यथा शृगार रस वर्णन म शान्त रस के विभाव या अनुभाव के चित्रण म विरुद्धता रस दोप-परिपथिरसाग दोप माना जाता है। इसी प्रकार एक रस का पूर्ण परिपाक हो जाने के पश्चात् उसका पुन वर्णन पुन पुन. दीप्ति रस दोप के नाम से विख्यात है। जहा प्रस्तुत को छोड़कर अप्रस्तुत रस का विवेचन किया जाता है वहा अकाण्ड कथन रस दोप माना जाता है। वेणीसहार नाटक के दूसरे अक म अनेक योद्धाओ के प्राणान्त के समय दुर्योधन का भानुमती से प्रणयालाप इसका उदाहरण है।

आनदवर्धनाचार्य ने एक रस के वर्णन के समय बीच म ही उसे रोक कर अन्य रस वर्णन प्रारम्भ को अनवसर प्रकाण्ड विच्छिन्न[3] दोष नाम से अभिहित

---

1 'स्वगत तत्व परगततत्व नियमेन देशकाल विशेषा वेश को बाधक माना है।

2 प्रतीत्युपाय वक्लृप्तस्फुटत्वा भाव को रस विघ्न माना है।

3 ध्वन्यालोक ३ १९

किया है। उदाहरण स्वरूप हम भवभूति विरचित महावीरचरित के द्वितीय अंक को ले सकते हैं। यहाँ राम का युद्धोत्साह के बीच ही कंकण मोचन प्रस्थान प्रस्ताव वीर रस में विघ्न का कारण है। अप्रधान पात्रों को प्रधान पात्रों से अधिक महत्व देना दास दासियों को नायक नायिका से अधिक सुन्दर रूप में प्रस्तुत कर देना, अंगभूत प्रतिद्वन्द्वि दोष का कारण बनता है। अनुसन्धान या अंगी की विस्मृति अर्थात् रचना में प्रमुख रस का विस्मरण भी दोष कहलाता है। प्रकृति विपर्यय भी एक रसदोष है जिसका अर्थ है नायक की चेष्टाओं या उसकी स्वभाव जन्य, जन्मजात और वंशानुकूल प्रकृति के विपरीत चित्रण करना। जिस प्रकार का नायक होता है[1] उसकी प्रवृत्ति के प्रतिकूल चित्रण इस दोष में अन्तर्गत आता है। इन रसदोषों के क्रम में अन्तिम रस दोष है अनंगवर्णन। इसका तात्पर्य यह है कि अमुख्य रस मुख्यरूप से वर्णन या अन्य ऐसे रस का वर्णन, नहीं किया जाना चाहिए जो प्रधान रस में सहायक न हो। उदाहरणार्थ कर्पूर मंजरी के प्रथम जवनिकान्तर में नायक नायिका के वसन्त वर्णन की उपेक्षा करके चारण वर्णित वसन्तवैभव को महत्ता देना इस रस दोष का कारण बना है।

इस विवेचन से यह स्पष्ट निष्कर्ष निकाला जाता है कि अंगभूत या प्रधान रस को किसी प्रकार से आघात नहीं पहुँचाया जाना चाहिए। मुख्य रस से बढ़ कर अंगीरस का वर्णन नायक नायिका से अधिक गौण पात्रों का चित्रण मुख्य रस को बीच में ही छोड़ देना अथवा उसे पूर्णता प्राप्त कर लेने पर भी चलाते रहना आदि रस दोषों के कारण बनते हैं। रस दोष के समान रस विरोधी भी आनन्द प्राप्ति में बाधक बन जाता है।

रसविरोध

(१) कुछ रस स्वभाव से ही विरोधी होते हैं। यह विरोध उनके स्थायी भावों के आधार पर माना गया है। है भी यह उपयुक्त एवं मनोवैज्ञानिक हर्षोत्पादक। सुखद मरने पर रुदन और दुखकारी घटनाओं के समय हास्य असंगत ही कहा जायेगा। अतएव करुण और हास्य में रस विरोध है। इसी भाँति हास्य और भयानक भी एक दूसरे के विरोधी हैं। *यहाँ यह उल्लेख अप्रासंगिक न होगा कि शान्त के विरोधी* शृंगार, हास्य और रौद्र तो हैं परन्तु इन तीनों का विरोधी शान्त नहीं है। इसी भाँति रौद्र का विरोधी तो हास्य है परन्तु हास्य का विरोधी रौद्र नहीं है इसी भाँति शृंगार का विरोधी वीर है परन्तु वीर का विरोधी शृंगार नहीं है।

(२) विरोधी रसों का एक ही आलम्बन और एक ही आश्रय से सम्बन्धित

---

1 नायक के भेदों का वर्णन यथास्थान पृ० ५०–१०० पर किया गया है।

रहना स्थिति विरोध का कारण बनता है । एक दूसरे रस की अनुभूति म बाधा डालने वाले रसो का एक साथ चित्रण ज्ञान विरोध कहलाता है । यहा यह उल्लेख नीय है कि विरोधी रसो के एक साथ चित्रण से रसाभास हो जाता है ।

रसाभास

आचार्यों का मत है कि जहां रस की पूण प्रतीति न होकर रस का आभास मात्र मिल कर रह जाता है, वहा रसाभास माना जाता है । अभिनवगुप्त ने ध्वन्यालोक लोचन म उसे शुक्तौ रजताभासवत् अर्थात् सीप म रजत के आभास के समान बताया है। विद्वानो का एक दल रसाभास को रस का विरोधी मानता है ।[1] दूसरा दल यह सिद्ध करने का प्रयास करता है कि रसाभास म केवल आभास रहता है अर्थात् रस का पूण अभाव नही रहता है ।[2] चाहे जो कुछ हो रसाभास की स्थिति म पूणरसार्द्रत्व तो नही ही हो पाता है । फलत वहा पूण रसनिष्पत्ति के आनन्द का तो अभाव ही रहता हैं । अतएव रसाभास न होने देना वाञ्छनीय माना गया है। विरोधी रसो का एक साथ चित्रण तो रसाभास का कारण बनता ही है परन्तु रसनिष्पत्ति के लिए अपेक्षित औचित्य का अभाव भी रसाभास का कारण बनता है । शृगार रस मे पति के अतिरिक्त अन्य नायक मे या अनेक नायको म रति होना सामाजिक अनौचित्य है जो शृगार रसाभास का कारण बनता है । इसी प्रकार तरुलताओ, निरिन्द्रिय वस्तुओ पशुपक्षियो और गुरुपत्नी आदि की काम क्रीडाओ के चित्रण म शृगार रसाभास उत्पन्न होता है ।

उपरिनिर्दिष्ट रस विरोध रस दोष और रस विघ्न सभी अवस्थाओ म रसानुभूति म बाधक ही नही रहते है । आचार्यों ने इनके परिहार की भी सम्यक और मनोवैज्ञानिक व्यवस्था दी है ।

रसदोष परिहार

रस विरोध तभी उत्पन्न होता है जब कि दो विरोधी रस एक ही आलम्बन म आश्रित हो एव वे इतन सन्निकट हो कि उनमे एक दूसरे की मुख्यरूप से अगी रस की अनुभूति मे बाधा उत्पन्न होती हो। विरोधी रसो के आलम्बन म भिन्नत्व प्रस्तुत कर देने से रस विरोध एव तज्जनित रसदोष का परिहार हो जाता है । विरोधी रसो के स्थान परिवत्तन स भी रस दोष का अन्त हो जाता है । यथा शृगार और वीर में विरोध हैं किन्तु शृगार और हास्य म एव हास्य और वीर मे विरोध नही है । अतएव शृगार के पश्चात् हास्य और तत्पश्चात् वीर रस की उपस्थिति रस दोष का कारण नही बनसकगी । स्मृति के कारण भी रस दोष परिहार हो जाता है । अर्थात् जब आलम्बन

---

1 हिन्दी साहित्य कोष पृ० ६३४

2 वही ।

पूर्व वर्णित रस का विस्मरण कर जावे तब वहां विरोधी रस संचार क्षम्य है। किसी प्रमुख रस के अन्तगत भी विरोधी रस का सचरण भी रस भाव परिहार का उपाय है। इन सब का वर्णन करने के पश्चात् यह ध्यान देन योग्य है कि अनुचित निबन्ध से बड़ा दोष कोई नही है। अतएव नाटक म काव्य दोषो का परिहार भी आवश्यक है। नाटक काव्य का (प्रमुख) अग है अतएव इस दृष्टि से भी उस काव्य दोष रहित होना चाहिये। नाटक म श्रुति कटुत्व, ग्राम्यत्व, अश्लीलत्व च्युत सस्कृति, अप्रतत्व दुष्क्रमत्व, अप्रतीतत्व न्यूनपदत्व अधिक पदत्व, निहितार्थ सन्दिग्धत्व क्लिष्टत्व, समाप्त पुनरात्त, पुनरुक्ति एव परित्रमण आदि दोषो का बहिष्कार करना चाहिये साथ ही ओजा माधुर्य, प्रसाद आदि गुणो व अलकारो को भी यथावत् स्थान प्राप्त होना चाहिये।

निष्कर्ष

उत्तम नाट्यकृति के लक्षण भरतमुनि ने शुभ नाट्यकृति के लिये मृदु व ललित पदावली गूढ शब्दार्थहीनता सब सुगमता युक्तिमत्ता, नृत्य, उपयोग क्षमता व रस के अनेक स्रोत बहाने की शक्ति को वाछनीय माना है। वास्तव म लक्षण ग्रन्थो के अनुकूल नाट्य कृति म वस्तु नता और रस की दृष्टि से कोई दोष नहीं होना चाहिये। भरतमुनि का तो आदेश है कि अग्नि उतनी शीघ्रता पूवक नही जला सकती जितनी कि शीघ्रता पूर्वक क्षति नियम-प्रतिकूल रचना से होती है। अर्थात् नाट्यकृति मे शास्त्र-सम्मत गुण होने चाहिये। साथ ही उनका यह भी निर्देश है कि नाट्यकार को मानव जीवन का अध्ययन कर नाट्यकृति का निर्माण करना चाहिये।[1] तात्पर्य यह कि उत्तम नाट्यकृति म मानवीय भावो की अभिव्यक्ति वाछनीय है। रस विघ्नो मे वर्णित प्रति पत्ति म अयोग्यता नामक विघ्न भी इस कथन का समर्थन करता है। यही नही शास्त्रानुकूल नाट्य वही कहला सकता है जिसम पात्रो की विभिन्न अवस्थाओ का हाव भाव युक्त चित्रण किया गया हो।[2] उन्होंने यह भी कहा है कि जिस किसी विषय के बारे म शास्त्र म विचार नही किया गया है उसका वर्णन परम्परा के नियमो का पालन करते हुए करना चाहिये।[3] अर्थात् शास्त्रसम्मत परम्परागत नियमो का पालन करती हुइ मानव जीवन का चित्रण प्रस्तुत करने वाली नाट्यकृति ही श्रेष्ठ माना जाती थी। उसको वेद आध्यात्म और सामाजिक परीक्षक मान गये थे। जिनमे सामाजिको का स्थान सर्वोपरि था।[4]

---

1 नाट्यशास्त्र (डॉ० घोष द्वारा अनुदित) पृ० २१/१२८
2 ना० शा० (डा० घोष) XXI—१२८
3 लोक धर्मी नाट्यविद्या इसका प्रमाण है।
4 ना० शा० XXI–१२७ एव XVI–१२०

सस्कृत नाटकों की सुखान्तता | 3

दुखान्त नाटकों का अभाव

सस्कृत नाटकों की प्रमुख विशेषताओं मे से एक विशेषता है, दुखान्त नाटकों का अभाव। केवल सुखान्त नाटकों का अस्तित्व। इसका कारण यह है कि भारतीय मनीषियों ने एहिक पदार्थों की व्याख्या करते समय आध्यात्मिक तत्त्वों की कथमपि अवहेलना नहीं की है। ससार के रचनाक्रम में उन्होंने ऋत को पाया है। वे ससार की सम्पूर्ण क्रियाओं और कार्यक्रमों में एक सामजस्य देखते हैं। अतएव जीव का उद्देश्य श्रेय धर्म और मोक्ष प्राप्त होना है। जीवन के अन्त के पश्चात् भी अवश्य ही, आनन्द की कामना मोक्ष की सम्भवता में अन्तर्निहित रहती है। भारतीय महर्षियों का—

सुन्दर से नित सुन्दर तर
सुन्दरतर से सुन्दर तम
सुन्दर जीवन का क्रम रे
सुन्दर सुन्दर जग जीवन[1]।

में अटल विश्वास रहा है। भारतीय दर्शन आशावादी रहा है। हिन्दू आचार शास्त्र कभी भी पाप की विजय नहीं देख सकता। अतएव दार्शनिक एव लोक व्यवहार की दृष्टि से यहाँ अन्त में सुख समृद्धि और धर्म की विजय ही दिखायी जाती है।

भारतीय सामाजिक व्यवस्था में सतोष परम सुखम् आदर्श माना गया। जहाँ पाश्चात्य भावक गण आवश्यकता ही आविष्कार की जननी है, कहते हैं वही भारतीय दर्शन अपरिग्रह के सिद्धान्तों का अनुसरण वाछनीय मानता है। अत आज के पाश्चात्य समस्या नाटकों जैसे नाटकों की उत्पत्ति के अनुकूल यहाँ वातावरण ही नहीं था। इसलिये यहाँ दुखान्त और समस्या प्रधान नाटकों का नितान्त अभाव रहा था। हाँ यहाँ जीवन की शाश्वत समस्याओं और चिरन्तन पहेलियों को सुलझाने का

---

1 पंत—गुंजन

प्रयास किया गया था।[1][2] नाटककार का उद्देश्य मानव जीवन के स्तर को ऊपर उठाना, भावनाओं का संस्कार करना और रुचि परिमार्जन करना था। साधारणीकरण उपयुक्त समझा जाता था। व आदर्शवाद का अनुकरण करते थे, आदर्श के दर्शन करवाकर उचित राह का निर्देश करते थे। अतः यहाँ सदैव सुखान्त नाटकों की ही रचना होती रही।

शास्त्रीय दृष्टि से नाटक ब्रह्मानन्द सहोदर रस की निष्पत्ति प्रदान करता है। नाटक का उद्देश्य अर्थ, धर्म या काम की प्राप्ति रहा है। कार्यव्यापार की अवस्थाओं अर्थ प्रकृतियों तथा सन्धियों की व्यवस्था के अनुसार नायक प्रारम्भ से ही अपने उद्देश्य की ओर अग्रसर होता है। वह बाधाओं व विपत्तियों को पार करता हुआ सफलता प्राप्त करता है। अतः शास्त्रीय दृष्टि से भारतीय साहित्य में दुखान्त नाटकों की सृष्टि हो ही नहीं सकती थी। जहाँ अरस्तू ने काव्यशास्त्र में दुखान्त नाटक का गम्भीर चरित्र का अनुकरण व सुखान्त नाटक को निम्न स्तर के चरित्र का अनुकरण माना है वहीं यहाँ के शास्त्रीय नियमों ने दुखान्त नाटकों की रचना की सम्भावना ही नहीं रखी। यहाँ तो नाट्यशास्त्र में शान्त रस तक को स्थान नहीं दिया गया है और शृंगार को रस राज माना है।

---

1 इस सम्पूर्ण संसार (त्रिलोक) के भावों (अवस्थाओं) का अनुकीर्तन ही नाट्य है। ना० शा० १/१०४
अनेक भावों से युक्त, अनेक अवस्थाओं से परिपूर्ण तथा लोक के चरित्रों के अनुकरण वाला यह नाट्य मैंने बनाया है। वही १०८
यह उत्तम, मध्यम तथा अधम मनुष्यों के कृत्यों का समुदाय है हितकारी उपदेशों को देने वाला है (और धैर्य क्रीडा और सुख आदि उत्पन्न करने वाला है) वही १७६ यह नाट्य दुखित, असमय शोकार्त तथा तपस्वियों को भी समय पर शान्ति प्रदान करने वाला है। वही १८०
न कोई ऐसा ज्ञान है, न शिल्प है, न विद्या है, न कला है, न योग है न कर्म है जो इस नाट्य में न मिलते हों। वही ८७
यह नाट्यवेद, विद्या और इतिहास के आख्यानों का स्मरण करने वाला तथा समय पाकर विनोद करने वाला होगा। वही १८६

2 The condition of the world arising from the happiness and misery and connected with activity of various people should find place in the Nattak. x x x And the human nature with its joys and sorrows depicted through the means of representations such as Gestures is also called drama Natya Shastra XXI-118—120 translated by Dr M M Gosh First Edition

इस प्रकार जब पाश्चात्य आलोचक पौर्वात्य नाटका मे त्रासदी का अभाव पाते है तो व इसकी सराहना क स्थान पर कटु आलाचना करत हैं जो भ्रामक एव ऐतिहासिक, शास्त्रीय नैतिक व समाजशास्त्रीय दृष्टिया की अनिभिज्ञता की द्योतक है।

उरूभगु

भासकृत उरूभगु नाटक क अन्त म दुर्योधन की मृत्यु हा जाती है उसम भीम द्वारा दुर्योधन की जघा तोडी जाती हैं। अतएव महाभारत स अपरिचित व्यक्ति के लिय तो यह दुखान्त हो सकता है पर[1] भारतीय सामाजिका के लिय यह सुखकर ही है। इसम धम की अधम पर विजय प्रदर्शित की गई है। धम की विजय म सुख ही प्राप्त होता है। मनोवज्ञानिक दृष्टि से कोई भी सामाजिक पापी स तादात्म्य नही कर सकता अतएव अन्त म सुख की सृष्टि हाती है। भास के युग तक मच पर वध दिखाना अनुपयुक्त नही माना जाता था या कम स कम भास न उस वाछनीय माना है।[2] अत भीम और कृष्ण पक्ष की विजय म सत्य की जय हाती है। इस वेणी सहार क समान सुखान्त ही समझना चाहिये।

इतना ही नही, मरत समय दुर्योधन स्वय अपनी त्रुटिया स्वीकार कर लेता है और अपन पुत्रा को पाडवा क अनुकूल बनने की शिक्षा दता है। अत जब मरनवाला स्वय मृत्यु को उपयुक्त मानता ह वह उसे अपन कार्यों का परिणाम मानता है तब दुख कस हो सकता है ? जब बलदेवजी भीम को मारने को उद्यत होते है तब दुर्योधन कहता है— भीम की प्रतिज्ञा पूण हुई मेरे सौ भाई स्वग चल गय और मैं भी जान का उद्यत हू। वह बलदेवजी से पाडवा का क्षमा करन को कहता है। इसमे यह स्पष्ट ज्ञात होता है कि कौरवा का सुख प्राप्त हुआ है। स्वग म अधिक सुख कहा मिल सकता है ? और भीम का प्रतिज्ञा भी पूरी हुई है। अत यह दुखान्त नही माना जा सकता। फिर भी इस प्रकार का वध भी अकित करन वाल नाटक सस्कृत साहित्य म विरल हा हैं। उत्तर रामचरित भी एक एसा ही नाटक है।

उत्तर रामचरित

उत्तर रामचरित अपन मध्य म अत्यन्त करुणापूर्ण है। भवभूति ता करुणा की विभूति है। इस नाटक क अ त म राम और सीता का मिलन दिखाया गया है। अन्त म किसी प्रकार का विषाद या क्लेश नही रहता। सवत्र उल्लास और आनन्द का साम्राज्य छा जाता है। अतएव यह सुखान्त हा है। ऐसी ही अवस्था नागानन्द की भी है।

---

1 डॉ० कीथ–सस्कृत ड्रामा–सुखान्त–दुखान्त भावना–विवेचन पृ० १३५ एव २००

2 दूत वाक्य व्यायोग और बाल चरित् म भी भास ने वध दिखाए हैं।

सगीत की महायता स होना चाहिए।[1] इसलिय ग्रग्निपुराण का कथन है कि इसके प्रथम नौ भाग[2] साधारण ग्रौरतों, बच्चा व मूर्खों के लिए थे। य ग्राज छविगृहा म चित्र के प्रारम्भ होन से पूव जो सगीत सुनाई देता है उससे तुलनीय है।[3] तदुपरान्त पर्दा उठने पर नृत्य व सगीत का ग्रायोजन होना था, उसम वाद्य यन्त्रो का सहयोग होना था ग्रौर भद्रक राग या वधमान को ग्रपनाया जाता था। इसके बाद पूवरग म उत्थापना, परिवतन, नादी मुष्कापकृष्टा, रगद्वार, चारि, महाचारि, त्रिगत ग्रौर प्रारोचन को क्रमश स्थान मिलता था। इनकी नाट्यशास्त्र के पचम ग्रध्याय म विस्तारपूवक व्याख्या की गई है। नाट्यशास्त्रानुसार पूवरग विस्तृत या लघु हो सकता है।[4] इससे यह ध्वनित होता है कि समय के ग्रनुसार ही काय होता था। यदि सब सामाजिक ग्रथवा मुख्य दशक न ग्रा पाते तो लम्ब पूवरग ग्रागन्तुको का मनोरञ्जन करते थ ग्रन्यथा लघु पूवरग स ही काम चलाकर शीघ्र ही नाटक प्रारम्भ कर दिया जाता था। इग्लण्ड म भी छोटे छोट प्रहसन दिखाकर सामाजिका को शान्त रखने की प्रथा थी। कर्टेन रेजम ऐसी व्यवस्था के प्रतीक है।

---

1 ना० शा० ५/८ ११

2 पूवरग के पर्दे के बाहर होने वाले भेद

(क) उत्थापना उत्थापना से नांदी प्रवक्ता सूत्रधार मच पर ग्राता है।

(ख) परिवत्तन परिवतन में सूत्रधार विभिन्न देवी-देवताग्रो की स्तुति करता है।

(ग) नान्दीपाठ विस्तृत विवेचन यथास्थान किया गया है।

(घ) सुष्कापकृष्टा ध्रुव में जजर प्रशसा होती थी। 'यथा डिंगल २ झडे २ जय बुक य लित के ते ते जा।'

(ङ) रगद्वार एव चारि ग्रौर महाचारि का उल्लेख यथा स्थान किया गया है।

(च) ग्रन्त म सूत्रधार द्वारा, वस्तु के फलागम की ग्रोर सकेत किया जाता है जिसे प्रारोचन या पूव वचन कहते हैं। ५–२६–३० ना० शा०

3 प्रत्याहार मे वाद्ययन्त्रों को यथा स्थान रखा जाता, ग्रवतारणा में गायक ग्रपना स्थान ग्रहण करते ग्रौर ग्रारम्भ मे वे राग ग्रलापना प्रारम्भ करते। ग्राश्रवण म वाद्य यत्रों को ग्रावश्यकतानुसार रख देते। ना० शा० ५–१८ वक्त्रपाणि मे विभिन्न वत्तियों का पूर्वाभिनय होता था। परिघट्टन मे हस्त सचरण होता तो मागसारित में ढोलक ग्रौर वाद्ययन्त्रा से सगीत सृष्टि होती थी। ग्रन्त मे ग्रासरित मे कलापट्ट (टाइम फ्रेकशन) होता। ना० शा० ५–२१

4 वही ५–७

नान्दी पाठ

नान्दी पाठ पूर्वरंग का ही एक अंश होता था। नाट्यशास्त्र में नान्दी के लिए कहा गया है कि—

"देवताओं, ब्राह्मणों और राजाओं के आशीर्वचन से युक्त नाटक के प्रारम्भ में नान्दी नित्य पढ़े जाते हैं और उन सब में सबका देवताओं, ब्राह्मणों और राजाओं को (जिनमें कवि भी शामिल हैं) आनन्द की उपलब्धि होती है अतएव इसे नान्दी कहते हैं। सूत्रधार को चाहिए कि वह नाटक के प्रारम्भ में १२ या ८ पदों (शब्दों या वाक्यों) वाला अलंकृत नान्दी मध्यम स्वर से पढ़े।[1]

यूनानी नाटकों के कोरस में सब पात्र भाग लेते थे और निजी सम्बन्ध स्थापित करना उनका उद्देश्य होता था। भारत में तो नान्दी में सभी पात्र भाग नहीं लेते थे—नाट्यशास्त्र का तो आदेश है कि नान्दी पाठ सूत्रधार द्वारा होना चाहिए।[2] आगामी आचार्यों का मत है कि नान्दी पाठ सूत्रधार या अन्य किसी पात्र द्वारा भी सकता है।[3] चाहे जो कुछ हो, यूनानी नाटकों के समान सभी पात्र नान्दी में भाग नहीं लेते थे।

---

1 भरतमुनि कृत ना० शा०, अनुवादक श्री भोलानाथ शर्मा ३/२४ एव ५/१०७

2 ना० शा० ५/१०७–१०८

3 देखिये डॉ० ए० बी० कीथ संस्कृत ड्रामा पृ० ३४१–३४४

अंक-विभाजन एवं अर्थोपक्षेपक

4

अक विभाजन सस्कृत रूपक की अपनी निजी और अति प्राचीन विशेषता है। यूनानी नाटको के असमान रूप से सस्कृत रूपक अका मे विभाजित होते थे। नाट्यशास्त्र के अनुसार अक रूढि शब्द है।[1] रूपक के प्रधान खड को अक कहते हैं। यह विभिन्न भावों और अवस्थाओ को शास्त्रीय पद्धति से रूपक के माध्यम द्वारा सवेद्य बनाता है। प्रत्येक अक म बिन्दु का विस्तार होना चाहिए। इसम बीज की समाप्ति नही होनी चाहिए एव वस्तु में बिन्दु की ओर बराबर सकेत होना चाहिए। जो अक नायक के कार्यों से सीधा सम्बन्धित हो वह अधिक विस्तृत नही होना चाहिए। अक म नायिका, प्रमुख व्यक्तिया, अामात्यों और साथवाह आदि के भावा का प्रकटीकरण आवश्यक समझा गया था।[2] नाट्यशास्त्रकारा का मत है कि अक में जो भी पात्र आए वह बीज के विकास और रसोद्रेक म सहायक बन कर ही प्रस्थान करे। जब कोई व्यक्ति कायवश दूर देश गमन करे तो अक को वही समाप्त कर देना चाहिए। नाटक व प्रकरण के अक का नायक से अत्यन्त निकट सम्बन्ध आवश्यक था। नायक के अतिरिक्त इसमे दो तीन और पात्र होते थे परन्तु अक के अत में उनका बहिर्गमन वाछनीय था।[3,4]

नाटक म सामान्यत पाच से दस तक अक होते थे।[5] दस से अधिक अकों वाला रूपक महा नाटक कहलाता था, उदाहरणाथ हनुमान महा नाटक। किसी किसी नाटक मे अका के नाम भी दिये जाते थे जैसे मृच्छकटिका मे। कई रूपक व उप रूपक एक एक अक वाले ही होते थे यथा भाण, व्यायोग, वीथी, उत्कृष्टाक व

1 प्रतिमा नाटक पृ० ५ सपादक प० परमेश्वरानन्द शास्त्री एव विजयानन्द शास्त्री
2 ना० शा० अनुवादक डॉ० घोष २०, १३, १८ प्रथम सस्करण
3 दशरूपकम् ३, ३६, ३७
4 डा० बलदेव उपाध्याय, सस्कृत साहित्य का इतिहास पृ ४२२ चतुथ सस्करण।
5 नाटक के अको के विस्तृत विवेचन के लिए देखिए रूपक भेदों में नाटक।

गोष्ठी आदि । रूपक का अंक विभाजन वस्तु विकास एवं विस्तार भार से भी सम्बन्धित रहता था । वस्तु संगठन गोपुच्छ सम होना और अंतिम अंक का उत्तरोत्तर छोटा होना अंकों को वस्तु विकास से सम्बन्धित सिद्ध करता है । इसी प्रकार से दस से अधिक अंक वाले नाटक को महानाटक अंकों को वस्तु विस्तार से सम्बन्धित सिद्ध करता है ।

जब घटनाएं अतिविस्तृत होती तो उनमें से गौण घटनाओं का उल्लेख मात्र कर दिया जाता था । जो घटनाएँ वस्तु से व्यवहित सम्बन्ध तो न रखती परन्तु जिनका कार्यव्यापार में सहयोग आवश्यक होता उनकी सूचना मात्र दे दी जाती थी । इन सूचना देने वाले दृश्यों को सूच्य या अर्थोपक्षेपक कहते हैं ।

विष्कभक

जहाँ दो मध्यम या निम्न श्रेणी के पात्र भूतकाल की घटनाओं का अथवा भविष्य की कथा की ओर संकेत करते हैं, वहाँ विष्कभक माना जाता है । भास के नाटकों में विष्कभक में तीन पात्र भी पाये जाते हैं । इन घटनाओं से अवगत होना वस्तु विकास के लिये आवश्यक होता था । आर० वी० जागीरदार कहते हैं कि नाटकीय विकास के प्रारम्भिक दिनों में सूत्रधार ही आकर घटनाओं का उल्लेख व स्पष्टीकरण करता था । कालान्तर में सूत्रधार के स्थान पर विष्कभक का प्रचलन हुआ ।[1] विष्कभक का प्रयोग वहीं हुआ करता था जहाँ भावों को शीघ्र उद्वेलित करना होता था ।

विष्कभक दो प्रकार का होता है शुद्ध और मिश्र या संकर । संकर को संकीर्ण विष्कभक भी कहते हैं । जब मध्यम श्रेणी के पात्र संस्कृत का प्रयोग करते हैं तब उसे शुद्ध विष्कभक कहते हैं । जहाँ मध्यम तथा निम्न श्रेणी के पात्र हों एवं भाषा में संस्कृत के साथ प्राकृत का भी प्रयोग होता है तो उसे मिश्र, संकीर्ण या संकर विष्कभक कहते हैं । आधुनिक नाटकों में इस प्रकार का भेद अनावश्यक समझा जाता है ।[2] शुद्ध विष्कभक का उदाहरण मालतीमाधव के पंचम अंक में प्राप्त होता है एवं मिश्र का प्रतिमा नाटक के द्वितीय अंक में । नाटक के प्रारम्भ में केवल इसी अर्थोपक्षेपक का प्रयोग हो सकता था । विष्कभक के समान प्रवेशक में भी पूर्व अथवा आगे आने वाली घटनाओं की सूचना दी जाती थी ।

प्रवेशक

विष्कभक तो नाटक के प्रारम्भ में भी हो सकता था परन्तु प्रवेशक नाट्य के

---

1 आर० वी० जागीरदार ड्रामा इन संस्कृत लिटरेचर, वस्तु विकास का विवेचन
2 राजेन्द्रसिंह गौड़ हमारी नाट्य साधना पृ० ४१ प्रथम संस्करण

प्रारम्भ म नही आ सकता था। इसमे निम्न श्रेणी के ही पात्रो को स्थान मिलता था तथैव भाषा प्राकृत ही होती थी। प्रवेशक शेषाथ की ओर सकेत किया करता था। स्वप्नवासवदत्त म तीन प्रवेशक हैं तृतीय, चतुथ और पचम अको मे। यह शेषाथ की ओर सकेत करता था एतन्य इसे केवल भरती की वस्तु नही माना जा सकता। उनका यह भी मत है कि भवभूति के अतिरिक्त अन्य नाटककारो मे विष्कभक और प्रवेशक के बारे म भ्रम था।[1] कालिदास के शकुतला नाटक मे दोनो उदाहरण[2] उनके कथन का खण्डन करते हैं।

चूलिका

सभी अवस्थाओ म पात्रो के आगमन की सूचना मच पर नही दी जाती थी। कभी कभी पात्र आगमन की सूचना नपथ्यगृह स भी दी जाती थी। इस प्रकार के प्रवेश को चूलिका कहते हैं।[3,4] महावीर रामचरित् मे राम द्वारा परशुराम पर विजय प्राप्त करने की सूचना इसका उदाहरण है। रसार्णव सुधाकर मे खडचूलिका का भी उल्लेख मिलता है। इसमे मच पर खडा हुआ पात्र नैपथ्य स्थित पात्र से बातें करता है। बाल रामायण का सातवा अक उदाहरण स्वरूप देखा जा सकता है।[5]

अक मुख और अकास्य

जब किसी अक के अन्त म पात्र आने वाले अक की घटनाओ की ओर सकेत करते हैं तब उस अकमुख कहते हैं। विश्वनाथ का मत है कि यह सम्पूर्ण घटनाचक्र की ओर सकेत करता है। इसके द्वारा अभिनीत अक की कथा के साथ अभिनय अक की सगति मिला दी जाती है।

अकावतार

जहा अकास्य म आगामी अक की सूचना ही दी जाती है वहा अकावतार म पूव अक के पात्र अगले अक म पुन आकर उसी काय-व्यापार को आगे बढाते हैं।[6]

---

1 आर० वी० जागीरदार ड्रामा इन सस्कृत लिटरेचर देखिए विष्कभक और प्रवेशक का विवेचन। प्रथम सस्करण
2 हमारी नाटय साधना पृ० ४१
3 दशरूपक (१, ५५)
4 नपथ्य मे किसी रहस्य की सूचना देना चूलिका कहलाता है। इस प्रकार की सूचना पर्दे के पीछे से दी जाती है। हमारी नाटय साधना, पृ० ४१
5 रूपक रहस्य पृ० ८१
6 वही पृ० ८२

उपयुक्त अवरा म शून्य राडो क अतिरिक्त संस्कृत नाट्य साहित्य म गर्भांक का भी प्रयोग हुआ है।[1]

गर्भांक

गर्भांक का प्रयोग अक के बीच अक के रूप म नायक के उत्कर्ष की वृद्धि निमित्त किया जाता था। इसम रगद्वार, आमुख आदि का स्थान मिलता था एव यह कथा विकास म सहायक होता था। नाटक म जो दूसरा नाटक दिखाया जाता है वह गर्भांक म प्रदर्शित किया जाता था। प्रिय दर्शिका, वत्सराज उत्तर रामचरित और बाल रामायण मे इसके उदाहरण पाए जाते हैं। नाटक का अन्त भरत वाक्य द्वारा होता था।

भरतवाक्य

भरत वाक्य म विश्व कल्याण, मानव कल्याण, राज कल्याण एव शब्द म सब भूतहितस्य की आकाक्षा प्रकट की जाती थी। इसम तत्कालीन विपत्ती या दुर्गुण विशेष को भी दूर करने की प्रार्थना की जाती थी। यथा, भास ने तो सम्भवत राजसिंह नामक राजा की ही नहीं सभी राजाओं की श्री वृद्धि की कामना की है।[2] भरतवाक्य के नामकरण के बारे मे निम्नांकित मत प्राप्त होते हैं।

(क) नाटक का आयोजन करने वाले नट विशेष का वाक्य अर्थात् सूत्रधार की कामना जो नायक अथवा अन्य प्रमुख पात्र की भूमिका म कार्य करने वाले नट द्वारा प्रकट की जाती है। यहाँ भरत का सम्बन्ध नट से जोडा गया है।

(ख) भरतमुनि नाट्यशास्त्र क रचयिता की ओर स विश्वकल्याण की भावना का प्रतीक वाक्य जो हर नाटक का अग बन गया है।

चाहे जो कुछ हो, भरतवाक्य मे कल्याण भावना आवश्यक और मूलरूप से अन्तर्निहित रहती है।

रगद्वार

नान्दी के उपरान्त सूत्रधार दूसरी कविता का पाठ करता और जजर को नमस्कार करता था। यही से शब्दों व भावों का प्रदर्शन होता था अतएव इसे रगद्वार ही कहते थे। विश्वनाथ का कथन है कि विक्रमोर्वशी म नान्दी नहीं रगद्वार ही है।

---

1 रूपक रहस्य पृ० १५७

2 यथा रामश्च जनक्या बन्धुमिश्च समागत ।
तथा लक्ष्म्या समायुक्तो राजाभूमिं प्रशास्तु न ॥
प्रतिमा १५

अभिनव गुप्ताचाय इससे असहमत हैं भास के नाटको म नान्द्यान्ते प्रविशयति सूत्रधार के बाद जो कविता पाठ मिलता है उसे हम रगद्वार कह सकते हैं। अकित आदेश के अनुसार यह नान्दी के बाद की कविता है, जिसकी सज्ञा रगद्वार होती है। इसके पश्चात् चारिनृत्य होना था।

चारि और महाचारि

चारि का उद्देश्य पावती को व भूतो को प्रसन्न करना होता था।[1] इसके अन्त म पूव वचन कथा की ओर सकेत करता था। तब सूत्रधार अपने सहायक के साथ मच को छोड देता था। इस पर स्थापक पदापरण कर नाटक की स्थापना करता था। यहा सूत्रधार और स्थापक शब्दो का विवेचन उपयुक्त ही होगा।

सूत्रधार

सूत्रधार को कतिपय पाश्चात्य प्राच्य, आलोचको ने सूत्र को धारण करने वाला माना है। कीथ महोदय उनस सहमत न होते हुए इसे प्रोफेसर की सज्ञा देते हैं। अन्य आलोचको ने इसे इजीनियर कहा है। आर० वी० जागीरदार का मत है कि पौराणिक सूत जो वास्तु कला म दक्ष होता था और जिसका काय राजाओ का परिचय करना होता था, वही नाटको मे सूत्रधार बन गया। वास्तव मे नाटको म तो वह नटो का मुखिया होता था। वह रगशाला के निर्माण म दक्ष कथा सूत्र सगठन म प्रवीण और नटो के नृत्य अभिनय सगीत व अन्य क्रिया कलापो तथा नाट्य नियमो तथा पद्धतियो का ज्ञाता होता था। वह नाटक नाटककार व नायक द्वारा प्रतिपाद्य वस्तु के गुणो की नान्दी द्वारा सूचना देने वाला भी होता था।

स्थापक

स्थापक नाटक की कथा की स्थापना करता था। वह नाटक म बीज अथ प्रकृति, मुखसधि, भारती वृत्ति और वीथिया का प्रयोग करता था[2] यह सूत्रधार के बाद प्रवेश करता और इसकी पोशाक सूत्रधार ज [illegible] ही होती थी। वह नाटक का नाम बताता वस्तु की ओर सकेत करता और प्रस्तावना का प्रारम्भ करता था। कालान्तर म एक ही प्रकार के दो पात्र अनावश्यक समझे गये और स्थापक का अस्तित्व समाप्त हो गया। शास्त्रकारो म भी भरत के अतिरिक्त अन्य गण्यमान्य लक्षण ग्रन्थ कारो ने इसे स्थान नही दिया है। श्रेण्य नाटको म सूत्रधार और स्थापक के अतिरिक्त नटी, मारिष, विदूषक पारिपार्श्विक अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। सूत्रधार की पत्नी को नटी कहते थ। सूत्रधार के सहायक को मारिष कहते थे।

---

1 ना० शा० ५/१७४

2 ना० शा०। १७ १८ डॉ० मनमोहन घोष द्वारा अनूदित।

विदूषक

सस्वत नाटय साहित्य म विदूषक एक महत्त्वपूर्ण पात्र हाना था। इसकी पुष्टि नाटय शास्त्र व नाटय परिपाटी दाना स हाती है। नाटय शास्त्र म उसका विशेष उल्लेख मिलना है। ब्रह्मा ने जब मडप नायक व नायिका की रक्षा के लिए विभिन्न दवताम्रा की नियुक्तियाँ की तब उन्होंने विदूषक की भी रक्षा का उल्लेख किया—

नायक रक्षत इन्द्रस्तु नायिकातु सरस्वती
विदूषकम् श्रोमकार शपातु प्रकृति हरं।

अत विदूषक विशेष पात्रा म था 'शेपातु' म नही। विदूषक द्वारा राजा को सबोधित करने के नियम इसकी पुष्टि करते हैं। ऋषि राजा को राजन् कह सकता था और विदूषक भी राजन् कह सकता था। इसी प्रकार से शास्त्रीय नियमानुकूल नाटय परम्परा मे भी सूत्रधार, प्रस्तावना म नटी परिपार्श्विक या विदूषक से सलाप करता है। उदाहरणस्वरूप मालविकाग्निमित्र, अभिज्ञान शाकुतलम उत्तर राम चरित्र आदि देखे जा सकने हैं। इस प्रकार यह एक विशेष पात्र ठहरता है।

विदूषक का शाब्दिक अर्थ बुरा बनाने वाला (वन हू डिस फिगस) होना है। कतिपय आलाचका का मत है कि तत्कालीन समाज म ब्राह्मणो की खिल्ली उडाने के लिए इस पात्र की अवतारणा की गई थी। यह उपयुक्त प्रतीत नही होता है। यदि ऐसा होता तो कालिदास के नाटको म इसे स्थान नहीं मिलता। साथ ही यदि जनता ब्राह्मणा क आचार व्यवहार स ऊब गई थी तो राजपूता व वश्या स भी जनता पूर्ण रूपण सतुष्ट न थी। राजपूता क अनाचार से भी लोग अप्रसन्न थे और वश्या क छल कपट का भी ज्ञान लोगो को अवश्य ही था। तब फिर अन्य वर्णों को छोड कर ब्राह्मणो की ही कटु आलोचना कैसे हुई उसका कोई उत्तर प्राप्त नही होता है। विदूषक के विकास व उसके कार्यों की निम्नांकित व्याख्या हमारे मत की पुष्टि करती है।

साहित्यिक नाटका स पूर्व जन नाटक या लोक नाटक का कोई न कोई स्वरूप अवश्य ही रहा होगा।[1] समाज म नृत्त, नृत्य सगीत हसी मजाक व अपने कथन को

---

1 प्राचीन काल म उच्च वर्ग क लोगा के हास्यजनक अनुकरण से युक्त एक हास्यजनक प्रहसन होता था जिसम निम्न स्तर के सामाजिक भाग लेते थे। नाट्य इस लोक प्रिय स्रोत से भी विकसित हुआ। भारतीय नाटय साहित्य स० डॉ० नगेन्द्र पृ० ३।

ावपूर्ण मुद्राओ से प्रकट करने के माध्यम, अवश्य ही प्रचलित थे। उनमे हसोड पात्र ो भी स्थान प्राप्त था। वह किसी वर्ण विशेष की नही सामान्यत सभी की हसी उडाता था। डॉ० दशरथ ओझा का मत है कि [1] जन नाटको ने साहित्यिक ाटको को प्रभावित किया। [2] शास्त्रीय रचनायें, लोक साहित्य से सर्वथा अछूती नही रह सकती हैं। अतएव, लोक नाटको का वह हसोड पात्र साहित्यिक नाटको द्वारा अपना लिया गया। वह यहाँ आकर नायक का मित्र बन गया। सभवत इसका कारण हसोड पात्रो की लोक नाटको म प्रमुखता थी। जनता का वह अपने भौंडे रूप व स्वाग द्वारा आकर्षित करता था। अत वह साहित्यिक नाटको म भी महत्वपूर्ण पात्र बन गया। वह नायक का मित्र बन गया। कालान्तर मे वह विकसित हुआ और रानिया व राजा की प्रेमिकाओ से वार्त्तालाप करने लगा। वह राजा को प्रणय व्यापार म अथवा अन्य कार्यों म भी सहायता प्रदान करने लगा। अतएव ऐसी अवस्था मे वह ब्राह्मण बन गया क्योकि ब्राह्मण ही राजा को परामर्श दिया करते थे—दे सकते थे।

जसा कि पहले सकेत किया गया है यह रनिवास मे भी जाता और राजा के प्रणय की व्यवस्था भी करता था। रानियो के समीप वही रह सकता था उन्हे वही आकर्षित कर सकता था जो अत्यन्त तेजस्वी चतुर और हर काय म प्रवीण होता। चतुर और प्रवीण तो राजा स्वय होता था और अन्य व्यक्ति को अन्त पुर मे भेजा भी नहीं जाता था। वीर व तेजस्वी व्यक्ति पुरुष के तो प्रतिनायक बनने का भी भय था। विदूषक ऐसा न बन पाया। वह तो अत्यन्त सरल और बेवकूफ रह कर ही अन्त पुर मे जा पाया। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से यही उपयुक्त था। जहा अज्ञानता से ही काय हो जावे वहा बुद्धिमान बनना अनुपयुक्त ही है।

इस प्रकार प्रारम्भ मे तो विदूषक ने अपना काम बनाने के लिए मूर्खता का बाना पहिना था। प्रारम्भिक दिनो म विदूषक ऐसा ही था। मृच्छकटिका का मैत्रेय ऐसा ही पात्र है। अतएव राइडर उसे विदूषक ही नही मानते। वास्तव म वह विदूषक की प्रारम्भिक अवस्था थी। उन दिनो तक तो वह शास्त्रीय दृष्टि से मूख नही माना जाता व उसमे प्रवृत्ति जन्य हँसाने के तत्त्व अवश्य थे। वह तो येन केन प्रकारेण राज काय सहायक था। वह राजा का मित्र हँसाने वाला पात्र था। आगे

---

1 हि० ना० उ० और वि० पृ० ३६ ३७।

2 जब महान राष्ट्रीय पव मनाये जाते थे तब ये दोनों पक्ष एक ओर से धार्मिक तथा शौयपूर्ण एव दूसरी ओर से लोकप्रिय और हास्यात्मक रूप धारण कर एक सामान्य घटनास्थल की ओर उन्मुख होते थे। कालान्तर मे जब नायक **मुख्य हो** गया तब उत्सव पूव रग बन गया। भारतीय नाटय साहित्य पृ० ३

चल कर उसकी मूर्खता विकसित होती गई। पेटूपन उसका अविच्छिन्न चिन्ह बन गया।

श्रेष्ठ नाटकों में नायक का मानसिक द्वन्द्व भी कुछ सीमा तक विदूषक द्वारा प्रदर्शित किया जाता था। विदूषक नायक की मन स्थिति को सामाजिकों के सामने स्पष्ट करता था। स्वप्नवासवदत्ता में वह राजा से बातचीत करके यह प्रकट करता देता है कि उदयन, वासवदत्ता के न रहने पर भी पद्मावती से पाणिग्रहण करके भी वासवदत्ता में अनुरक्त है। यही नहीं विदूषक द्वारा नाटककार अपने विचार भी सामाजिकों के सम्मुख प्रकट करता था। विदूषक द्वारा नैतिक उपदेश भी दिया जाता था। इसके माध्यम से नाटककार परिस्थिति की वास्तविकता का भी चित्रण करता था उदाहरणार्थ मैत्रेय कहता है हमारा कोई भोजन नहीं ग्रहण करता इत्यादि।

विदूषक नाटक से असम्बन्धित किसी कथा को लेकर नहीं चलता। वह तो पीठ मर्द बनता है—नायक का सहायक और सखा होता है—नायक के उद्देश्य साफल्य की आकांक्षा रखता है। विदूषक की सफलता इसमें ही रहती है। अतएव वह किसी *दोहरी वस्तु का सूत्र पात नहीं करता।*

निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं कि विदूषक जन नाटक के हँसोड रूप को लेकर साहित्यिक नाटकों में आया था। यहाँ वह राजा का अन्तरंग मित्र बन गया और तथैव ब्राह्मण भी बन गया। वह रनिवास में भी आने जाने लगा और समय के साथ उसकी मूर्खता विकास करती गई। अन्त में वह पूर्ण रूपेण मूर्ख बन गया, फिर भी वह नाशनिरता से विमुख न हो सका। आज विदूषक का नाम लेते ही एक मोटा तगड़ा पर बौनासा मोदक प्रिय ब्राह्मण जिसका सिर साफ है तथा जो कुछ कायरता लिए हुए है एवं गतिमनेत्र तथा बाहर दांत वाला मूर्ख व्यक्ति नेत्रों के सामने आ सकता है। फलतः हास्य रस का उत्पादक होने पर भी विदूषक हमारे नाटकों के लिये एक बहुत ही उपयोगी पात्र है।[2]

नाटक के प्रारम्भ में सूत्रधार नटी विदूषक या मारिष से वार्तालाप करता था। इसमें ऐसी उक्तियों का प्रयोग होता था जिसके द्वारा सामाजिकों को कथानक की सूचना प्राप्त हो जाती थी। इसे आमुख कहते हैं।

प्रस्तावना, स्थापना और आमुख

उपर्युक्त प्रारम्भिक सूचना को भास ने स्थापना कहा है। आर वी जागीरदार

---

1 एच० ओ० एस० प्रथम जिल्द।

2 संस्कृत साहित्य का इतिहास ले० डा० बलदेव उपाध्याय पृ० ४४२

का मत है कि सगीत प्रस्तावना का प्रमुख गुण होता है, नटी नही (होती) ।[1] चाहे जो कुछ हो आमुख मे नटी और सगीत दोना को स्थान मिलता था ।

कथोद्घात जहा अय पात्र सूत्रधार के शब्दा को या उसके अथ को समझ कर मच पर आवे, वहा कथोद्घात हाता है। इसी प्रकार से सूत्रधार कोई बात कहे और अय पात्र उसके दूसरे ही अय को ग्रहण कर उसे दोहराता हुआ प्रवेश करे तो भी उस कथोद्घात कहते हैं।

निष्कर्ष

इस प्रकार निष्कप रूप म स्पष्ट है कि जहा पाश्चात्य साहित्य मे नाटका को पाच अका मे विभाजित करने की प्रणाली होरेस से प्रारम्भ हुई और दृश्या का समावेश सिनेका से प्रारभ हुआ वहा सस्कृत नाट्य साहित्य मे अका का प्रचलन अनि प्राचीन काल से होना आया है। भरत मुनि के नाट्यशास्त्र से ही यह सिद्ध होता है। सस्कृत मे रूपक विभिन्न अका म विभाजित होते थे। वहा अका के साथ अर्थोपक्षेपक की भी व्यवस्था थी। अर्थोपक्षेपक नाटकीय वस्तु के विकास मे सहायक होत थे और मत्यु युद्ध आदि की सूचना मात्र देकर रसाभासत होने देते थे। इनके द्वारा मच पर द्वद्व, अग्नि प्रदशन आदि भी टल जाता था, जिससे अभिनताओ को शारीरिक कष्ट भी नही होता था। अतएव भारतीय नाटको की अकविभाजन पद्धति श्लाघ्य और स्तुत्य है।

1 ड्रामा इन सस्कृत लिटरेचर ले० आर० बी० जागीरदार प्रस्तावना का

भाषा-शैली एवं वातावरण-सृष्टि 5

भाषा शैली और वातावरण सृष्टि

संस्कृत नाट्यशास्त्रकारों ने भाषा को चार भागों में विभाजित किया है अतिभाषा, आर्यभाषा जातिभाषा और योन्यन्तरी भाषा। अतिभाषा वेद द्वारा की प्रचलित भाषा को कहते थे तो आर्यभाषा का प्रयोग आर्यावर्त में ही होता था। जातिभाषा साधारण भाषा को कहते थे। योन्यन्तरी तथा मनुष्यों के अतिरिक्त अन्य प्राणियों की भाषा को कहते थे। प्राकृत और संस्कृत भाषाएं ही प्रथम भेद में अन्तर्निहित रहती थीं। नाट्यशास्त्र में सात मुख्य उपभाषाओं (डायलेक्ट्स)[1] का भी वर्णन किया गया है।

मागधी, अवन्ती, प्राच्य, शौरसेनी, अर्द्धमागधी, बाह्लीका और दाक्षिणात्य। इनके साथ विभाषाओं का भी उल्लेख प्राप्त होता है यथा आभीरों, चाण्डालों तथा जंगलों में रहनेवालों की भाषाएँ।

संस्कृत प्रयोग

उपर्युक्त भाषा भेद व्यावहारिक दृष्टि से किया गया था। शास्त्रकारों ने भाषा भेद यहीं तक सीमित नहीं रखा। उन्होंने मंच पर वास्तविक वातावरण की सृष्टि करने हेतु पात्रों के भाषा प्रयोग में भी भिन्नता को वांछनीय घोषित किया। उच्च श्रेणी के पात्र संस्कृत बोलते हैं मध्य श्रेणी के भी संस्कृत का प्रयोग कर सकते हैं और अधम श्रेणी के पात्र अपनी भावनाएँ प्राकृत में व्यक्त करते हैं। स्त्रियाँ भी प्राकृत का प्रयोग करती हैं। राजा, ब्राह्मण, वैश्य व वेद शिक्षा-पारंगत व्यक्ति संस्कृत का प्रयोग करते हैं, किन्तु जो राजा अत्यन्त गरीब या मदमस्त होता है वह संस्कृत का प्रयोग नहीं कर सकता।[2] रानियाँ, राज्य वेश्याएँ, अप्सराएँ, वैश्य और कला

---

1 नाट्यशास्त्र (डा० घोष), प्रथम संस्करण, पृ० ५१८

2 वही।

उपासक युवतिया सस्कृत का प्रयोग कर सकती हैं । इह सस्कृत बालने की आज्ञा के कारण य है कि, रानी तो महाराज (राजा) के शुभ अशुभ की सूचना प्राप्त करती है और राजा को उससे अवगत कराती है–राजा से सीधा वात्तालाप करती है, अतएव वह सस्कृत सभाषण की अधिकारिणी है । वश्या भी राज के निकट होने के कारण व उसे प्रिय हान के कारण, सस्कृत वाल सकती है । वश्य सस्कृत प्रयोग से सभी को प्रसन्न रख सकता है तथव वह उनका प्रयोग कर सकता है । कला साधक युवतिया भी सभी का मनोरजन करती हैं और इसी कारण सस्कृत बोल सकती है । अप्सराए देवनाओ के साथ रहने के कारण दव भाषा की अधिकारिणी बन जाती हैं । सूत्रधार भी सस्कृत का प्रयोग करता है ।

प्राकृत-प्रयोग

जिस प्रकार से सस्कृत प्रयाग के नियम निश्चित् है उसी प्रकार से प्राकृत के भी । वेश बदले हुए व्यक्तियो, जन साधुओ, नटा और औरता क लिये प्राकृत का प्रयोग उपयुक्त बनाया गया है । नाट्य शास्त्र के अनुसार तो भिन्न क्षेत्र (आर्यावर्त के अतिरिक्त क्षेत्र) के लिए लिखे गय नाटक म सूत्रधार भी उस क्षत्र विशेष की भाषा बोल सकता है ।[1] प्राकृत के भेदो या विभाषाओ के प्रयोग की भी व्यवस्था नाटय शास्त्रकारो द्वारा की गयी है । उदाहरणाथ पहरेदार एव रनिवास के नौकरा के लिए मागधी उपयुक्त बनाइ गई है । नौकरो राजकुमारो एव वश्य सघ के नेताओ को अर्द्धमागधी का प्रयाग करना चाहिय । विदूषक के लिए प्राच्य भाषा निश्चित की गइ ।[2] जगल म रहन वाला की द्राविडी का प्रयाग बनाया गया ।[3] साहित्य दर्पणकार का यह भी निर्देश था कि— यद्देश्य नीच पात्र तु तद्देश तस्य भाषितम्"[4] नीच पात्र की भाषा उसके देश के अनुसार हो ।

---

1 ना० शा० डा० म० मो० घोष द्वारा अनूदित १८ ४६ ।
नाटकों मे मृच्छकटिका मे ऐसा प्रयोग दिखाई देता है । मृच्छकटिका का सूत्रधार सस्कृत से शौरसेनी बोलने लग जाता है ।

2 ना० शा० १८ ४७

3 सस्कृत के नाटकों मे शौरसेनी प्राकृत का प्रयोग प्रारम्भिक दिनो से ही दृष्टिगोचर होता है । इसका प्रयोग हुआ भी प्रचुर मात्रा मे है । अतएव कई विद्वानों का मत है कि सस्कृत नाटको का जन्म शूर सेन प्रदेश या मथुरा मे हुआ । यह मत, नाटको की उत्पत्ति कृष्ण लीला से मानने वाले विद्वानो द्वारा भी प्रकट किया जाता है, जिसका विवेचन यथा स्थान किया जा चुका है ।

4 इससे यही सिद्धात निकलता है कि आचार्यों का यही उद्देश्य था कि नाटक मे ऐसी बातचीत हो, जिसमे वास्तविकता का अनुभव होन लगे । रूपक रहस्य, पृ० १३४ ।

भाषा-शैली एव वातावरण-सृष्टि | 5

भाषा शैली और वातावरण सृष्टि

संस्कृत नाट्यशास्त्रकार ने भाषा को चार भागो मे विभाजित किया है अतिभाषा आर्यभाषा, जातिभाषा और योनेतरि भाषा । अतिभाषा कई द्वीपो की प्रचलित भाषा की सज्ञा थी तो आर्यभाषा का प्रयोग भारतवर्ष मे ही होता था। जातिभाषा साधारण भाषा को कहते थे। योनेतरी भाषा मनुष्यो के अतिरिक्त अन्य प्राणियो की भाषा को कहते थे। प्राकृत और सस्कृत दोनो ही प्रथम भेद मे अन्तर्निहित रहती थी। नाट्यशास्त्र मे सात मुख्य उपभाषाओ (डाइलेक्ट्स)[1] का भी वर्णन किया गया है।

मागधी, अवन्ती, प्राच्य, शौरसेनी अर्द्ध मागधी, बीह्लिका और दाक्षिणात्य। इनके साथ विभाषाओ का भी उल्लेख प्राप्त होता है, यथा अभीरी, चाडाली तथा जगलो मे रहनेवालो की भाषाए।

सस्कृत प्रयोग

उपर्युक्त भाषा भेद वर्नानिक दृष्टि से किया गया था। शास्त्रकारो ने भाषा भेद यही तक सीमित नही रखा। उन्होने मच पर वास्तविक वातावरण की सृष्टि करने हेतु पात्रो के भाषा प्रयोग मे भी भिन्नता को वाछनीय घोषित किया। उच्च श्रेणी के पात्र सस्कृत बोलते हैं मध्य श्रेणी के भी सस्कृत का प्रयोग कर सकते हैं और अधम श्रेणी के पात्र अपनी भावनाए प्राकृत मे व्यक्त करते हैं। स्त्रिया भी प्राकृत का प्रयोग करती हैं। राजा, ब्राह्मण, वैश्य व वेद शिक्षा-पारगत व्यक्ति सस्कृत का प्रयोग करते हैं, किन्तु जो राजा अत्यन्त गरीब या मदमस्त होता है वह सस्कृत का प्रयोग नही कर सकता।[2] रानियाँ, राज्य कन्याए अप्सराए वैश्य और कला

---

1 नाट्यशास्त्र (डा० घोष), प्रथम सस्करण, पृ० ५१८

2 वही।

उपासक युवतिया सस्कृत का प्रयोग कर सकती हैं। इन्हे सस्कृत बोलने की आज्ञा के कारण ये हैं कि, रानी तो महाराज (राजा) के शुभ अशुभ की सूचना प्राप्त करती हैं और राजा को उसमे अवगत कराती है-राजा से सीधा वार्त्तालाप करती है, अतएव वह सस्कृत सभाषण की अधिकारिणी है। वैश्या भी राज के निकट होने के कारण व उसे प्रिय होने के कारण, सस्कृत बोल सकती है। वश्य सस्कृत प्रयोग से सभी को प्रसन्न रख सकता है, तथव वह उनका प्रयोग कर सकता है। कला साधक युवतिया भी सभी का मनोरजन करती है और इसी कारण सस्कृत बोल सकती हैं। अप्सराए देवताओ के साथ रहने के कारण देव भाषा की अधिकारिणी बन जाती हैं। सूत्रधार भी सस्कृत का प्रयोग करता है।

प्राकृत-प्रयोग

जिस प्रकार से सस्कृत प्रयोग के नियम निश्चित् हैं उसी प्रकार से प्राकृत के भी। वश बदले हुए व्यक्तिया जन साधुओ नटा और औरता के लिये प्राकृत का प्रयोग उपयुक्त बताया गया है। नाट्य शास्त्र के अनुसार तो भिन्न क्षेत्र (आर्यावर्त के अति रिक्त क्षेत्र) के लिए लिखे गये नाटक म सूत्रधार भी उस क्षेत्र विशेष की भाषा बोल सकता है।[1] प्राकृत के भेदा या विभाषाओ के प्रयोग की भी व्यवस्था नाट्य शास्त्र कारा द्वारा की गयी है। उदाहरणार्थ पहरेदार एव रनिवास के नौकरा के लिए मागधी उपयुक्त बताई गई है। नौकरा राजकुमारा एव वैश्य सघ के नेताओ को अर्ध मागधी का प्रयोग करना चाहिये। विदूषक के लिए प्राच्य भाषा निश्चित की गई।[2] जगल म रहने वाला को द्राविडी का प्रयोग बताया गया।[3] साहित्य दर्पणकार का यह भी निर्देश था कि— 'यदेश्य नीच पात्र तु तद्देश्य तस्य भाषितम्'[4] नीच पात्र की भाषा उसके देश के अनुसार हो।

---

1 ना० शा० डा० म० मो० घोष द्वारा अनूदित १८४६।
नाटकों मे मृच्छकटिका मे ऐसा प्रयोग दिखाई देता है। मृच्छकटिका का सूत्र धार सस्कृत से शौरसेनी बोलने लग जाता है।

2 ना० शा० १८४७

3 सस्कृत के नाटकों मे शौरसेनी प्राकृत का प्रयोग प्रारम्भिक दिनों से ही दृष्टिगोचर होता है। इसका प्रयोग हुआ भी प्रचुर मात्रा मे है। अतएव कई विद्वानों का मत है कि सस्कृत नाटकों का जन्म शूर सेन प्रदेश या मथुरा मे हुआ। यह मत नाटको की उत्पत्ति कृष्ण लीला से मानने वाले विद्वाना द्वारा भी प्रकट किया जाता है, जिसका विवेचन यथा स्थान किया जा चुका है।

4 इससे यही सिद्धान्त निकलता है कि आचार्यों का यही उद्देश्य था कि नाटक म ऐसी बातचीत हो, जिसमे यास्तविकता का अनुभव होने लगे। रूपक रहस्य, पृ० १३४।

भाषा द्वारा वातावरण सृष्टि

उपरिनिर्दिष्ट भाषा भेद, पात्र भेद, प्रकट करने म सहायक होता था। वहाँ तो बधी बधायी परिपाटी थी जो नाटककार को नाटक म रग मच मवेन देने क श्रम से बचाती थी। सामाजिक भी इससे अवगत होते थे। इससे नाटककार को यथाथ चित्रण प्रस्तुत करने म व सामाजिको को पात्र का समझन म, सहायता मिलती थी। इस भाषा–भेद से पात्रो के अनुकूल दश कालानुसार वातावरण सष्टि की जाती थी।

काव्यत्व और छद

नाटको की वस्तु अधिकाशत महाकाव्यो पर आधारित रहने के कारण नाटक भी मुख्यतया गेय एव कथा प्रधान रहे है। उनका काव्य प्राधान्य रस सष्टि एव वातावरण सष्टि म सहायक होता था। छद इसम सहयोग दत थे। नाटककारों का प्रिय छद श्लोक रहा है। काव्य म सहयोग देने के लिए और श्रुतिकटुत्व दोष से बचन के लिए बोलने मे दुरूह शब्दो का प्रयोग निषिद्ध बताया गया ह। नाटयशास्त्र चक्रदिति के प्रयोग को अवाछनीय बताता है।[1] भरत मुनि न घोष और अघोष आदि स्वरो पर भी प्रकाश डाला ह।[2] छन्दो के विभिन्न प्रकारों एव गद्य का भी विवेचन किया गया है। तीन प्रकार के छदों का उल्लेख उसम मिलता है। प्रथम ह दिव्य जिसम गायत्री, उष्णिक अनुस्टप भारता त्रिष्टुप और जागि छद आते हैं। दूसरा ह मानवीय जिसमे शक्करी, अतिशक्करी, अष्टि, अत्यष्टि धतिऔर अतिधृति का उल्लेख किया गया है। तीसरा भेद ह अद्ध दिव्य जिसम कृति प्रकृति अकृति, विकृति, सस्कृति, अतिकृति और उत्कृति वर्णित है। छद क ५८ प्रकारा का भी उसमे उल्लेख मिलता है। उन्ह सम विषम और अद्ध सम भागों म भा बाटा गया है।[3]

यद्यपि सस्कृत नाटको म पद्य बाहुल्य पाया जाता ह फिर उनम गद्य का समुचित प्रयोग पाया जाता हैं। वार्तालाप म पद्य और काव्य क हात हुए भी वहा गद्य की उपेक्षा नहा की गयी है। तथापि आलोच्य नाटको म पद्य का आधिक्य पाया जाता है। गद्य सीमित सकुचित और अल्प मात्रा म ही प्रयोग म लाया जाता था।

देवकुलिक अथ दिलीप
भरत पितपितामहो महाराजस्य। ततस्तत
दे अत्रभवान् रघु
म पितामहो महाराजस्य। ततस्तत।

---

1 ना० शा० डॉ० घोष द्वारा अनूदित २१ १२६।
2 वही अध्याय १५
३ वही अध्याय १५ एव १६।

दे — अत्र भवानज ।
भ —पिता तातस्य । किमिन किमिति ।

× × × ×

दे —येन प्राणाश्च राज्य च स्त्री शुल्काय विसर्जिता ।
इमां दशरथस्य त्व च प्रतिमा कि न पृच्छसे । [1]

श्री हर्ष और अन्य नाटककारो ने नाटको मे गद्य का प्रयोग किया गया है ।

वातावरण सृष्टि और सबोधन के नियम

जिस प्रकार से पात्रो द्वारा प्रयुक्त होने वाली भाषा निश्चित थी, उसी प्रकार से उनके वार्तालाप मे एक दूसरे को सम्बोधन करने के नियम भी विद्यमान थे । [2] देवता एव गुरु भाग्यवान कह कर पुकारे जाते थे । सन्यासी की पत्नी भगवती कहलाती थी । ब्राह्मण को प्राय राजा को महाराज वयोवृद्ध को तात, आदरणीय व्यक्ति को भव और कुछ कम आदर वाले को माष कह कर सम्बोधित किया जाता था । रथ पर चढने वाला को रथवान आयुष्मान कहता था और समवयस्क एक दूसरे को वयस कहते थे । निम्न श्रेणी के लोग सभ्य कहलाते थे । पुत्र या शिष्य का सम्बोधन था वत्सल या पुत्र । बौद्ध साधु भदन्त कहलाता था और पति को प्राय

---

1 देवकुलिक ये महाराज दिलीप हैं ।
भरत महाराज के पिताजी के दादाजी । आगे चलिये ।
दे ये महाराज रघु हैं ।
भरत महाराज के दादाजी । आगे चलिये ।
दे ये महाराज अज हैं ।
भ पिताजी के पिताजी । क्या कहा, क्या ?

× × × ×

देवकुलिक जिन्होंने अपने प्राण और राज्य सब कुछ स्त्री शुल्क के निमित्त न्योछावर कर दिया, उन्हीं महाराज दशरथ की प्रतिमा के विषय मे आप क्यो कुछ नहीं पूछ रहे हैं ? (प्रतिमा नाटक अनुवादक शास्त्रोदय । प्रथम सस्करण १ ८ पृ० १०२ १०३

2 वही अध्याय उन्नीस ।

3 राजा को ब्राह्मण नाम से भी पुकार सकता था । ना० शा० १९ ६
ऋषि, राजा को राजन कहने का अधिकारी था । वही १९ १७,१८
साधारण लोग राजा को देव कहा करते थे । वही १६
विदूषक राजा को वयस्य या राजन कह सकता था । वही १७,१८

पुत्र कहती थी । यथावद् स्त्रियाँ अम्मा कहलाती थीं । राजमहिषी को नौकर महिषी या स्वामिनि कहते थे । पट्टरानी को भगिनी कहा जाता था । पत्नी को अग्नि या भगिनी और दासी को वत्स कहते थे । वेश्या का नौकर अज्जुका कहते और उसके वृद्ध हो जाने पर उसे अम्मा कहा जाता था । पत्नी को पति आर्या या उसके पिता अथवा पुत्र के नाम से सम्बन्धित कर पुकारता था । सम्बोधन के नियम ही नहीं पात्रों के नामकरण के नियम भी विद्यमान थे ।

नामकरण

नाट्यशास्त्र का आदेश है कि पात्रों के नाम पूर्व प्रचलित न होकर नाटककार विनिर्मित होने चाहिए ।[1] साथ ही यह भी बताया गया है कि ब्राह्मणों के नाम शर्मा, क्षत्रियों के वर्मा और वैश्य के नाम दत्त को जोड़ कर रख जाने चाहिए ।[2] क्षत्रियों के नामों से ही शौर्य का प्रकटीकरण आवश्यक था । राजरानी का नाम विजय से सम्बन्धित होना वांछनीय बनाया गया था ।[3] वेश्या का नाम सेना मित्रा या दत्ता को मिलाकर बनाया जाता था । विदूषक के नाम ऋतु से सम्बन्धित करने का आदेश था । नौकरों व अन्य व्यक्तियों के नामकरण उनके व्यवसाय से सम्बन्धित रखने की व्यवस्था दी गई थी । ये नामकरण नाटकों की भाषा के सहयोग से मंच पर आवश्यक वातावरण उत्पन्न करने में सहायक होते थे ।[4] [5] भाषा और शैली का सम्बन्ध अटूट रहा है । संस्कृत नाटक इसके अपवाद नहीं हैं ।

शैली

हम विदित है कि किसी कवि या लेखक की शब्द योजना वाक्यांशों का प्रयोग, उनकी बनावट ध्वनि आदि की संज्ञा शैली है । शैली विचारों का परिधान है किन्तु यह परिधान के समान त्याज्य नहीं है । अतएव यह विचारों का बाह्य और प्रत्यक्ष रूप माना जाता है । हमारे यहाँ शब्द में शक्ति गुण और वृत्ति ये तीनों बातें मानी गयी हैं । शब्द शक्ति के अभिधा व्यंजना और लक्षणा भेद किये गये हैं । उन्हें पुनः कई भागों में बाँटा गया है । सर्वोत्कृष्ट वाक्य वही माना जाता है

---

1 ना० शा० डा० घोष द्वारा अंग्रेजी में अनूदित अध्याय १६

2 वही

3 वही पृ० ३४५ हिन्दी नाटकों में विजया को स्थान मिला है । प्रसादजी की विजया इसकी साक्षी है । ना० शा० के अनुकूल हैं ।

4 साहित्यालोचन—देखिये रस और शैली

5 रसार्णव सुधाकर में नामकरण पर विस्तृत प्रकाश डाला गया है ।

जिसम व्यग्याय विद्यमान रहते हैं। गुणा को भी माधुय ओज और प्रसाद नामक भेदा मे विभाजित किया जाता है। इन्ही तीना गुणा को उत्पन्न करने के लिय शब्दो की बनावट को वृत्ति कहते हैं। य मधुरा पुरुपा और प्रौढा कहलाती है। इन्ही क अनुसार तीन प्रकार की वाक्य रचना हुआ करती है। जिसे रीति[1] कहत हैं। य रीतियाँ वैदर्भी गौडी और पाञ्चाली नाम स प्रख्यात हैं। माधुय गुण, मधुरा वत्ति और वदर्भी रीति, शृगार, करुण और शान्त रस के उपयुक्त बताय गय हैं। ओज गुण, पुरुपा वत्ति और गौडी रीति, वीर वीभत्स और रौद्र रस क लिए तथा प्रसाद गुण, प्रौढा वत्ति और पाचाली रीति सभी रसो के लिये श्रेष्ठ हैं। इस निष्पत्ति हेतु एव पाठ मे सौंदय तथा वस्तु म चमत्कार उत्पन्न करने के लिए अलकारा का प्रयोग और दोषा का परिहार भी आवश्यक माना गया।

वृत्तियाँ

उपरिकथित शब्द शक्तिया एव रीतिया तो सामान्यत काव्य के हर अग मे पायी जाती हैं। उनका समुचित प्रयोग काव्य का शृगार है। परन्तु वत्तिया का दृश्य काव्य म विशेप महत्व है। नाटय शास्त्रानुसार नायक नायिका आदि क विशेप

---

1 रीति शब्द का पहले पहल प्रयोग वामन ने किया है। इसके पहले इस अर्थ का द्योतक माग शब्द था। कुन्तक ने भी माग का प्रयोग करना चाहा, परन्तु लोक रुचि ने रीति शब्द को ही अपनाया। पिछले खेमे के आचार्यों ने भी इसे ही महत्ता प्रदान की। वामन ने सब प्रथम रीति का लक्षण बताया विशिष्ट पद रचना रीति, अर्थात् विशिष्टता से युक्त पद रचना ही रीति है। इस विशिष्टता को स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा विशेषोगुणात्मा अर्थात् ओज प्रसाद और माधुय गुण जिसके स्वभाव हैं वही रीति है। इस प्रकार वामन के लक्षण का यह अथ हुआ कि पदो की वह रचना जिसमे ओज आदि गुण विशिष्टता उत्पन्न करते हैं, रीति कहलाती है। आगे चल कर आनन्द वधन ने इसे सघटना कहा है। सघटना का अथ है रम्यक घटना एस पदो की सम्यक रचना जिसे विशिष्ट पद रचना कहा जाताहै। आनन्दवधन ने रीति के नियामक तत्वो का भी वणन किया है। उनके अनुसार कुछ नियामक तत्व निम्नाकित हैं।

(क) वक्त (व्यक्ता) औचित्य
(ख) वाच्य औचित्य
(ग) विपय औचित्य
(घ) रस औचित्य

प्रकार के व्यवहार अथवा ढग को वृत्ति कहते हैं[1] प्रवृत्ति वृत्ति तथा रीति, तीनो ही शास्त्रकारो द्वारा सम्मानित दृष्टि से देखा गयी हैं। (इनमे से रीति की व्याख्या ऊपर की जा चुकी है।) काव्यशास्त्रकारो द्वारा[2] विशेष प्रकार की वाक् रचना का प्रवृत्ति और *विलास प्रदर्शन को वृत्ति कहा गया है।[3] जो रस रसास्वादन का मुख्य कारण* बने उसे भी वृत्ति कहते हैं।[4] डा० श्यामसुन्दरदास ने इसे स्पष्ट करते हुए ठीक ही अकित किया है कि

'नाट्य मे यथार्थता और उस द्वारा सजीवता लाने का प्रयत्न करते हुये नट और नटी सभी पात्रो के वाचिक आगिक आहार्य और सात्विक चारो प्रकार के अभिनय की प्रसगानुकूल दृश्य व प्रदर्शन की उस विशेषता को वृत्ति कहते हैं जो नाट कीय रस की अनुभूति मे सहायक हैं।[5] वृत्तियो को नाट्यशास्त्रकारो ने चार भागो मे विभाजित किया है भारती कैशिकी सात्वती और आरभटी। प्रथम शब्दवृत्ति है और अन्य अर्थ वृत्तिया कहलाती है।

भारती वृत्ति का सम्बन्ध भार या बोझ से जोडा जाता है।[6] इसे ऋग्वेद से अपनाये जाने का भी उल्लेख मिलता है।[7] सात्वती यजुर्वेद से कैशिकी सामवेद से और *आरभटी अथर्ववेद से अपनायी गयी।*[8]

भारती वृत्ति

भारती वृत्ति के सबध मे नाट्य शास्त्र का कथन है कि यह वाक् प्रधान होती है। इसमे पुरुष ही भाग ले सकते है स्त्रिया नही।[9] इसमे सस्कृत भाषा का अधिक्य

---

1 रूपक रहस्य पृ० १२३
2 काव्य मीमासा मे राजशेखर का कथन है
तत्र वच विन्यासक्रम प्रवृत्ति विलास विन्यास क्रमो वृत्ति वचन विन्यास क्रमोरीति। वही।
3 रूपक रहस्य पृ० १२३।
4 वही
5 वही
6 ना० शा० १२–८ से १२
7 वही
8 इनके अपनाये जाने पर व इनके उद्गम एव स्त्रोतो पर पहले प्रकाश डाला जा चुका है।
9 "या वाक्प्रधाना पुरुष प्रयोज्या स्त्रीविजिता सस्कृत वाक्ययुक्ता।
स्वानामधेये भरत प्रयुक्तासा भारती नाम भवेत्तु वृत्ति।(ना० शा० २० २२।

रहता है। इसमे शृ गार प्रसाधान नही होता, यह पाठ प्रधान होती है।

सात्वती वृत्ति

जब भावो का बाहुल्य होता है तो उन्हे प्रकट करने की इच्छा होती है। यदि उस भाव प्रकटीकरण मे सत्व का आधिक्य हो तो उसे सात्वती वृत्ति कहते हैं। सत्व से तात्पय है उस गुण का जिसके द्वारा भावो और रसो का उचित अभिनय सभव हो सकें। इसमें चातुय का समावेश रहता है। नायक का व्यापार जहाँ शोक रहित, शौय पूण, ओजस्विता युक्त दया क्षमा आदि से युक्त होता है वहाँ सात्वती वृत्ति के दर्शन होते हैं।[1] इसके सलापक उत्थापक, सापात्य और परिवत्तक या प्रवृत्तक नामक भेद किये गये हैं। सलापक मे गभीर उक्ति व उत्थापक मे नायक द्वारा युद्ध की ललकार सुनायी देती है। सघात्य मे धन, मत्र या बुद्धि द्वारा शत्रुपक्ष मे भेद बुद्धि उत्पन्न की जाती है। प्रवृतक मे हाथ का काय छोड कर अय काय प्रारम्भ कर दिया जाता है।

केशिकी वृत्ति

जहा भारती वृत्ति मे शृ गार प्रसाधान का वहिष्कार किया जाता है वही कैशिकी वृत्ति में इनका बाहुल्य पाया जाता है। इसमे प्रणय व्यापार का आधिक्य रहता है। इसे मधुर वृत्ति माना जाता है। इसके भी नम, नमस्फूज, नमस्फोट और नमगम नामक चार भेद किये जाते हैं। नम मे प्रिय को प्रसन्न करने वाली परिहास पूण क्रीडा दिखायी देती है। इसके हास्यनम, शृ गार नम और भयमुक्त नम भेद किये जाते हैं जिनमे नाम के अनुसार ही गुण भी पाये जाते हैं। शृ गार नम के पुन आत्मोपक्षेप, सभोग और मानसिक उप भेद पाये जाते हैं। आत्मोपक्षेपक मे निवेदन, सभोग नम मे रति कामना और मान नम म मान वणन पाये जाते हैं। नम परिहास पूण उक्तियो, वाणी, वेश और चेष्टा पर आद्धृत रह सकती है।

केशिका वत्ति के तृतीय भेद नमस्फूज का प्रारभ नायक नायिका के प्रथम मिलन सुख से होता है और एक भय में उसका अन्त हो जाता है।[2] नमस्फोट नामक भेद मे थोडे से भावो द्वारा अल्प रस का सचार किया जाता है।[3] नम गम, नायक का गुप्त व्यवहार चित्रित करती है।

---

1 रूपक रहस्य पृ० १२८।

2 मालाविकाग्निमित्र में राजा और मालविका के मिलन तथा रानी के भय की शका, इसका उदाहरण है। रूपक रहस्य, पृ० १२७

3 वही।

आरभटीवृत्ति

आरभटवृत्ति मे सगीत, सघष (युद्ध) जादू माया, इन्द्रजाल, क्रोध और उद्भ्राति, आदि का समावेश होता है। इनको प्रकट करने के लिये उपयुक्त और सुसज्जित रग मच आवश्यक और अनिवाय होता है। वास्तविक वस्तु के अभाव म मत्र द्वारा उसको दिखा देने को माया, तत्र बल या हाथ की सफाई से आश्चय चकित कर देने को इन्द्रजाल और चकित होकर चक्कर लगाने को उद्भ्राति कहते हैं[1] आरभटी वत्ति के चार भेद किय जाते है। सक्षिप्ति, सफेट, वस्तूत्थापन और अवपात। सक्षिप्ति के बारे मे आचार्यों ने विभिन्न मत प्रस्तुत किय है, [2] जिनसे ज्ञात होता है कि मिट्टी, बास, पत्तो आदि की वस्तुओ का निर्माण, एक नायक के चले जाने पर दूसरे की स्थापना और नायक का हृदय परिवत्तन इसके अन्तगत आ जाते हैं।[3] सफेट म क्रोध स उत्तेजित दो व्यक्तियो का युद्ध होता है तो वस्तूत्थापन म माया या मत्र से उत्पान्ति सामग्री दृष्टिगोचर होती है। अवपात म कोलाहल वणन या भागने अथवा बचाने आदि का उल्लेख मिलता है।

अर्थ वृत्ति

वत्ति के उपयुक्त भेदो के अतिरिक्त अथवृत्ति का उल्लेख भी उद्भट और उनके अनुयायियों ने किया है। इसम अथ गाभीय वणन चातुय और वाणी विलास (अथ की दृष्टि से) दृष्टि गोचर होते हैं। इसका उल्लेख अन्य नाटयाचार्यों ने नहीं किया है।

वत्ति के साथ प्रवृत्ति का भी विवरण मिलता है। प्रवृत्ति से तात्पय है स्थानीय वातावरण की सूचना देने वाली सामग्री[4]। इसम तद्देशीय परम्पराओं, मान्यताओं और अन्य तत्सम्बन्धी सूचनाओं का समावेश किया जाता है। नाटयशास्त्र इन्हें अवन्ती, दाक्षिणात्य, पाचाली और अद्ध मागधी भेदो म विभाजित करता है।

शैलीगत अन्य विशेषताएँ

सस्कृत नाटको म नियम पालन की प्रवृत्ति स्पष्ट ही दिखाई देती है। वहाँ नान्दी पाठ, प्ररोचना, वस्तु विन्यास फलागम, नायिका चित्रण, अक विभाजन, अभि

---

1 रूपक रहस्य पृ० १२६

2 वही।

3 उदयन चरित में याग का हाथी, बालि वध के उपरान्त सुग्रीव का नायक बनना और वीर चरित मे परशुराम का स्वभाव परिवत्तन इनके उदाहरण स्वरूप देखे जा सकते हैं। वही।

4 ना० शा०—अध्याय १४

नाटक उद्देश्य 6

उद्देश्य

नाट्यशास्त्र के अनुसार नाटक का उद्देश्य लोकरंजनकर उत्साह प्रदान करते हुए उपदेश इतिहास समन्वित दृश्य प्रस्तुत करना है। वह तीनों लोकों का अभिनय प्रस्तुत करता है[1] अर्थात उसमें सभी स्थानों और सभी व्यक्तियों के चित्रण को स्थान मिलता है। उसमें भले बुरे और उदासीन सभी प्रकार के मनुष्यों की क्रियाओं का अभिनय प्रस्तुत किया जाता है। किसी भी ज्ञान शिल्प कला योग एवं कर्म का इसमें बहिष्कार नहीं किया जा सकता। वे सभी नाट्य में स्थान प्राप्त करते हैं। नाटककार वेदों एवं अर्द्ध ऐतिहासिक कथाओं से कथानकों का चयन कर सामाजिकों का मनोरंजन करता है।[2] प्रारम्भ में नाटक का उद्देश्य एक सांस्कृतिक समन्वय प्रस्तुत करना भी था। शूद्रों को भी इसके द्वारा अपनाया गया। नाटकों का उद्देश्य शूद्रों और स्त्रियों आदि को जो वेदों के अध्ययन के पात्र नहीं थे, उन्हें भी वेदों के तत्वों को समझाना और ज्ञान के दर्शन कराना माना गया था। इसमें शिक्षा और मनोरंजन का समन्वय प्राप्त होता है। सामाजिक इसके मुख्य आलोचक माने जाते थे।[3]

कालिदास एवं अन्य नाटककार नाटक का उद्देश्य

भरत मुनि के उक्त मत का समर्थन कालिदास ने भी किया है। उन्होंने कहा है —

"कविपुत्रादीनां प्रबन्धानति क्रम्य वर्तमान कवे
कालिदासस्य क्रियामिमां दुष्ट कथं परिषदो बहुमानः[4]

---

1 नाट्यशास्त्र (डा० घोष) १।१०४ १०५

2 वही १/१०६ से १२१।

3 वही।

4 मालविकाग्निमित्र १ अंक पृ० २ (सी० आर० देवधर एवं ए० सी० सूर)

अर्थात पुराने प्रसिद्ध नाट्यरचनाओं के होते हुये भी आधुनिक नाट्यकार कालिदास की रचनायें सामाजिकों को कैसे आनन्द प्रदान करेंगी ? सामाजिकों से प्रशंसा प्राप्त करना नाटककार का उद्देश्य था। संस्कृत के अन्य नाटकों की प्रस्तावनायें भी यह सिद्ध करती हैं कि नाटकों का उद्देश्य अभिनय प्रस्तुत कर सामाजिकों को प्रसन्न करना था।[1] व केवल पठन की सामग्री ही नहीं थे अपितु अभिनयात्मक प्रदान उनका प्रमुख गुण था। जब नाटक श्रव्य की ओर बढ़ने लगा तब उनका पतन होने लगा। कालिदास ने यह भी घोषित किया कि भिन्न भिन्न रुचि वाले सामाजिकों को आनन्द प्रदान करने वाले माध्यमों में नाटककार मुख्य स्थान है।[2] अन्य शास्त्रकारों की भी ऐसी ही धारणा विदित होती है।

शारदायनय के मत में नाटक का उद्देश्य

तेरहवीं शताब्दी में शारदातनय ने भाव प्रकाशन में लिखा है कि नाटक भिन्न रुचि वालों के आनन्द का कारण बनता है। इससे प्रतीत होता है कि उनके अनुसार नाटक का उद्देश्य सामाजिकों को आनन्द प्रदान करना था।

निष्कर्ष

अतएव निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि संस्कृत नाटकों का उद्देश्य सांस्कृतिक समन्वय विभिन्न कलाओं का प्रदर्शन एवं मनोरंजन प्रदान करना माना गया था। नाटक के द्वारा सामाजिकों को ब्रह्मानन्द सहोदर प्राप्त करवा कर उन्हें उपदेश भी दिया जाता था।

---

1. प्रस्तावना में सूत्रधार नटी आदि के वार्तालाप में नाटक के अभिनय की चर्चा अवश्य की जाती है।
2. 'नाट्यं भिन्नरुचेर्जनस्य बहुधाप्येकं समाराधनम्।'' मालविकाग्नि मित्र प्रथम अंक, पृ० १०

द्वितीय खण्ड

अंग्रेजी नाटकों का विकास
उनकी विधायें व विशेषतायें

अंग्रेजी नाटक · परम्परा और उद्भव | 1

हिन्दी नाटक साहित्य पर सस्कृत प्रभाव आकने के लिए जिस प्रकार सस्कृत नाट्यविधाओ और विशेषताओ आदि का अध्ययन अनिवार्य होता है उसी प्रकार से अग्रेजी-नाट्य साहित्य के प्रभाव का पर्यवेक्षण करने के लिए आग्ल नाटको का तात्विक एव प्रावृत्तिक विवेचन वाछनीय और उपयुक्त प्रतीत होता है। कहना न होगा कि अग्रेजी नाटको के मूल मे ग्रीक,[1] लेटिन[2] और फ्रैंच[3] नाटकीय तत्त्व सन्निहित हैं। अग्रेजी मे नाटक का अर्थ बोध 'ड्रामा' से होता है जिससे व्युत्पत्ति की दृष्टि से किया हुआ या कृत्त की ध्वनि निकलती है।

अग्रेजी नाटककारो ने यूनानी मधावी अरस्तू के काव्यशास्त्र (पाइटिक्स) को आधार माना तथा इटली के आचार्यों ने भी उन्हें नाट्य कला सम्बन्धी नियम प्रदान किये। नाटको मे त्रासदी (ट्रेजेडी) की प्रमुखता अथच अक दृश्य विभाजन, इसके प्रमाण हैं। पुनर्स्थापनकालीन नाटक—फ्रास में लालन पालन किये गये राजाओं के मनानुकूल प्रदर्शित व रचित नाटक, फ्रैंच साहित्य के प्रभाव के प्रतीक हैं। प्रारम्भिक अवस्था मे ही चासर पर फ्रास व इटली के प्रभाव स्पष्टत दिखाई देते है।[4] केवल यही तक नही

---

1 Borisford Age of Shakespeare P 18

2 'The influence of antiquity and of foreign countries especially Italy is everywhere so noticable that only rarely do we receive an immediate and broad impression of the English genius Legouis and Cazamian History of English Litt P 377

3 'Moreover, France in the Middle Ages seems to have taken the lead in the matter (drama)and to have supplied the earliest dramatic models *Ibid P 385*

4 (a) "Taken as a whole, all the poems which have been mentioned are in the French succession But the three last,written after Chaucer s first jouney to Italy in 1372 show numerous traces of the influence of Italian poetry —A History of English Literature by Legouis and Cazamian P 141 IV Edition

(b) *Court Hope—History of English Poetry, Vol I, First Edition* Chapter I

शेक्सपीयर ने भी शास्त्रीय व लोक नाटयधाराओं को तथा विभिन्न स्रोतों से वस्तु को अपनाया है। सच तो यह है कि भिन्न भिन्न देशों के साहित्य एक दूसरे से तथा बाद के युग के साहित्यकार पुरातन साहित्यनिधि से देशकालानुसार उपयुक्त तत्त्व ग्रहण करते ही हैं।[१, २, ३, ४]

अफलातून (प्लेटो)

पाश्चात्य साहित्य में नाटकों को शास्त्रीय आधार प्रदान करने वाला प्रथम प्राप्य प्रामाणिक ग्रन्थ है यूनानी अरस्तू (एरिस्टोटल) का काव्यशास्त्र। अरस्तू से पूर्व उनके गुरु अफलातून (प्लेटो) ने अपने गणराज्य (रीपब्लिक) से कलाकारों को निर्वासित कर दिया। कलाकार से उनका तात्पर्य सब साहित्य स्रष्टाओं से था जिनमें नाटककार भी अपना स्थान रखते हैं। अफलातून का कथन है कि सृष्टि ईश्वर की कल्पना है और कलाकार (उसी व्यापक अर्थ मे) सृष्टि के ईश्वर की कल्पना के, आधार पर निजी कल्पना से नूतन सृष्टि-काव्य, की रचना करता है। एतदर्थ वह

---

1 " in the story of our civilization France & Britain have borrowed from one another and Europe from both with a mutual benefit that should dwarf all jealousy we can scarcely overpraise × × × Legouis and Cazamian for their primary purpose here fulfilled -A History of English Litertaure by Legouis and Cazamian preface-P 5

2 Poets and painters who from Nature draw
Their best and richest stores have made this law
That each should neighbourly assist his brother
And steal with decency from one another
Prologue of ' The clandestine Marriage by George Colman
18th Cent Playwright

3 the imitations of Greek tragedy by Milton Matthew Arnold and Also the poems in dialogue have been left out by the Editors of theChief British Dramatists

4 ' From European point of view the eighteenth Century had been Great Britain s first great literary Century She had made large exchanges and for the first time had given perhaps more than she had received It is true that since Restoration of 1660 these exchanges had been made almost entirely with France Italian influence had ended with Rensissance & German influ ance was still to begin -Legoius-A short History of English Literature P 275

वास्तविकता (रियेलिटी) से तीन बार विमुख होता है।[1] इसी कारण उन्होंने साहित्यकार को आदर्श राज्य में कोई स्थान नहीं दिया।[2] (वास्तव में अफलातून सभी कवियों के विरुद्ध नहीं थे वे तो केवल तत्कालीन काव्य को ही घृणा की दृष्टि से देखते थे।) उनकी भ्रांति का निराकरण उनके मेधावी शिष्य अरस्तू ने किया।

अरस्तू का काव्यशास्त्र और यूनानी नाटक

अफलातून के मेधावी शिष्य अरस्तू ने कालान्तर में काव्यशास्त्र की रचना की। यद्यपि इसमें अपने गुरु की काव्य सम्बन्धी धारणाओं की ओर किसी प्रकार का कोई प्रत्यक्ष संकेत नहीं है तथापि इसमें उपर्युक्त दोष का समाधान किया गया है।[3] यही उचित भी था क्योंकि इससे 'आचार्य देवो भव' की भावना को ठेस नहीं लग पायी है।

अरस्तू का कथन है कि जिस प्रकार सृष्टि नियन्ता अपनी कल्पना से सृष्टि का निर्माण करता है उसी प्रकार से काव्यकार भी अपनी कल्पना से साहित्य सृष्टि करता है। काव्यकार की रचना में रचयिता की कल्पना का सक्रिय सहयोग रहता है। अतएव यह सृष्टि के समान ही सत्य है। इस भांति दृश्यकाव्य रचयिता जो विश्व के स्वरूप विशेष को सच्चाई[4] और सुन्दरता के साथ सामाजिकों के सम्मुख प्रस्तुत करते हैं, कलाकार अवश्य ही सिद्ध होते हैं। यही नहीं आज का कलाकार तो ईश्वर की सृष्टि से भी काव्य सृष्टि को अधिक महत्त्वपूर्ण मानता है।

(और) यह कौन कहे कि सुंदर कृति किसकी विधाता की या कलाकार की? वह जो पचास या सौ साल जीकर धूल में मिल गई विधाता की वह शकुन्तला अच्छी या दो हजार साल बाद भी जो जीवित है कालिदास की शकुन्तला अच्छी।[5] अंग्रेज कवि कीट्स ने भी कल्पनामय संगीत को भौतिक कर्णेन्द्रियों द्वारा ग्राह्य संगीत से अच्छा बताया है। इस आमूलचूल परिवर्तन के मूल में संभवतः देशकाल वैभिन्य का

---

1 (a) 'But the painters bed is twice removed from the truth His work is therefore no more than the imitation of an imitation He creates a copy of a copy' –Making of Literature by James Scott Chapter IV V

(b) Plato the Republic Translated by H D Plife P 113, Year 1959

2 सोलहवीं शताब्दी में गोसन ने स्कूल आव ह्यूमजज में इसे आगे बढ़ाया। सर फिलिप सिडनी ने अपोलोजी फॉर पोइट्री में उसका मुँह तोड़ उत्तर दिया।

3 The making of Litt chapter 27

4 Poetics, P 18

5 अम्बपाली दे० श्री रामवृक्ष बेनीपुरी, भूमिका, प्रथम संस्करण सन १९४७

हाथ रहा है और यह परिवर्तन कलाकृतियों के नैतिक व सामाजिक मूल्यों के महत्व का द्योतक है। अस्तु

अरस्तू के काव्यशास्त्र की रचना के समय साध्यग्रंथ अल्प मात्रा में ही विद्यमान थे —आज तो यूनानी प्राप्य नाटकों की संख्या केवल सतालीस ही है।[1] उस समय कुछ धार्मिक नाटक रहे हों, किन्तु बहुत अधिक मात्रा में रहे हों ऐसा मानने के कोई ठोस प्रमाण नहीं हैं। सभी श्रेष्ठ समालोचकों के समान अरस्तू ने भी अपनी ओर से नियम नहीं बनाये थे अपितु उन्होंने तत्कालीन साहित्य में प्राप्य गुणों को ही नियमों का रूप दे दिया था।[2] अतएव अरस्तू के शास्त्र में सार्वकालिक और सार्वभौमिक तत्वों का अभाव स्वाभाविक ही है। अठारहवीं शताब्दी के अंग्रेज आलोचक कवि और नाटककार ड्राइडन का कथन है कि यदि अरस्तू हमारे नाटक देखते तो वे अपनी काव्य सम्बन्धी धारणायें परिवर्तित कर देते।[3] चाहे जो कुछ हो अरस्तू के नियम अंग्रेजी नाट्यसाहित्य की बपौती अवश्य ही हैं।

काव्यशास्त्र और त्रासदी

अरस्तू ने नाटकों में ट्रेजेडी (त्रासदी) को कामदी (कॉमेडी) से उच्चतर माना है। उनका कथन है कि त्रासदी में गंभीर व पूर्ण कार्य का अनुकरण होता है। इसके पात्र आदर्श पात्र होते हैं एवं इसमें सुखद भाषाओं व विभाषाओं को स्थान मिलता है आदि।[4] आलोचकों का मत है कि काव्य शास्त्र के शब्दों के अनुवाद उच्चतर (हायर) व निम्नतर (लोअर) असंगत है। उनका कथन है कि उस युग में उन शब्दों के अर्थ कुछ और ही होते थे तथा आज उन्हीं धर्मों को ध्वनित करने वाले उपयुक्त पर्यायवाची शब्दों का अभाव है। फिर भी यह सर्वसम्मत सा ही है कि अरस्तू ने दुखान्त नाटकों को सुखान्त नाटकों से अधिक महत्व दिया है। सुखान्त[5] नाटकों में उन्होंने कलात्मकता का अभाव पाया और उनका उद्देश्य कृत्रिम

---

1 भारतीय नाट्यसाहित्य, सम्पादक डा० नगेन्द्र, निबन्ध, 'यूरोपीय नाट्यशास्त्र का विकास' लेखक डा० राम अवध द्विवेदी प्रथम संस्करण।
Civilization in the Homeric periods was very young
The making of Literature Chapter IV

2 *Aristotle was interested in the kind of literary law not which* he made but he discovered T S Eliot the use of poetry and use of criticism-Essay-Appology for the countess of pombroke

3 Dr Saintsbury A History of English criticizm Introduction to Chapter I

4 On the Art of poetry Page 35

5 आलोचकों का मत है कि अरस्तू ने प्रहसन का ही विवेचन किया था, सुखान्त नाटकों का नहीं। हिन्दी साहित्यकोश पृ० ३७८

प्रकृति अनावर एकता (यूनिटी आफ टाइम, प्लेस एण्ड एक्शन) पर बल देना है। यह एक ही दिवस की घटना एक ही स्थान पर अबाध रूप से प्रदर्शित करने का आदेश देना है। अरस्तू के ग्रंथ का विवेचन करते समय यह नही भुलाया जा सकता कि यह काव्यशास्त्र है नाट्यशास्त्र नही—यह 'ड्रामेटर्जी' न होकर 'पाइटिक्स' है एव यह आकार म भी भरत के नाट्य शास्त्र का चतुर्थाश भी नही है। अतएव अरस्तू के काव्यशास्त्र म भरत मुनि के नाट्यशास्त्र के समान नाटको की सागोपाग व्याख्या सभव न हो सकी।

रोमन नाटक

जिस प्रकार अरस्तू के काव्यशास्त्र ने यूनानी नाटको को प्रभावित किया उसी प्रकार उसने लेटिन को भी प्रभावित किया। इसके साथ ही लेटिन नाट्य शास्त्रियो ने भी लेटिन नाटक के विकास मे अपना प्रभाव दान किया। ईसा से तीसरी शताब्दी पूव के युग से ही यूनानी नाटको ने लेटिन नाटको को प्रभावित करना प्रारम्भ कर दिया।[1] प्लूटस ने देशज कथनको को छोडकर यूनानी वस्तु का चयन किया। टेरेंस ने यूनानी नाट्य पद्धति को अपनाया और प्रौढ और प्राजल भाषा का प्रयोग किया। इनके नाटको का कथानक बहुत उलझा हुआ होता था। उन्होंने कभी कभी दो दो यूनानी कथानको को एक ही नाटक म मिला दिया।[2] वे केवल मनोरजन करने वाले नाटककारो से भिन्न श्रेणी के नाटककार थे। रोमन गणतत्र ने वहा के नाटको को समापएं कला प्रदान की जिसका कि प्रभाव अ ग्रेजी के एलिजाबेथन युग के नाटक कारो पर भी पडा।

होरेस ने 'आर्स पोइटिका' म यूनानी कला को आदश मानने पर बल दिया।[3] उन्होने ग्लानि व घृणा को दूर करने के लिए वजनीय दृश्यो की व्याख्या की। इन्होंने ही पाच अको की केवल पाच ही अको की अनिवार्यता पर बल दिया और कहा कि यथा शक्ति मच पर देवताओ को अवतरित नहा कराना चाहिये। यही नही इगलड मे तो नाटक बीहड वन से निकल कर एक निश्चित पथ पर बढ़ने लगा।

---

1 The Drama in Europe by Eleanor F Jourdian First Edition (1924) P 14

2 Ibid page 16

3 He is by nature a conservative born classicist
Let the Greek models be never out of your hands The making of Literature J Scott Chapter 7

अंग्रेजी नाटकों का प्रादुर्भाव

रोमन साम्राज्य के पतन से लेकर रहस्यात्मक नाटकों (मिस्ट्रीज) के उदय काल तक [1] अर्थात् दसवीं शताब्दी से पूर्व [2] इंगलैंड में कोई सुव्यवस्थित नाटक विद्यमान नहीं था। मिस्ट्रीज और नैतिकता प्रधान नाटकों के प्रादुर्भाव व विकास में गिरजाघरों का विशेष हाथ रहा। [3] यहां कार्लमार्क्स की उक्ति चरितार्थ होती है कि जब कोई वाद जन्म लेता है तो उसके पतन के कीटाणु भी साथ ही जन्म लेते हैं। ठीक इसी का दूसरा पहलू यह था कि जो धार्मिक संस्थायें अभिनय के विरुद्ध थीं उन्होंने ही नाटक को जन्म दिया। एलार्डिस निकल का कथन सत्य ही है कि जब तक इन धार्मिक संस्थाओं का उल्लेख नहीं किया जायगा, नाटकों के विकास का विवरण अधूरा ही रहेगा।[4] अंग्रेजी भाषा के नाटकों का उद्गम मध्यकाल में गिरजाघरों के धार्मिक क्रियाकलापों से दसवीं शताब्दी तक हो चुका था।[5] उन दिनों गिरजाघर थके मांदों को आराम प्रदान करने वाला, व्यथित को सांत्वना देनेवाला, भूखे का पेट भरने वाला और मनोरंजन प्रदान करने वाला एक धार्मिक स्थान था। वहां विभिन्न व्यक्ति एक दूसरे से मिलते थे। [6] धर्म प्रचार निमित्त धार्मिक गुरु नाटकीय तत्त्वों की सहायता लेकर उपदेशों को अभिनय द्वारा प्रसारित करते थे। धार्मिक पूजा में प्रयुक्त भाषा कठिन थी जो जन साधारण की समझ से बाहर थी।[7] अतएव अनपढ़ लोग धार्मिक तथ्यों से अभिनय द्वारा अवगत कराये जाते थे। कभी कभी पादरी मूकाभिनय द्वारा तथा कभी संवादों के द्वारा धार्मिक प्रदर्शन करते थे। [8] नौवीं शताब्दी तक आते

1 No regular Drama between the fall of Roman Empire and the rise of mysteries A Nicoll The British Drama P 22

2 The ritual of the church had itself something dramatic within it and by the 10th century that ritual extended into the rudiments of a play Ibid

3 The drama of our language had its remote origin in the ritual of the church The Chief British Dramatists Preface P 11

4 The British Drama A Nicoll Page 19 20

5 Religious in character the drama was the product *of allegorical* interpretation of nature sanctioned by christian theology Resurrection of Chirst from the dead Hist of Eng Poetry Chap X The rise of Drama in England by Court Hope

6 The British Drama P 19 20

7 The Chief British dramatists P 11

8 To make plain to the ignorant the more significant episodes of the Gospel story narrative was put into dialogue (chanted into Latin) the several characters being represented by priests The Chief British dramatists Page 11

भाते धार्मिक पर्वों पर एकत्र समूह के सामने सवादा द्वारा धार्मिक प्रचार किया जाने लगा। ऐसा ही एक महत्त्वपूर्ण और प्रारम्भिक सवाद है—'क्वम क्वरिटिस' जो ईसा की महानता से सम्बन्धित है। इसम तीन स्त्रियों की भूमिका म काय करने वाले पादरी या भ्रम लड़के ईसा की कब्र पर जाकर कहते हैं —

> ओ ईसाइया तुम किसे खोज कर रहे हो ?'
>
> 'ओ स्वर्गीय जना। नेजरथ के जसस को खोजते हैं हम, जिसका कि वध किया गया।'
>
> वह यहाँ नहीं है वह तो उसके ही पूव कथनानुसार ऊपर उठ गया है।'
>
> 'जाओ उद्घोषित करो, वह कब्र से ऊपर उठ गया है। [१]

एसे ही सवाद अंग्रेजी के प्रारम्भिक नाटका—रहस्यात्मक और जादूमय नाटका के उद्भव का कारण बने। चौदहवीं शताब्दी म—सन् १३११ म, वियना के सम्मेलन मे ऐसे अभिनयात्मक सवादो का धम प्रचार म सहायक बनने की धार्मिक अनुमति भी दे दी गयी। [२] फलत ईसा के पूरे जीवन साइकिल्स—चलते फिरते दृश्यो के रूप म दिखाये जाने लगे। [३] इन चलते फिरते दृश्यात्मक प्रदशनो म 'टाउनले' के दृश्य नाटकीय विकास की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण माने जाते है। इनम भी दी सक्किण्ड सपडस प्ले का अनूठा स्थान है। उसमे गरीबी भयङ्कर शीत एव मानव की विवशता का चित्रण है जो आज की यथाथवादी कलाकृतियो से तुलनीय है। [४] भेद यही है कि आज का कलाकार जागरूकता से निम्न श्रेणी को अपनाता है और ऐसे पुरातन नाटको म जीवन का चित्रण करत समय स्वत आवश्यक वास्तविकता का समावेश हो जाता था। अंग्रेजी म यह नाटक म नाटक दिखाने वाले नाटय का प्रथम उदाहरण है। [५] इन दृश्यो म बाइबिल की कथा का पूरा निर्वाह किया जाता था। 'दी ब्रोम आव इब्राहम एण्ड ईसा' के इसके उदाहरण स्वरूप देखा जा सकता है। इसमे भगवान इब्राहम की परीक्षा लते हैं। वे उसके पुत्र का वध चाहते हैं। इसकी कथा

---

1 Text quoeted in E K Chamber s Medieval stage II 9 Translated in English by A Nicoll in foot note No I P 21

2 'The starting point of modern drama is the Recurrection of Chirst from the dead Court Hope History of English poetry Vol I Chapter X

3, The British Drama by A Nicoll P 25 to 40

4 Ib d

5 इसका रचना काल चौदहवीं शताब्दी का मध्यकाल माना जाता है।

हमारे यहाँ की मोरध्वज हरिश्चन्द्र व शुन शेप आदि की कथाओ की कोटि म रखी जा सकती है। उदाहरणाथ

डीयस [1] — "मेरे दूत ! अपने पथ की ओर दृढता से आगे बढो ! पृथ्वी के मध्य तक तुम जाओ—
मैं अभी इब्राहम के हृदय की परीक्षा लेना हू वह उसम सफल होता है या नही।'

इब्राहम —"यद्यपि मेरा हृदय भारी हो जाये !
देखकर रक्त मेरे पुत्र का,
फिर भी मैं ऋण चुकाने से विमुख नही हो सकता
और तुम शीघ्र ही आओ। आदि।

इन अभिनयात्मक प्रदशना म भावशबलता विद्यमान थी जो भावप्रधान नाटको [2] के उदय का कारण बनी। इनकी भावनायें लोगो के हृदय के छू लेती थी। फलत जनता अभिनय म देश भाषा को समझ सकने के कारण अधिक रुचि लेने लगी। इनम लेटिन के साथ साथ देश भाषा का स्थान दिया गया और सुदर सवादो की सष्टि की गई। जब इन प्रदशनो की वस्तु बाइबिल स ली जाने लगी तब रहस्यात्मक नाटको (मिस्ट्रीज) का प्रादुर्भाव हुआ [3] प्रारम्भिक दिनो म इन अभिनयो में भाग लेने वाले व्यक्ति पादरी या गिरजाघर से सम्बधित अय कमचारी हुआ करते थे एव स्थान भी गिरजाघर ही हुआ करता था। इनके मार्मिक स्थलो को लेटिन म सीजस (Sedes) और अग्रेजी म 'स्टेशन्स' कहते थ। इन्हे फ्रेंच भाषा मे "मेसस' की सज्ञा दी जाती थी। प्रारम्भिक दिनो मे इनम दृश्यात्मकता और वेशसज्जा का अभाव ही हुआ करता था—भेड चराने वाले भेड चम धारण कर लेते थे और मुकुट मात्र पहिन लेने से

---

1 Deus— Mine angle fast hie thee on thy way
And unto mid earth anon do thou go-
Abraham s heart now will I easay
Whether he be stand fast or no (Lines 31 to 39)

Abraham— For though my heart be in heaviness set
The blood of my son to see
Yet will I not with hold my debt
And come as fast as ever may be (Lines 96 to 101)
The Brome of Abraham & Issac
The Chief British Drammtists Page 3

2 Ibid P 9

3 The Chief British Dramatists P 9

अभिनेता राजा मान लिया जाता था।[1] धीरे धीरे ऐसे अभिनय बढ़ने लगे और स्थिति यहाँ तक पहुँची कि धर्म में रुचि न रखने वाले व्यक्ति भी अभिनय देखने पहुँचने लगे। इस पर पोप ने ये अभिनय निषिद्ध घोषित करवा दिये।

भावप्रधान और रहस्यात्मक नाटक

यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है कि जिस वस्तु का निषेध किया जायेगा जनता उस ओर अधिक आकर्षित होगी। हुआ भी यही। यह सौभाग्य की ही बात हुई कि पोप ने अभिनय को निषिद्ध घोषित किया—इससे जनता ने अभिनय को अंगीकार किया और अब धार्मिक पुरुषों के जीवन वृत्त या देवताओं आदि की जीवनियाँ घूम घूम कर कई दिनों तक दिखाई जाने लगीं।[2] यह बगदा यात्रा के समान घूमता फिरता प्रदर्शन था। अतएव अभिनय अब जनता की वस्तु बन गया। इनमें हास्यरस से परिपूर्ण दृश्यों का भी समावेश हुआ[3] इसकी वस्तु दो क्षेत्रों से चुनी जाती—या तो साधु पुरुषों के जीवन से या बाइबिल की कथाओं से। जो प्रदर्शन साधू पुरुषों के जीवन वृत को दर्शाते थे उन्हें मिरेक्ल्स या जादूपूर्ण नाट्य कहने लगे—इनमें जादू का सी घटनाओं का संघटन होता था। जो बाइबिल की कथाओं व अतिमान वीय गाथाओं को प्रदर्शित करते थे वे मिस्ट्रीज या रहस्यात्मक नाटक कहलाते थे। इनमें रहस्यात्मक कार्य व्यापार की योजना रहती थी। विद्वानों ने मिरेक्ल्स और मिस्ट्रीज में विशेष भेद नहीं माना है।[4]

नैतिकतापूर्ण नाटक

मिरेक्ल्स व मिस्ट्रीज के प्रचार व प्रसार के लगभग डेढ़ सौ वर्षों बाद मारे लिटीज—नैतिकतापूर्ण अभिनयों का प्रादुर्भाव हुआ।[5] इनमें साधुओं का जीवन चरित्र तथा सत्तात्मक या रूपकात्मक पात्रों का जीवन वृत्त दिखाया जाता था मिरे

---

1 Ibid P 12

2 In England the Stations were often put on Carts floats, as we should call them pageant wagons as they were then termed
Ibid P 13

3 'When the Mystery play passed into the hands of unlearned laymen English took the place of Latin and this was accompnied by a bolder characterization and by a more abondant use of humour the comic scenes were introduced on appropriate occasions Ibid P XIII XIV

4 Technically there is no distinction between the two miracles dealing with the the lives of Sants and Mysteries with the theme taken from the Bible The two titles however were practically synonymous in England
The British Drama P 25 foot note No 1 A Nicoll

5 Ibid P 95

क्ल्स या मिस्ट्रीज से इनका वस्तु वि यास अधिक विस्तृत रहता था । यह सिनेका के नियमो के अनुसार अ को व दृश्यो म विभाजित किये जाते थे । सुसस्कृत धनाढ्य समाज के लिए बडे बडे भवनो मे इनका प्रदशन किया जाता था । इनमे अधिकाशत पेशेवार नट अभिनय करते थे । वहा चरित्र प्रतीकात्मक होते थे यथा पाप, पुण्य, लोभ, मोह आदि । सबसे पहले इ ही म आत्मा को ताप या पुण्य से सघप करते दिखाया गया । इनम चरित्र विकास के बीज पाये जात है । सबसे उत्तम अ ग्रेजी का मारेलिटी रूपक "एव्रीमैन" माना जाता है, जो सभवत डच रूपक 'एवलिजक (Eleck erlijk)से प्रभावित है ।[1] इसका काव्य श्लाघ्य और स्तुत्य है । इन रूपको मे तत्कालीन समाज पर व्यग भी कसा गया है । उदाहरणाथ 'मनकाइण्ड' म (उस पर) नोट, न्यूगाइस एव नाग्रो ए डेज द्वारा नायक पर आक्रमण किया गया है । यहा यह निवेदन अनुपयुक्त न होगा कि भावक समाज यह मानता है कि इण्टरल्यूडस का कोइ अथ निश्चित नही है ।[2] यह अ का के बीच प्रस्तुत किय जाते अत नाटक अब जीवन से प्रत्यक्ष रूप से सम्पक म आकर सच्चे करुण दृश्यो की अवतारणा करन लगा ।[3] इस नतिकतापूण नाट्याभिनय ने नाटकों को गभीर नतिक स्वर प्रदान किया । इनका प्रचलन सोलहवी शताब्दी मे भी रहा और "जोहन स्केल्टन का 'मैगनीफिशेस जिसम हेनरी अष्ठम को बुरे कार्यों को न करने की चेतावनी दी गई एक सु दर रूपक है । "मैगनीफिशेस' 'गुढ होप इत्यादि इसम पात्र हैं एव इस पर 'एमोरिको वस्पीनी' का प्रभाव दिखाई पडता है । नतिकतापूण नाटक रहस्यात्मक नाटको से अधिक लम्बे होते थे । रहस्यात्मक नाटको के लेखका का नाम ज्ञात नहीं होता था, किन्तु इनके लेखको के नाम भी विदित होते हैं । इनमे मानव की आत्मा का गुणो और दुगु णो से सघप बताया जाता था । इनम हास्यात्मक दृश्य भी विद्यमान रहते थे व गभीर वातावरण विद्यमान रहता था । इनके द्वारा धमपुरुषा और तत्का लीन सामाजिक बुराइया पर व्यग्य किया जाता था । यहाँ यह सकेत अनुपयुक्त न होगा कि इनमे नाटका के विकास के सभी तत्त्व विद्यमान थे । य ही अकुर आगे पूण नाटको म विकसित हुए यथा इनमे प्राप्य सघप आगामी नाटको का मेरुदण्ड बना और इनकी व्यगात्मक प्रवृत्ति सुखा त नाटको की रीढ की हड्डी बनी ।

---

1 Ibid P 95

2 Similar to the miracle plays and perhaps growing out of them were the Moralities in which the characters were Vice and Virtues Truth Inequality etc personified Introduction to the Marlow s Tragical History of Dr Faustus by W Modlen

3 A short History of English Litt By I For Evans P 80-82

एलिजाबैथ के युग के नाटक | 2

एलिजाबैथ के युग के नाटक

सन् १५५० के बाद विश्व विद्यालया म नाटका का प्रचलन अधिक होन लगा था। कम्पनियाँ नाटक दिखाने लगी थी। लवेस्टर कम्पनी ने १५७४ म नाटक दिखाने की राजकीय आज्ञा प्रदान करली थी। इन कम्पनियो ने नगरपालिकाआ के अध्यक्षा से नाटक दिखाने की आज्ञा चाही। ऐसी कई कम्पनियाँ बनी थी। उदाहरणाथ चिल्डन ग्राव चेपल रोल आदि। इन कम्पनिया व नगरपालिकाओ के अध्यक्षा म तनातनी रहती थी। नगरपालिकाओ के प्यूरीटिन अध्यक्ष अभिनयात्मक प्रदशनो के विरुद्ध थे कि तु महारानी नाटकीय प्रदशन के पक्ष मे थी। इस सघप के परिणाम स्वरूप नाटकीय कम्पनियो ने शहरा के बाहर अपने अपने नाटय गृहो का निर्माण कराया जहा नगरपालिका–अध्यक्ष (मेयस) हस्तक्षप नही कर सकते थ। सन् १८७६ म 'थियेटर का निर्माण हुआ और अय नाटयगृह भी बनाए गए। इस प्रकार नाटकीय प्रदशन का उपयुक्त स्थान तयार हो गया और नाटको का विकास होने लगा।

अग्रेजी के प्रारम्भिक नाटक

जब जादूपूण रहस्यात्मक, नतिकतापूण और आभ्यन्तरिक नाट्य लेखको को सिनका अरस्तू और प्लाटिास आदि के ग्रथ प्राप्त हुए अभिनय के उपयुक्त साधन मिले एव राजकीय कृपा प्राप्त हुई तब इङ्गलड मे साहित्यिक नाटको का प्रादुर्भाव हुआ। श्रेण्य नाटका (क्लेसिकल प्लेज) के प्रभाव स्वरूप भय और सनसनी पूण रक्त रजित प्रथम अग्रेजी त्रासदी गोरवडक की रचना हुई। इसके सह लेखक टोमस सक्विल व टोमस नाटन माने जात हैं। इसका अभिनय महारानी एलिजाबथ के सामने टम्पल विद्यालय के कानून के विद्यार्थिया द्वारा प्रस्तुत किया गया था। इसम यूनानी नाटका के समान जगह जगह कोरस (समूहगान) को स्थान मिला जो नतिक उपदेश देता है। यह अग्रेजी भिनतुकान्त छद का प्रथम नाटक माना जाता है।[1] इसके

---

1 अग्रेजी साहित्य का इतिहास ले० लोग दी एज आव एलिजाबथ।

नाटक के द्वारा सिनेका के दुखान्त नाटकों की प्रणाली के प्रचार और प्रसार का प्रयत्न किया गया जो असफल रहा किन्तु कालान्तर में सिनेका के अतिप्राकृतिक दृश्यों और भयावह घटनाओं को ऐतिहासिक और साहसिक नाटकों में स्थान दिया जाने लगा। एलिजाबैथ के युग के नाटकों में अवतरित भूत और भयावह घटनाओं का दिग्दर्शन इसके प्रमाण हैं। इसी प्रकार प्लूटस और टेरेन्स के नाटकों को आदर्श मानकर अंग्रेजी के सुखान्त नाटक 'रल्फ रायस्टर डायस्टर' व 'गेमर गर्टन्स नीडल्स' की रचनायें हुई। "रैल्फ रायस्टर डायस्टर" में पात्रों के नाम भी दिये गये हैं। इसमें स्थान संकेत भी प्राप्त होते हैं। उसकी प्रस्तावना में हास्य की महत्ता को प्रकट किया गया है।

> What creature is in health, either young or old
> But some mirth with modesty will be glad to use?
> As we in this interlude shall now unfold,
> × × × ×
> For mirth prolongeth life and causeth health
> Mirth recreats our spirits and voideth Pensivener
> Mirth increaseth aunity, not hindering our Wealth etc
> × × × ×
> Our comedy or interlude which we intend to play
> Is named Ralf Roister Doister in dead

इसका लेखक उद्वाल टेरेन्स और प्लॉटस के ग्रन्थों का ज्ञाता था। उसने होरस के अनुसार इसे ५ अंकों में विभाजित किया। अतः इसके कलापक्ष पर लेटिन प्रभाव स्पष्ट है परन्तु हास्य प्रतिपादन में अंग्रेजी रहस्यात्मक नाटकों की ध्वनि सुनाई देती है। गेमर गर्टन्स नीडल में यद्यपि अधिक मौलिकता दिखाई देती है, फिर भी वह नाटकीय संविधान की दृष्टि से अधिक उत्कृष्ट रचना नहीं है। दोनों ने ही देशज नैतिक व आभ्यन्तरिक नाटकों की पूर्ण रूपेण अवहेलना नहीं की है।

अंग्रेजी नाटक और विश्वविद्यालय विबुध

इस प्रकार हम देखते हैं कि सोलहवीं शताब्दी तक इङ्गलैंड में श्रेण्य और लोक नाटकों (पापुलर प्लेज) की दो अलग धारायें स्पष्टतया बहने लगी। चौदहवीं शताब्दी में ही चासर आधुनिक अंग्रेजी काव्य के जनक, के काव्य में नाटकीय तत्त्व—संवाद चमत्कारपूर्ण उक्तियों व चरित्र चित्रण आदि को स्थान दिया गया था। उनकी केण्टरबरी टेल्स को मानवीय कामदी कहा जाता है। उन्होंने ही सर्वप्रथम पात्र को सामान्य से विशेष व्यक्ति बनाया। फिर भी उनकी रचनायें दृश्य काव्य नहीं कही जा सकती।

विश्वविद्यालय विबुधा ने सामान्य रूप से और मार्लो ने विशेष रूप से नाट्य धारा को सबल बनाया। इन लेखकों ने पुरातन ऐतिहासिक ग्रन्थों इटली की कहानी पुस्तकों प्राचीन लेखकों एवं तत्कालीन देशी व विदेशी वातावरण और साहित्य से नाटकीय तत्त्व ग्रहण किये। इनसे पूर्व श्रेण्य नाट्य परम्परा के अनुयायियों के समक्ष नाटकीय नियम तो थे पर उनमें उत्साह का अभाव था और नाट्य परम्परा वालों के सामने नाटकों का कोई रूप विद्यमान नहीं था। उस समय में साहित्यिक नाटक सुगठित ठण्डे रूप व रूप विहीन उत्साह के दल दल में फंसा हुआ था।[1] लोक नाट्य परम्परा ने भी एलिजाबेथन नाटकों के निर्माण में सहयोग दिया यथा मिरेकल व मोरेलिटीज के पात्रों एवं विषयों में नाटककारों ने सजीव पात्र प्रदान किये। लोक नाट्य प्रचलित डेविल का प्रदर्शन भी साहित्यिक नाटकों में किया गया। सात पापों व विदूषक के हास्यों को भी इनमें ले लिया गया था। इसी समय टामस लाज टोमस नेश जार्ज पील रोबर्ट ग्रीन, जोहन लिली और क्रिस्टोफर मार्लो प्रभृति उत्साही और विश्व विद्यालय में शिक्षा प्राप्त किये हुए युवकों ने नाटकों को आगे बढ़ाया। यद्यपि टामस किड को सम्भवतः विश्व विद्यालय की स्नातक डिग्री प्राप्त न हुई थी फिर भी उनके मानसिक विकास, साहित्यिक विचारों और श्रेष्ठ नाटकों के कारण वे इसी समूह के सदस्य माने जाते हैं। ये लेखक ग्रब गली में रहते थे। वह स्थान जुआरियों धूतव्यसनी व्यक्तियों, वेश्याओं और एवं शहर में दुराचारी व्यक्तियों का अड्डा था। अतएव इनके नाटकों में नैतिकता का कोई महत्त्व नहीं दिया गया है। इन्होंने श्रेण्य नियमों का महत्त्व नहीं दिया और पुरातन नियमों में स्वच्छापूर्वक परिवर्तन कर दिये हैं। इनके इस रुख के कारण अंग्रेजी नाटकों को एक नवीन राह मिली।

विश्वविद्यालय विबुध और उनकी देन[2]

जाहन लिलि ने गद्य को मधुरता व सुंदरता प्रदान की। इन्होंने विस्तारपूर्वक उपमाओं को स्थान दिया है जिन्हें 'मनियां' कहा जाता है। ये उपमाएँ तुलना की अटूट लड़ियां हैं। अनुप्रास की भी छटा भी दर्शनीय है जैसे —

दी हाट लीवर आव एक होडलस लवर।

---

1 डा० सी० के० वेम्बस—'इंगलिश ड्रामेटर्जी,' पृ० १५११ प्र० स०

2 अतिप्राचीन काल से वि० वि० में नाटकों के अभिनय को स्थान दिया गया था सन १४०० में आक्सफोर्ड व केम्ब्रीज में अभिनयात्मक प्रदर्शनों को नियमवत् महत्ता प्रदान की गई। वे नाटक पूर्णरूपेण आदर्शवादी न रह सके। फिर भी नाटककार उस उद्देश्य के प्रति जागरूक अवश्य थे। महारानी एलिजाबेथ स्वयं इन्हें प्रेरणा देती थी। केंब्रिज कम्ब्रिज हिस्ट्री आव इंगलिश लिटरेचर जिल्द ६ अध्याय १०।

लैट मार्ई रयूड वथ एक्सक्यूज माइ बोल्ड रिवैंम्ट"

नेश के नाटकों की भाषा व्यग्य प्रधान थी और पील के नाटकों की विशेषता थी उनमें स्वच्छन्द प्रणय व्यापार का आग्रह। वे सुन्दर गीत व यात्रा (मास्क) लेखक भी थे। ग्रीन ने लन्दन की बुराइयों को स्पष्टतापूर्वक प्रकट किया। उन्होंने निम्न और घृणित 'अडर वल्ड' को सामाजिकों के सम्मुख प्रस्तुत किया। दोहरी वस्तु का प्रचलन भी पील की ही देन है। स्त्री पात्रों को उसने अधिक आकर्षक बना दिया जिनमें ही आगे चलकर शेक्सपीअर की 'बीट्रिस,' 'डेसडीमोना' मिरण्डा आदि का जन्म हो सका। उन्होंने प्रेम का उजस्वीकरण (सबलीमेशन) किया। विषय विस्तार की दृष्टि से व लेंगलेंट या वडसवथ जितने महान् हैं। "किड" ने नाटकों को अधिक सनसनी पूर्ण बना दिया व छन्द को सुन्दर बनाने का प्रयास किया। उन्होंने सर्व प्रथम जागरूकता से आन्तरिक संघर्ष को नाटकों में स्थान दिया। दुखान्त नाटकों को विकसित कर हैमलेट' और "दी डचेज आफ मेलफि' की रचनाओं के कारण बने। उनका नाम इस समूह के लेखकों में आदर के साथ लिया जाता है।[1] उनकी स्पेनिश ट्रेजेडी रक्त रंजित वस्तु प्रधान नाटकों में मुख्य है। इसकी रचना सिनेका के नियमों के अनुसार की गई थी। इसमें भय समूह-गान (कोरस) भूत, पागलपन के दृश्य, खलनायक आदि के दर्शन होते हैं। इन सभी लेखकों में क्रिस्टोफर मार्लो का स्थान सर्वोपरि है।

क्रिस्टोफर मार्लो

मार्लो की शिक्षा दीक्षा किंग्स स्कूल में हुई थी जहाँ का पाठ्यक्रम पुनर्जागरण काल के अनुकूल था। उस स्कूल का उद्देश्य लेटिन शिक्षा दीक्षा देना था। वहाँ श्रेण्य और आधुनिक श्रेण्य (नियो-क्लासिकल) नाटकों का अभिनय किया जाता था। विद्यालय में[2] कुशल अभिनय की परम्परा चल रही थी। मार्लो ने वातावरण से लाभ उठाया। उसकी नाटकों में रुचि जाग्रत हुई। विद्यालय के पाठ्यक्रम से पीछा छुड़ाने के पश्चात् उन्होंने नाटक लिखे। उन्होंने श्रेण्य व लोक नाट्य परम्पराओं के मिश्रण का प्रयास किया। उन्होंने नाटकों को अधिक गम्भीर व अनुभूति से परिपूर्ण बनाया और शास्त्रीय नियमों का कठोरतापूर्वक पालन नहीं किया। इनके नाटकों में प्रस्तावना (प्रोलाग) व उपसंहार (एपिलाग) के निर्माण व प्रयोगों में स्वच्छन्दता के दर्शन होते हैं। उनकी सबसे प्रबल देन है—भिन्न तुकान्त छन्द का सुधार।

---

1 चीफ ब्रिटिश ड्रामाटिस्ट, पृष्ठ १०६१—अपेण्डिक्स

2 डॉ० एफ० एस० बोस—क्रिस्टोफर मार्लो—भूमिका, प्रथम

उन्होंने गोरवडक के छन्द में कलात्मक परिवर्तन किए। उनकी रचनाओं में भाव एक पंक्ति से दूसरी में अबाध गति से बहते चलते हैं[1] उन्होंने अच्छे व बामुराद मुहावरों का प्रयोग किया और आत्मपरक सम्वादों को स्थान दिया। मार्लो ने 'सर्रे' की 'लैंक वर्स' को अपनाया। इसमें आयंबिक पेंटामीटर का उपयोग किया जाता है। मार्लो ने लोकनाट्य परम्परा के छिछले हास्य के स्थान पर महत् कार्यों को प्रदर्शित किया। उनके सम्वाद सजीव व प्रभावोत्पादक होने लगे—जैसे

'ओह! एशिया के ऐश्वर्य सम्पन्न सम्राटो!

क्या तुम पूरे दिन में केवल बीस मील ही गाडी खींच सकते हो!'[2]"

मार्लो की कृतियों पर मैकेविलि का प्रभाव दिखाई देता है। मैकेविलि भाषण स्वातन्त्र्य में आस्था रखता था। मार्लो ने भी यही किया। इन्होंने तैमूरलंग में प्रभुता के लाभ को चित्रित किया है। नायक तमूरलंग तलवार के बल पर सिंहासनारूढ होता है और न्याय के दरवाजे बन्द कर देता है। फास्टस में डा० फास्टस ज्ञान प्राप्ति की चिर अतृप्त कामना लिये रहता है और अन्त में शैतान को अपनी आत्मा बेच देता है। इसका तो कथन है कि सभी ज्ञान व्यर्थ है—केवल जादू ही उत्तम है।[3] इनके इसी नाटक में विदूषक को स्थान दिया गया है। अन्य नाटकों में इसका अभाव ही है।

टेम्बरलेन के प्रोलाग में तो इसकी निन्दा भी की गई है। कतिपय आलोचक डा० फास्टस के विदूषक वाले दृश्य को क्षेपक मानते हैं।[4] आज प्राप्य नाट्य प्रतियों में यह अंश भी प्रकाशित किया जाता है। इसी प्रकार से उनका तमूरलंग भी उस परम्परा का प्रथम ऐतिहासिक नाटक है जिसका अनुसरण शेक्सपीयर ने अपने रिचार्ड द्वितीय में किया है।[5]

---

1 He introduced run on lines and pauses in the lines C Marlowe by Dr W W Stout P 151 First Edition

2 'Ho'a ! Ye pamperd Jades of Asia !
What can ye draw but twenty miles a day ? (Tamburlaine)

3 "Philosophy is odious and obscure
Both law and physic are for petty wits
Divinity is the besest of the three
It is magic that hath ravished me —Dr Faustus

4 William Mod'en Christopher Marlowe—Discussion of Dr Faustus

5 Concise Cambridge History of English Lit—Marlowe

'ज्यू ग्राव मारटा" म स्वरा लोभ को सुदर रूप से चित्रित किया गया है। इन नाटका की भाषा ग्रत्यन्त ही सजीव व सबल है। 'एडवड सकिंड" मे भी ग्रत्यन्त करुरा दृश्यो को दर्शाया गया है। इसके ग्रतिम दृश्य मे तो इतिहास की नवीन व्याख्या की गई है। उसम वेजोड भय को स्थान दिया गया है।[1] मार्लो के नायक साधाररा नैतिक नियमो को नही मानते हैं। व महान् व्यक्ति ग्रपनी व्यक्तिगत ग्राकाक्षाग्रो को पूरा करना चाहते हैं। मार्लो के ग्रनुसार त्रासदी म साधाररा पुरुष का पतन नही दिखाया जाता है। वहा तो एक महान् व्यक्ति वाह्य परिस्थितिया से सघप करता हुग्रा दिखाई देता है जिस पर ग्रत म वाह्य परिस्थितिया की विजय होती है। इसी विचार को शेक्सपीयर के नाटका मे विस्तार मिला है। शेक्सपीयर ने उस ग्रधिक स्पष्टता से मुखरित किया है।[2]

मार्लो के दोष

उपयुक्त गुरा के साथ मार्लो के नाटका में कुछ दोष भी पाये जाते हैं, जसे उनके दृश्यो मे आवश्यकता से ग्रधिक सनसनीपूरा घटनाग्रा का दिग्दशन होता है। उनके नाटक एक ग्रादमी के ही, नायक के ही क्रिया कलापा का चित्ररा करते हैं। उनके नाटक विभिन्न दृश्या का एक समूह दिखाई देते हैं—दृश्या मे ग्रापस मे तारतम्य का ग्रभाव सा पाया जाता है। उनमे गाम्भीय का ग्राधिक्य तथा स्त्री पात्रो व हास्य का ग्रभाव पाया जाता है। इसी हेतु कहा जाता है कि जहा शेक्सपीयर के नाटक सभी को मोह लेते हैं वहीं मार्लो के नाटक कुछ ही सामाजिकों को ग्रानन्द प्रदान करते हैं।[3]

निष्कष

इस प्रकार उपरिलिखित विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि सिनेका के ग्रादर्शो पुनर्जागरण काल की प्रवृत्तिया एव विश्वविद्यालय मे शिक्षा प्राप्त नवयुवको के समूह ने गिरजाघरो के ग्रभिनया व लोक नाट्या न साहित्यिक नाटका को सुदर स्वरूप प्रदान करने का प्रयास किया। जाहन लिली ने गद्य म सुधार किया पील ने राजकीय सहायता प्राप्त कर ग्रभिनय के घधे को ऊँचा उठाया एव ग्रीन ने दोहरी वस्तु का सूत्रपात किया व ग्रौरता को पुरुष वेश मे प्रस्तुत करना प्रारम्भ किया। मार्लो ने भिन्न तुकात छन्द व त्रासदी के सिद्धान्त ग्रादि प्रदान किए। इन्होन लोक नाट्य व साहित्यिक धाराग्रा के समन्वय का प्रयास किया। इन दोना का सुखद सम्मिश्ररा कर नाटक को सुन्दर

1 Terror beyond any scene Charls Lamb Essays P 85
2 The Chief Britsh Dramatists P 1062,
3 To some he apparently makes no appeal where Shakespeare appeals to all —C Marlowe by U M E Fermor P 108

स्वरूप देने का काय विश्व विख्यात नाटककार शेक्सपीयर ने किया। उन्होंने तत्कालीन लोक प्रचलित नाट्य प्रणालियो, विश्वविद्यालय मे शिक्षा प्राप्त नवयुवको म प्राप्य नाटकीय सुलक्षणो एव शास्त्रीय पद्धतियो का सुखद समन्वय किया। [1] तत्कालीन वातावरण ने भी उसे सहयोग प्रदान किया।

शेक्सपीयर और उनका युग

विश्व इतिहास म ऐसे कई युग हैं जो जीवन, साहित्य व मानव के मानसिक विकास के अध्येता के लिए आकर्षण के केन्द्र रहते हैं। भारत मे वैदिक युग यूनान मे सुकरात व सोफिस्टस के युग और इग्लैण्ड म सोलहवीं शताब्दी [2]—ऐसे ही युग कहे जा सकते हैं। इस काल मे इगलैण्ड मे ही नही समस्त यूरोप मे विचार स्वातन्त्र्य रूढ़ियो से मुक्ति की आकाक्षा समुद्र पार के देशो के प्रति जिज्ञासा नवजात भूखण्डो के प्रति मोह आदि का उदय व प्रस्फुटन हुआ। यूनानी व लेटिन साहित्य के प्रति रुचि भी बढी और पोप के प्रति लोगो की श्रद्धा का ह्रास होने लगा। ऐहिक दृष्टि से जीवन म अधिक आनन्द प्राप्त करने के साधन जुटाये गए और विश्व को नवीन व आश्चयमयी दृष्टि से देखा गया —

"ओह ! आश्चय !

वहाँ कितने सुदर प्राणी हैं !

कितना सुन्दर है मानव ! ओह ! वीर नूतन सृष्टि [3]'

उस युग मे मानववादी विचार धारा ने बल प्राप्त किया अत सभी को सुखमय देखने की कामना की गई। [4]

"ओह मने कष्ट उठाया

उनके साथ, जिन्हे मैंने पीडित देखा।

इसी युग मे राज्य सत्ता व आध्यात्मिक सत्ता का एक्य हुआ और महारानी को सर्वोच्च व सर्वोपरि सत्ता प्राप्त हो गई और वह राष्ट्र की ही नही, चच की भी रक्षिका मानी जाने लगी। सौभाग्य से एलिजावथ को नाटको से प्रेम था जिससे

---

1. *विस्तृत विवेचन के लिए देखिए शेक्सपीयर का विवेचन।*

2 Bacon s *essays—Introduction* by Selby

3 O Wonder !
How many goody creatures are there
How beauteous man kind is ! O brave new world
Mirranda-Tempest

4 Ibid

नाटककारो को प्रोत्साहन मिला। जो प्युरिटिन नाटका के कट्टर विरोधी थे, उन्होने भी रानी की कृपा प्राप्त करने के लिए नाटका का समथन किया।[1]

तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितिया ने भी साहित्यिक उत्थान और नाटको के उत्कष म सहयोग दिया। इगलण्ड की स्पेन पर जब राजनीतिक दृष्टि से विजय हो गई तब अग्रेजो ने अपने को स्पेन वालो से साहित्यिक दृष्टि से भी आगे बढाने का प्रयास किया। फलत नाटको के प्रणयन की भी प्रेरणा मिली। नाट्य साहित्य समृद्ध बनने लगा। मिल्टन के शब्दो म उस समय का राष्ट्र शक्ति शाली व्यक्ति के समान घोर निद्रा स उठा और अपनी कच राशि सवारने लगा।[2] वाणिज्य के विकास के कारण लोगा के रहने का स्तर ऊँचा बढ गया और लोग अत्यन्त ठाठ बाट से रहने लगे। वे विलास प्रिय हो गये। 'क्रिसमस,' 'कडलमस' 'ईस्टर' 'मई दिवस,' 'प्लो मडे,' लेमास टाइड 'श्रोवोडाइट,' 'माइकेलमल 'सीड के डे और 'आल-होलो ईव' आदि उत्सवो पर हृदय खोल कर आनन्द मनाये जाते थे। वे बैलो को लडाने, सूअरों के द्वन्द्व और मुर्गों की लडाई आदि मे अत्यन्त रुचि रखने लगे। वे नक्ल (मास्क) मे भी भाग लेने लगे। इस प्रकार जब राष्ट्र की उन्नति हो रही थी समुद्र से नई-नई खबरें प्राप्त हो रही थी साहित्य की श्री वृद्धि की आकाक्षा प्रबल थी, धम और राजनीति के कलह का अन्त हो चुका था और महारानी स्वय नाटकीय प्रदशन के पक्ष मे थी, उस समय अग्रेजी नाटका को शेक्सपीयर के रूप मे एक महान् कलाकार प्राप्त हुआ।

उपयुक्त विवेचन से ज्ञात होता है कि शेक्सपीयर के युग म न तो उत्साह का ह्रास था और न साहित्यिक वातावरण का ही अभाव था। यही नही जो प्रणय व्यापार और वीरता के काम पहले पठन सामग्री मात्र ही थे, उस युग मे मँच पर साक्षात रूप से दिखाये जाने लगे। पहले केवल पढा-सुना ही जाता था कि—

दिवस का हुआ अवसान औ रात्रि का जब हुआ आगमन
\+ + + + +
\+ + + + +
युवती लीडिया का प्रणयी वीर

---

1 वासिंघम नामक प्युरिटिन ने रानी की कृपा प्राप्त करने के लिये क्वीन्स कम्पनी नामक नाटक कम्पनी के प्रादुर्भाव में सहयोग दिया।

2. a noble and pussiant nation rousing herself like a strong man after a deep (and sound) sleep shaking her invincible locks Greene The History of English People, Elizabethan Age

आ उपस्थित हुआ उसके समीप
'सुभग कहो कहाँ से आये ?' कहा सुन्दरी ने
+ + + +
+ + + +
'ओ सुमुखी ! आया मैं आज ही,
तुम्हारा जन्म मरण का साथी ।[1]' आदि ।

अथवा पहले यह सुना ही था कि—मेरे तो प्रणय के आलम्बन केवल तुम ही हो नाथ[2] परन्तु अब मंच पर सजीव पात्रों का वार्तालाप सुना कि स्वर्ग वहाँ है जहाँ जुलियट रहती है। इन दृश्यों से जनता मंच की ओर बहुत आकर्षित हुई।[4]

शेक्सपीयर ने अपने नाटकों में पूर्व प्रचलित नाट्य पद्धतियों का सुन्दर समन्वय कर उन्हें अपनी मौलिक उद्भावना से बल प्रदान किया। उन्होंने लिलि की सुकोमल क्षणों को चित्रित करने की प्रतिभा 'गाडन आव फैवर शेम' के रचयिता की मनोवैज्ञानिक प्रणाली, किड के त्रासमय वातावरण प्रस्तुत करने की पद्धति मार्लो की प्रगीतात्मकता तथा श्रेण्य व स्वच्छन्द नाटकीय धाराओं के सद्गुणों को अपनी रचनाओं में स्थान दिया। पूर्वोक्त सभी गुण अपनी परिष्कृत अवस्था में अब एक ही नाटककार शेक्सपीयर की रचनाओं में दिखाई देने लगे।

नाटककार शेक्सपीयर प्रारम्भिक प्रयास

कहते हैं कि शेक्सपीयर ने अपना लन्दन का जीवन अस्तबल के नौकर के रूप

---

1 ' When day was gone and night was some
× × × ×
The lady Spiedia gallant youth
Stand straight by her side
What country come ye fare ? Sl ^ said
O it was this very day that I came
× × × —
With you to live and dee —Folk song Too much lov. by the 16th Century people

2. Of all mankind in mind
I love but you alone —Maid—A XIV Century folk song

3 Heaven is there
Where Juliet lives —Romeo-Shakespeare

4 ' Drama shows man doing and feeling and Elizabethan drama presented an enlarged relam of acting and suffering The contemporay audience saw in it a glorification of its own desires —Introduction by Esther Cloudman Dunn to the *Eight famous Elizabethan plays*

म[1][2] प्रारम्भ किया । तत्पश्चात् वह अन्य ख्याति प्राप्त नाटककारो की कृतियो की प्रतिलिपियां करने लगा । फिर वह लब्ध प्रतिष्ठ नाट्य लेखको के साथ साथ (इन कोलोबरशन विथ) लिखने लगा । उसने मच पर नट के रूप म भी काम किया । जब उसने नाटकीय विधाओ व मच की आवश्यकताओ तथा सामाजिको की मनोदशाओ का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया तब स्वय स्वतत्र रूप मे नाटक रचना करने लगा । इसके हा युग म नाट्य क्षेत्र म इसम कई व्यक्ति ईर्ष्या रखने लग । इसके आने पर ग्रीन ने क्रुद्ध होकर मार्लो आदि से नाट्य क्षेत्र को छोड देने की सलाह दी ।[3] बनजानसन भी इससे अप्रसन्न था और कहता था कि शेक्सपीयर बहुत कम यूनानी भाषा जानता है और लेटिन उसस भी कम ।[4] बनजानसन का तात्पर्य यह था कि शेक्सपीयर जब यूनानी और लेटिन भाषायें ही नही जानता तब उसके उक्त भाषाओ म लिपिबद्ध

---

1 (a) Thou in our wonder and astonishment
Hast built thyself a life long monument —Milton

(b) Soul of the age!
The applause! delight! and wonder of our sight
My Shakespeare rise! I will not lodge thee by—
Chaucer or Spenser or bid Beaumont lie
A little further to make thee a room
Thou art a monument without a tomb —Benjonson

(c) To judge Shakespeare by Aristotle s rules is like judging a man by the laws of one country who acted under those of another —Pope—in prefaces to Shakespeare as quoted by Saintsbury in his History of English Criticism-Chapter IV

(d) Shakespeare had no theory of literature only the desire to interest the public and a talent so flexible that it immediately adapted to every genvre and imitated every note on which a poet had ever played —Legouis & Cazamian-A History of English Literature-Advent of Shakespeare

2 आज आलोचको मे शेक्सपीयर के अस्तित्व व उसकी रचनाओ के बारे म मत भेद हैं । कोई कहता है कि बेकन ने शेक्सपीयर के नाटक लिखे तो किसी का मत है रटलड ने । कोई एडवर्ड वेरो को शेक्सपीयर के नाटको का रचयिता मानता है तो कोई मार्लो को । फिर भी आज साधारणतया अधिकांशत यह माना जाता है कि शेक्सपीयर को नाटकों के लिखने वाला वही था और उसके नाम से प्रचलित प्रत्येक नाटक म उसका थोडा बहुत हाथ अवश्य रहा था । लिगवी एण्ड कजामिया अग्रेजी साहित्य का इतिहास-पृ० ४११

3 अग्रेजी साहित्य का इतिहास—लेखक लिगवी और कजामिया, पृष्ठ ४११

4 He knew little Greek and less Latin

शास्त्रीय नियमों के ज्ञान का तो प्रश्न ही नहीं उठता अतएव शेक्सपीयर तो बिना किसी आधार के ही नाटक लिखता है जिससे उसके नाटक हेय हैं। इस प्रकार नाटक क्षेत्र में इससे कई लोग ईर्ष्या करने लगे। वास्तव में शेक्सपीयर का व्यक्तित्व महान् था और उसका अनुभव विशाल था।

शेक्सपीयर की नाट्य कृतियाँ और उनकी विशेषताएँ

इसने जीवन को विभिन्न दृष्टियों से देखा है। इनके नाम से ३६ नाटक प्रचलित हैं जिनमें जीवन की विविधता प्राप्त होती है। इन्होंने त्रासदी व कामदी लिखी तो ऐतिहासिक व रूमानी रूपक भी प्रणीत किये।[1] इनकी साहित्यिक सेवायें अंग्रेजी साहित्य में बेजोड़ व विश्व साहित्य में सराहनीय हैं। प्रो० लिगवी का कथन है कि दूसरे लेखक जहाँ इतिवृत्त लेखन में भी सच्चाई का पूरा निर्वाह नहीं कर सकते हैं वहाँ शेक्सपीयर ने कल्पनामय वस्तु को जीवन से ओतप्रोत चित्रित किया है।[2] उनके नाटकों के कथानक इसके उदाहरण हैं।

कथानक

शेक्सपीयर ने अपने कथानक पूर्व प्रचलित कथाओं से चुने हैं। ग्रीक, रोम या अन्य भाषाओं में प्रचलित लोक कथाओं व साहित्यिक गाथाओं का भी इन्होंने सहारा लिया है। फिर भी घटनाओं का प्रस्तुतीकरण और भावों का प्रकटीकरण नितान्त मौलिक है। इसके ही कारण ये विश्व साहित्य में अपना स्थान रखते हैं। इनके विषय अधिकांशतः यौन ईर्ष्या पर आधृत दिखायी देते हैं। डा० ए० सी० ब्रेडले कहते हैं कि शेक्सपीयर का यह चुनाव श्लाघ्य है क्योंकि इससे अधिक कोई भावोत्तेजक विषय ही नहीं है।[3] कथा विस्तार में सजीव पात्रों ने सुन्दर सहयोग दिया है।

---

1 (a) इसी विविधता निमित्त उन्हें कई विद्वान कालिदास से श्रेष्ठतर मानते हैं। यहाँ यही निवेदन किया जाता है कि रचना आधिक्य किसी की श्रेष्ठता का द्योतक नहीं है। आलोचक तो यह देखता है कि काव्यकार क्या प्रदान करता है व उसके प्रस्तुतीकरण में कैसी सफलता मिली है। कालिदास के साहित्य में जीवन का जैसा चित्रण किया गया है वह अवश्य ही श्लाघ्य है—भूमिका कालिदास ग्रन्थावली

(b) It is never what a poem says that matters but what it is I A Richards as quoted in the use of poetry and use of criticism by T S Eliot—Prefatory notes First Edition

2 Other play wrights often made history unreal but Shakespeare could warrant the truth even of romance The History of *English Literature by Legouis and Cazamian* —P 421

3 शेक्सपीरियन ट्रेजडी, पृ० १४४

पात्र और चरित्र-चित्रण

शास्त्रीय व स्वच्छन्द नाट्य धाराओं का सुखद मिश्रण करने के कारण इनके नायक जब निश्चित रूपेण कुलीन नही होते हैं तब भी वे समाज मे उच्च स्थान अवश्य ही रखते हैं। उदाहरणार्थ आथेलो कुलीन या सम्राट न होते हुए भी साम्राज्य का स्तम्भ है। राज-सभा मे राजा जब यह सुनता है कि आथेलो डसडीमोना को भगाकर ले गया है तब वह सहम जाता है और उसके विरुद्ध कुछ भी कार्यवाही नही कर पाता है। डॅसडीमोना ने भी पिता को छोडकर प्रणयी आथेलो का समर्थन किया। अतएव वह उच्चतम व्यक्ति न होते हुये भी उच्चतम व्यक्ति-सम्राट-को अपने अस्तित्व से धुँधला किये हुए है। इस प्रकार इनके नायक या तो राजा, युवराज और कुलीन ही हैं या फिर उच्चता प्राप्त व्यक्ति हैं। इनके नायक अन्य पात्रो से ऊपर उठे हुए दिखाई देते हैं—वे अपनी सत्ता से सभी को दबाये रहते हैं। यद्यपि मार्लो के समान इनके नाटक एक पात्र का दिग्दर्शन (One man's show) मात्र तो नही बन जाते, अन्य पात्र भी नाटक मे अपना स्थान रखते हैं किन्तु नायक पात्रो से अत्यन्त उच्च और भव्य दिखाई देता है। अतएव इनके नाटको को भी एक पात्र का प्रदर्शन ही कहते हैं।[1] यहाँ यह कह देना अनुचित नही होगा कि यह एकाधिपत्य मार्लो के नाटको से कम ही है। प्रणय-नाटको मे तो नायिका भी महत्त्वपूर्ण बन ही जाती है। इतना होते हुए भी सत्य तो यह है कि इनके नाटको मे नायको और कहीं कहीं नायिकाओ को उच्चतम स्थान दिया जाता है। इनके नाटको मे पात्र बाहुल्य पाया जाता है। पात्र भावुक कल्पनामय और साहसी होते हैं। इनमे विशेष उल्लेखनीय हैं 'क्लाउन' 'फूल' या विदूषक। यह भारतीय विदूषक का सम्बन्धी प्रतीत होता है। यह राजा का मनोरंजन करता है तो राजा के साथ युद्ध मे भी जाता है और कभी कभी दार्शनिक भी बन जाता है।[2] फिर भी प्रमुख रूप से यह हँसोड और हँसाने वाला पात्र है जो विदूषक नाम को सार्थकता प्रदान करता है। इसके श्लिष्ट वाक्य और दार्शनिक तथ्य पाठको को प्रभावित किये बिना नही रहते हैं। इनके अतिरिक्त शैलीगत देशकाल सम्बन्धी उद्देश्य को पूरा करने वाली निम्नांकित उल्लेखनीय विशेषताएँ भी शेक्सपीयर के नाटको मे पायी जाती हैं —

(क) उन्होंने श्रेण्य व लोक नाट्य पद्धतियो का सुन्दर समन्वय किया है। उदाहरणार्थ श्रेण्य नाटको से अंक-दृश्य विभाजन प्राप्त किया और विदूषक को भी स्थान दिया। दुखान्त नाटको मे बाह्य शक्तियो का हाथ शास्त्रीय नियमो के अनुकूल

---

1 शेक्सपीरियन ट्रेजडी, पृ० १४४

2 हेनरी चतुर्थ नाटक मे।

है। भूत और विनोद भी उन्होंने इसी ओर से ग्रहण किये हैं। उनके नाटकों में विशेष सिद्धान्त का अनुसरण, स्वगत भाषण का प्रयोग और नायक का चित्रण भी शास्त्र सम्मत रूप से किया गया है। सिनेका के अनुसार भय, विषाद और करुणा की भावना को भी उन्होंने अपने नाटकों में स्थान दिया। साथ ही अपने ऐतिहासिक और सुखान्त नाटकों में लोक नाट्य पद्धतियों को अपनाया। सम्भवतः ग्राम्य जीवन का चित्रण एवं पात्रों के चरित्र चित्रण में यत्र तत्र हास्य का मिश्रण इङ्गलैंड की लोक नाट्य परम्परा के अनुकूल सिद्ध करते हैं। उन्होंने उपयुक्त तत्त्व श्रेष्ठ और लोक नाट्य धाराओं से ग्रहण किये किन्तु उन्हें अपनी प्रतिभा से अधिक परिष्कृत कर मौलिकता का परिचय दिया। जैसे भूत उन्होंने सिनेका से ग्रहण किया परन्तु उसे समयानुकूल वास्तविक बना दिया और उस पर पूर्ण रूपेण अंग्रेजी का रंग चढ़ा दिया।[1] इसी प्रकार से उन्होंने भाग्य के स्थान पर पात्र को अपने भाग्य का निर्माता बनाया।[2] फलतः पात्र बुद्धिगम्य (वास्तविक) हैं।[3] उन्होंने भय और विषाद को तो स्थान दिया किन्तु उन्होंने बाद वाले नाटककारों के समान इसे अमानुषिक और घृणोत्पादक नहीं बनाया।

(ग) उन्होंने भाषा को प्रौढ़ और मार्जित बनाया। भिन्नतुकान्त छन्द को सुन्दरता प्रदान की। उनके शब्दों में चित्रोपमता है जो सम्भाषण कला में युक्त है। यथा—

'उसने मशालों (टार्चेज) को ज्योतिर्मय बनने का पाठ पढ़ाया।'[4]

उनकी भाषा भावात्मक है। सामाजिकों को प्रभावित करने निमित्त काव्य का अनुसरण स्वाभाविक ही था। उस समय तक मंच सज्जा को तो अधिक स्थान मिल नहीं पाया था अतएव शब्द चित्रण आवश्यक थे। यही नहीं उस समय की भाषा ही भावना प्रधान भाषा थी।[5] उन दिनों मंच को तीनों ओर से सामाजिक

---

1 The Ghost was such a striking reality in fact that the oddity lay in not seeing it This is definitely English than in spirit The Drama in Europe in theory and practice by Eleanor F Jourdian—First Edition (1924) P 49

2 *Character is Destiny*

3 The British Drama by Allardyce Nicoll—Discussion of the Characters of Shakespeare

4 She taught tourches to burn bright

5 'Elizabethan English was preeminently the language of feeling Sampsom—History of English Literature—Language from Chaucer to Shakespeare

Soliloquy cannot be done away on the ground that it is unnatural xx for every dramatic language is unnatural

भी अपनाया गया। उसके द्वारा पात्र अपना अनुभव व्यक्त करता था। स्वगत द्वारा वे सामाजिकों को पात्रों की मनोवृत्तियों का परिचय दे देते थे। मुख्य रूप से उनके खल पात्र अपने मनोभावों को पहले ही प्रकट कर देते थे। 'इयागे', 'मैक्बेथ' और 'लेडी मैक्बेथ' आदि के स्वगत इसकी पुष्टि करते हैं। ये स्वगत विचारात्तेजक और जीवन की समस्याओं पर प्रकाश डालने वाले होते थे, जिनका आज भी आलोचक समर्थन करते हैं।[1]

(ग) जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से वस्तु का चयन किया और सुखान्त, दुखान्त, प्रहसन, रूमानीक मिदी एवं राष्ट्रीय ऐतिहासिक आदि सभी प्रकार के नाटकों की रचना की।

(घ) उनका अनुभव विशाल था एवं वे मानव हृदय के कुशल पारखी थे। अतएव उन्होंने पुरातन महान् पुरुषों व स्त्रियों को नवीन जीवन-दान दिया। 'सीजर' एंटोनी' 'ब्रूटस', एवं 'क्लियोपेट्रा' आदि इसके प्रमाण हैं।

(च) उन्होंने अपने नाटकों में विविध सामाजिकों की रुचि की ओर सजगता का परिचय दिया। उनके नाटकों में कुलीन व्यक्तियों के योग्य कथानक मिलता है तो निम्न श्रेणी वालों के उपयुक्त द्वन्द्व, अश्लील शब्द और हास्योत्पादक दृश्य भी प्राप्त होते हैं। उस युग के व्यक्ति व्यंग्यात्मक सृष्टि और अश्लील हास्य के चित्र देखना चाहते थे और उन्होंने अपने सामाजिक को सतुष्ट किया।[2] [3] यथा—

"ए सुमुखी! यदि मैं आ सकता पास तुम्हारे
(तो) गढा देता मेरा दस धार्मिक सिद्धान्त तुम्हारे मुख पर"[4]

शेक्सपीयर ने सामाजिकों का सर्वदा ध्यान रखा और उन्हें सन्तुष्ट किया। उन्हें उनकी इच्छानुकूल ऐसी सामग्री दिखाई जिसकी वे स्वप्न में भी आशा नहीं कर

---

1 Shakespearen Tragedy P 56 Foot note 1

2 The middle classes entered on the sixteenth century with characteristic tastes of their forefathers—a love of romances a simple allegory of vigorous satire and of coarse humour Concise Cambridge History of English Literature-Discussion of Renascence and Reformation

3 Shakespeare handled the most diverse subjects x x x x and provided hi audience with every pleasurable emotion they were able to enjoy —A Short History of English Literature by Legouis P 129

4 Could I come near your beauty with my nails
I d set my ten commandments in your face -Romeo

सकते थे।[1]

(छ) उन्होंने ग्रीक के समान दोहरी वस्तु का प्रयोग किया जो शास्त्रीय नियमों के अनुकूल था। उदाहरणार्थ 'मच्चएडोअबाउटनथिंग' में क्लाडियो और हीरो की कथा के साथ दासबरी और बजिस की कथा भी चलती रहती है। इसी भांति 'मिडसमर नाइटस ड्रीम' में प्रेम की हास्य अद्भुत और हड़ शक्ति के रूप में चित्रित करते हुए सरक्षकों का विरोध और प्रेमी युग्म की दृढ़ता को एक ही साथ स्थान दिया गया है। 'किंगलियर' में भी दो कथानक साथ साथ चलते हैं। शेक्सपीयर ने असादृश्य (कट्रास्ट) द्वारा भी वस्तु-विशेषता को प्रकट किया है। मैकबेथ के प्रारम्भिक उत्साह और स्वामी भक्तिपूर्ण वाक्य एवं रोमियो जूलियट के गहरा हास्य संवेगों के दृश्य इसके प्रमाण हैं। कहने का तात्पर्य यह कि इनके नाटकों में दो कथानक चलते दिखायी देते हैं जिनसे कभी मुख्य भाव की समानान्तर उदाहरण से पुष्टि होती है तो कभी उस असादृश्य से बल मिलता है।

(ज) उनका विश्वास था कि जो घटनायें मंच पर सफल हो गयी हैं उन्हें बार बार दिखाने से सामाजिकों के आनन्द की वृद्धि होगी[2] क्योंकि सामाजिक तो घटनाओं और सम्वादों को भूल जाते हैं और यदि उनका पुनः रसास्वादन करेंगे तो उनकी ओर अवश्य ही शीघ्रता से आकृष्ट होंगे। हास्य-रसपूर्ण सवादों और शृंगार रस से भरे हुए वाक्यों की पुनरावृत्ति इसके प्रमाण हैं।[3] एक ही नाटक में भी अनेक घटनाओं को दोहराया जाता है फिर भी घटनाओं की पुनरावृत्ति भिन्न कार्य को उत्पन्न कर सामाजिकों को खटकने वाली नहीं दिखायी देती है। उदाहरण के लिए 'मैकबेथ' के प्रारम्भ में 'विचेज' आती है और नाटक के बीच में भी, फिर भी वे दोनों बार अपना महत्त्व बनाये रखती हैं।

उपर्युक्त विशेषताओं के अतिरिक्त उनके दुखान्त नाटकों की निम्नांकित विशेषताएँ भी अवलोकनीय हैं —

---

1 he gave the audience what it wanted but in doing so gave it what it never dreamed of" Oxford Lecture on poetry by Dr A C Bradley P 365

2 A Literary History of English People by Jessurand—Abstract of the discussion of Shakespeare

3 (a) Thus give I mine and thus I take thy heart They Kiss x x Give me my own (Richard II-V-I)

(b) 'Sin from my lips? Give me my sin again Romeo Juliet (I-5)

उनके प्रारम्भिक दुखान्त नाटको म अतिभय और कल्पना के दशन होत हैं। शनै शन उन्होंने भय और विषाद को कम किया, फिर भी तत्कालीन समाज की रुचि क अनुकुल उनके नाटको म हत्याओ और वदनाओ को स्थान मिला है। ' ओथलो ' म नायक नायिका की हत्यायें हुई हैं तो मैकवय म राजा, राजा के नौकरो और 'मैकवथ आदि को मृत्यु से आलिगन कराया गया ह । रोमियो जुलियट ' म नायक नायिका को स्वग भेज दिया गया है। किंगलियर भी हत्याओ स परिपूण है। इनकी त्रासदी म उच्च वग के व्यक्तियो को दुख उठाकर मृत्यु स आलिगन करना होता है। उसम मृत्यु एक आवश्यक तत्त्व है ।[1] त्रास का कारण मनुष्य की दुवलता होती है—वह परिस्थितियो पर पूण अधिकार नही प्राप्त कर सकता है और दुख का भागी बनता है। इसम उसके कार्यों का प्राधान्य रहता है जिसम अव सर त्रास का जनक होता है। रोमियो, फ्रायर' का सदेश प्राप्त नही कर पाता है है और 'डसडीमोना अपने रुमाल को सावधानी से नही रख पाती है ।[2] फिर भी इन्होंने दुखान्त नाटको की यूनानी भावना का अन्धानुकरण नही किया है।

यूनानी दुखान्त भावना से भेद

यूनानी नाटको म दुख का कारण भाग्य या अदृश्य दैविक शक्ति माने जाते थे। शेक्सपीयर ने इस सिद्धान्त मे सुधार किया। उन्होंने बताया कि दुख का कारण वाह्य शक्ति नही होकर नायक की अपनी दुवलता है। एलार्डिस निक्ल सत्य ही कहते हैं कि—'शेक्सपीयर के नाटको के दुखमय अन्त का कारण प्रणय नही होता वह तो पृष्ठभूमि म ही रहता ह। दुखान्तता का कारण तो नायक की अपनी दुवलता ही होती है। [3]

ये दुखान्त नाटक भयावाह होत हैं एव मानसिक द्वद्व के मच पर भी सघष दिखाया जाता है। यथा जव इयागो का षडयन्त्र चलता है तव बाहरी द्वीप पर भी युद्ध हो जाता है। इनकी उच्च त्रासदी म मानसिक द्वद्व को महत्त्वपूण स्थान प्राप्त हुआ है।

---

1 Shakespeare s Tragedy x x essentially a tale of suffering and calamity conducting to death of a man of high estate x x Death is essential x x It is because of the action of the men x x x x Shakespearen Tragedy P 1 to 9

2 Chance plays a part x x x That man may start a course of event but can neither calculate nor control it is a tragic fact Shakespearen Tragedy Year 1958 P 9

3 The British Drama P 176

इनके दुखान्त नाटकों की एक विशेषता यह भी है कि नायक प्रारम्भ में उपस्थित नहीं होता है। वह थोडे समय के पश्चात् मंच पर दिखाई देता है।[1] इनकी त्रासदी में शान्त वातावरण बना रहता है। कारण यह है कि ये भावोत्तेजक स्थिति उपस्थित कर सामाजिकों को मानसिक सुख प्रदान करते हैं। तृतीय अंक (अधिकांशत) बहुत श्रममय और सनसनीपूर्ण घटनाओं से युक्त दिखायी देता है। इनके नाटक मंच के लिये ही लिखे जाते थे अतएव भावशबलता के उपरान्त मानसिक सुख अवश्य ही प्रस्तुत किया जाता था। इनके साथ ही उनके सुखान्त नाटक भी दर्शनीय हैं —

शेक्सपीयर के सुखान्त नाटक

शेक्सपीयर के सुखान्त नाटकों की विधाओं पर बियोमाउन्ट और फ्लेचर का प्रभाव पड़ा है। मंच-सज्जा और कृत्रिमता शेक्सपीयर ने उनसे ही ली है। टम्पस्ट के तूफान का चित्रण, इसका उदाहरण माना जाता है।[2]

अधिकांशत अंग्रेजी सुखान्त नाटकों की असफलता का कारण कार्य और कारण में निकट सम्बन्ध का अभाव माना जाता है। शेक्सपीयर के नाटकों में यह अभाव नहीं खटकता है। उनके सुखान्त नाटकों के अन्त में नायक नायिका का मिलन चित्रित किया जाता है।[3] नाटकों के अन्त में विवाहजनित हर्षोल्लास दिखाई देता है और वाद्यनाद में उनका अन्त होता है।

उन्होंने अपने युग के अनुकूल नाटक प्रस्तुत किये हैं जिनमें प्रणय चित्रण और साहसिक यात्राओं के दिग्दर्शन द्वारा उन्हें रोमन कामदी से भिन्न कर दिया है।

निष्कर्ष

अन्त में निष्कर्ष कहा जा सकता है कि शेक्सपीयर के नाटक सभी प्रकार के सामाजिकों को सन्तुष्ट करने की क्षमता रखते हैं। साधारण दर्शकों के लिये वहाँ सुन्दर वस्तु विद्यमान है। उनसे अधिक विचारशील व्यक्तियों के लिये चरित्र चित्रण प्रस्तुत किया गया है। कथोपकथन में अभिरुचिवालों को वहां सुन्दर शब्द और मुहावरे प्राप्त हो सकते हैं और संगीतप्रिय प्राणियों को लय और तुक सुनाई देगी। उनके नाटकों में प्रज्ञावान सामाजिकों को अथगाभाव मिले बिना न रहेगा।[4] अतएव उनके

---

1 Shakespearen Tragedy P 32

2 एलार्डिसनिकल की ब्रिटिश ड्रामा, शेक्सपीयर के सुखान्त नाटकों का विवेचन

3 वही।

4 देखिए—"दी यूज आव पोइट्री एण्ड यूज आव क्रिटिसिज्म" का उपसंहार, लेo टीo एसo ईलियट, प्रथम संस्करण।

नाटक अंग्रेजी साहित्य की अमूल्य निधि है। उनके नाटकों के उद्देश्य को निम्नांकित रूपों में रखा जा सकता है।[1]

(क) पूरी कहानी कहना।

(ख) मानवीय तत्त्वों की सहायता से कथा का विस्तार करना। एवं

(ग) सामाजिकों को मनोवांछित सामग्री प्रदान करना।

वे न तो जीवन का जैसा है वैसा चित्रित करते है और न जैसा होना चाहिये वैसा। वे तो जैसा जीवन हो सकता है वैसा चित्रण करते हैं।[2] इसीलिए उनके दुखान्त नाटकों में प्राप्य अश्लीलता से तथा सुखान्त नाटकों पर इस आक्षेप से कि–'शेक्सपीयर के सुखान्त नाटकों में कई बार ऐसा आभास मिलता है कि वे शीघ्रता से समाप्त किए गए हैं और कौन किससे विवाह करता है इसके प्रति नाटककार की उदासीनता दिखाई देती है।[3] आदि के कारण उनका आदर कम नहीं होता है। कहा जाता है कि आज तो शेक्सपीयर की पंक्तियों से भी अधिक उनके आलोचक हो चुके हैं। फिर भी माना यही जाता है कि शेक्सपीयर स्वयं ही अपने नाटकों के सबसे बड़े आलोचक थे। उनके नाटकों को पढते समय बच्चनजी की पंक्तियों का स्मरण हो आता है—

'हर एक तृप्ति का दास यहाँ
पर एक बात है खास यहाँ
पीने से बढता प्यास यहाँ'

इसी भाव को व्यक्त करते हुए प्रो० लिगवी कहते है कि उनके नाटकों का प्रत्येक पाठ नवीन आनन्द की सृष्टि करता है।[4] उनके नाटकों की यह विशेषता है कि वे तृप्ति प्रदान कर नवीन चाह को जाग्रत करते हैं।[5] उनसे आनन्द लेने वाला चाहिए —

---

1 "एलिजाबथन लिटरेचर" अध्याय ३ ले० प्रो० सेंटसबरी, प्र० स०

2 Shakespeare paints life neither as is it nor as it should be but as might be —English Drama by Dr Camilloplizzi edited in the Year 1935 P 15

3 A C Bradley—Shakespearean Tragedy, 1958 -P 59 to 70

4 There is in this (in the plays of Shaskpeare) something of the mysetry which Enobarbus ascribes to Cleopatra —
Age cannot wither her nor custom stale
Her infinite variety, other women cloy
The appetites they feed but she makes hungry
Where most she satisfies -A shor Hi tory of English
Litt P-134

5 A History of English Litt by Arthur Compton Rickett, 1953 P 154

जितनी दिल की गहराई हो उतना ही गहरा है प्याला,
जितनी मन की मादकता हो उतनी ही मादक है हाला,
जितनी उर की भावुकता हो उतना सुन्दर है साकी,
जितना ही जो रसिक उसे है उतनी ही समय मधुशाला।"[1]

शेक्सपीयर को भी किसी भी नियमों में नहीं बांधा जा सकता।[2] वे अपने आप में पूर्ण हैं। उनके पश्चात् नाटकों के सद्गुणों का ह्रास होने लगा।

1 हरिवंश राय बच्चन मधुशाला—पृ० १२२
2 टी एस इलियट—'दी यूज आव पोइट्री एण्ड यूज आव क्रिटीसिज्म'—निबन्ध "एपोलोजी फार दी काउन्टेस आव पेम्ब्रोक"।

उत्तर शेक्सपीयरकाल | 3

शेक्सपीयर के पश्चात् नाटक पतन

जिस प्रकार एक बडा वृक्ष दूसरे छोटे वृक्ष को अपने नीचे नही बढने देता है—यह एक प्राकृतिक नियम है उसी प्रकार से उत्तम साहित्यकार भी मध्यम या अधम साहित्यकार की ख्याति मे बाधक बनता है, यह साहित्य जगत की रीति है।[1] अंग्रेजी साहित्य मे चासर के बाद मन्थरता आगयी थी तो हिन्दी साहित्य मे तुलसी के पश्चात् रामभक्ति शाखा के कवि केशव 'हृदय हीन' कहलाने लगे। ठीक इसी प्रकार से जब शेक्सपीयर नाटक लिख चुके तब अन्य व्यक्ति क्या लिखते। उन्होने शेक्सपीयर के नाटको की हत्याओ, भयावाह घटनाओ एव ऐन्द्रियता और अश्लील उक्तियो को प्रमुखता दी। फलत नाटको की श्रेष्ठता का ह्रास होन लगा। आलोचको का कथन है कि शेक्सपीयर की प्रतिभा से नाटको के जो दुगुण भी गुण बन गये थे वे बाद के नाटककारो के पतन के कारण बने। साथ ही टैनिसन का कथन भी चरितार्थ हुआ कि पुरातन पद्धति नवीन नियमो को स्थान देकर स्वय लुप्त हो जाती है, अन्यथा एक ही सुन्दर नियम विश्व के कायक्रम को जड एव असुन्दर बना देता है। अतएव नाटको का पतन अवश्यभावी था। बनजोनसन ने नाटको को इस पतन-गर्त्त म गिरने से बचाने का प्रयास किया। इसी युग के अन्य नाटककारो ने भी उसे बचाने का प्रयास किया किन्तु बहुधा वे उसे एक दो डग आगे ही ले जाते थे। निम्नांकित विवेचन इस पर प्रकाश डालता है।

अन्य नाटककार

जोज चेपमेन ने व्यग के साथ सतर्कता और प्रसन्नता का समन्वय किया है। इनके नाटको मे दो दलो के सघर्ष का चित्रण किया जाता है जिसका अन्त मृत्यु द्वारा होता है। अतिप्राकृतिक पदार्थों को इनके नाटको मे विशेष स्थान मिलने लगा और

---

1 यहाँ भी डार्विन का "सर्वाइवल ऑव दी फिटेस्ट' का सिद्धान्त काम करता है।

जितनी दिल की गहराई हो उतना ही गहरा है प्याला,
जितनी मन की मादकता हो उतनी ही मादक है हाला,
जितनी उर की भावुकता हो उतना सुन्दर है साकी,
जितना ही जो रसिक उसे है उतनी ही समय मधुशाला। [1]

शेक्सपीयर को भी किसी भी नियमों में नहीं बाँधा जा सकता।[2] वे अपने आप में पूर्ण हैं। उनके पश्चात् नाटकों के सद्गुणों का ह्रास होने लगा।

---

1 हरिवंश राय बच्चन मधुशाला—पृ० १२२
2 टी एस इलियट—"दी यूज आव पोइट्री एण्ड यूज ऑव क्रिटासिज्म'—निबन्ध 'एपोलोजी फार दी काउन्टेस ऑव पम्ब्रोक।'

उत्तर शेक्सपीयरकाल | 3

शेक्सपीयर के पश्चात् नाटक पतन

जिस प्रकार एक बडा वक्ष दूसरे छोटे वृक्ष को अपने नीचे नही बढने देता है–यह एक प्राकृतिक नियम है उसी प्रकार से उत्तम साहित्यकार भी मध्यम या अधम साहित्यकार की ख्याति म बाधक बनता है, यह साहित्य जगत की रीति है।[1] अंग्रेजी साहित्य म चासर के बाद मन्थरता आगयी थी तो हिन्दी साहित्य म तुलसी के पश्चात् रामभक्ति शाखा के कवि केशव 'हृदय हीन' कहलाने लग। ठीक इसी प्रकार से जब शेक्सपीयर नाटक लिख चुके तब अन्य व्यक्ति क्या लिखते। उन्हाने शेक्सपीयर के नाटको की हत्याओ भयावाह घटनाओ एव ऐन्द्रियता और अश्लील उक्तियो को प्रमुखता दी। फलत नाटका की श्रेष्ठता का ह्रास होने लगा। आलोचका का कथन है कि शेक्सपीयर की प्रतिभा से नाटको के जो दुगुण भी गुण बन गये थ वे बाद के नाटककारो के पतन के कारण बने। साथ ही टनिसन का कथन भी चरितार्थ हुआ कि पुरातन पद्धति नवीन नियमा को स्थान देकर स्वय लुप्त हो जाती है, अन्यथा एक ही सुदर नियम विश्व के कायक्रम को जड एव असुदर बना दता है। अतएव नाटको का पतन अवश्यभावी था। बनजानसन ने नाटका को इस पतन-गत्त मे गिरने स बचाने का प्रयास किया। इसी युग के अन्य नाटककारो ने भी उसे बचाने का प्रयास किया किन्तु बहुधा वे उसे एक दो डग आगे ही ले जात थे। निम्नाकित विवेचन इस पर प्रकाश डालता है।

अन्य नाटककार

जोज चेपमेन ने व्यग के साथ सतकता और प्रसन्नता का समन्वय किया है। इनके नाटकों म दो दला के सघप का चित्रण किया जाता है जिसका अन्त मृत्यु द्वारा होता है। अतिप्राकृतिक पदार्थों को इनके नाटका मे विशेष स्थान मिलने लगा और

---

1 यहाँ भी डार्विन का "सर्वाइवल आव दी फिटेस्ट" का सिद्धान्त काम करता है।

बदले की भावना भी तीव्रतर रूप धारण करने लगी। ड्राइडन का कथन है कि इन्होंने असतुलित और निम्न श्रेणी के विचारों को मञ्च पर प्रकट किया। अन्य आलोचक इससे असहमत होते हैं और कहते हैं कि वे तीक्ष्ण बुद्धिवाले प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति थे जिनके नाटक तत्कालीन सामाजिकों की बुद्धि के परे ही थे।[1] चाहे जो कुछ हो वे नाट्य साहित्य को सबल न बना सके। इसी प्रकार से, मास्टन के नाटकों में भयावाह घटनाओं का अतिरंजनापूर्ण दिग्दर्शन कराया गया है। उनके नाटकों में बदला लेने की भावना ने उग्रतम रूपधारण कर लिया है। दी रिवेंज आव एटनी में स्वेच्छाचारी शासक की जीभ निकाली जाती है और उसके पुत्र को मार कर उसके ही सामने डाल देते हैं और फिर उसे भी मार डाला जाता है। इनके नाटकों में अतिकरुणा और प्रभावोत्पादक पूर्वाभास को स्थान मिला है जो उनकी नाटकीय कृत्रिमता को स्पष्ट कर देता है।

रेडोल्फ की नाट्यकृतियाँ कष्ट साध्य रचनाएँ दिखायी देती हैं तो रौले ने मनोरंजनात्मक दोहरी वस्तु का प्रणयन किया है। उन्होंने निम्न श्रेणी के हास्य को स्थान दिया है। इनमें हेवुड का स्थान महत्त्वपूर्ण है क्योंकि उन्होंने घरेलू दुखान्त नाटक[2] को प्रमुखता प्रदान की जो आज भी मान्य है–इब्सन शा आदि ने भी घरेलू दुखान्त नाटकों को अपनाया है। हेवुड का ए वूमेन किल्ड विथ काइण्डनेस एक प्रसिद्ध घरेलू दुखान्त नाटक है। इसमें फ्रैंक फोर्ड और उसकी पत्नी आरामपूर्वक जीवन यापन कर रहे होते हैं कि फ्रैंक फोर्ड का मित्र वेंडल आता है और उसकी पत्नी को अपने प्रणयपाश में बाँध लेता है। पति इसे देख लेता है। वह उसकी अवज्ञा कर देता है। फलतः पत्नी की मृत्यु हो जाती है। यहाँ यह अवलोकनीय है कि त्रासदी की धारा यहाँ परिवर्तित होती हुई दिखाई देती है–पति पत्नी के दुराचरण पर उसकी हत्या नहीं करता है वह उसकी अवज्ञा कर देता है।[3]

सिरिल टर्नर ने किड के रक्तरंजित नाटकों की धारा को आगे बढ़ाया उनके पात्र दुगुणों के अवतार दिखाई देते हैं। मेसिंजर और मिडलटन के नाटकों में त्रास पूर्ण वातावरण की भयावाह घटनाओं में चमकने वाली बिजलियाँ सामाजिकों को आतंकित किये बिना नहीं रहती। यह चित्रण आलोचकों को प्रारम्भिक नाटकों की याद दिलाता है।[4] इसी प्रकार से वेबस्टर के नाटकों में सिनेका की बदले की भाव–

---

1 "ए शार्ट हिस्ट्री आव इंगलिश लिटरेचर" ले० आइ फार इवेन्स पृ० १०४

2 डामेस्टिक ट्रेजडी।"

3 फिर भी नाटककार ने उसकी हत्या अवश्य कर दी है। आज तो नाटकों में व्यभिचारिणी विवाहिता जीवित भी रहती है।

4 'The British Drama Discussion of Horror Tragedy by A Nicoll

नाओं का तीव्रतम रूप दिखाई देता है। वहा मच पर आवश्यकता से अधिक भय उत्पन्न किया जाता है। अन्त में तो मच शव शयनागार बन जाता है जिस पर विष्ठ खनित अग, विष और शस्त्र आदि बिखरे पडे मिलते हैं। ऐसे दृश्य सामाजिकों को अत्यन्त आतकित कर देते हैं। अतएव यह स्पष्ट है कि इन नाट्यकारो ने नाटक को पतन की ओर बढाया—सामाजिकों की रुचि ने भी इसमे सहयोग दिया। तत्कालीन सामाजिक भयावाह घटनाओं को देखना चाहते थे। वे पात्रो का दुख मे अधिक सुन्दर देखने लगे और नाटककारो के साथ कहने लगे —

"(युवती के) अश्रुकणो मे तुम मुस्कराहट से,
कहीं अधिक पालोगे, सुदरता का सुदर चित्र।"[1]

बैनजोनसन

बैनजोनसन के नाटक एक तो प्रतिक्रिया स्वरूप उत्पन्न हुए और दूसरे नियम बद्ध थे, अतएव वे अधिक सफल न हो सके। उनके नाटक शेक्सपीयर के नाटकों की तुलना मे वसे ही दिखायी देते हैं जैसी कि रामचन्द्रिका, मानस के समकक्ष दिखाई देती है, फिर भी बनजोनसन ने अपने शास्त्रीय नाटको द्वारा नाटक का उद्धार करना चाहा। बनजोनसन की अधिकाशत शेक्सपीयर से तुलना की जाती है और इसीलिय वे अधिक प्रसिद्ध नही हो सके हैं, अन्यथा वे भी काफी उच्च श्रेणी के विद्वान कलाकार तो थे ही।[2] साथ ही उनमे व्यक्तिगत द्वेषभाव भी कम नहीं था। उनके नाटको मे यही ईर्षा प्रकट हुई है। प्रारम्भ मे जब उनका हैंसलो कम्पनी से बैर था तब उन्होंने एवीमैन इन हिज ह्यूमर' की रचना की। उन्होंने अपने "पोंइटास्टर' मे समकालीन लेखको डेकर और मास्टन पर व्यग्य किया है। वही नहीं उन्होंने 'सिन्थियाज रिवेल्स" के द्वारा तो समाज को ही अपने विरुद्ध कर लिया था। वे मनुष्य के दुगुण विशेष (ह्यूमर) पर जोर देते हैं, जिसकी व्याख्या करते हुए उन्होंने कहा है कि जब कोई गुण विशेष व्यक्ति पर प्रभुत्व जमा कर उसके व्यक्तित्व को दबा लेता है और उसे अपने ही वशीभूत कर लेता है तो वही गुण, दुगुण विशेष (ह्यूमर) बन जाता है।[3] वे व्यक्ति के उसी दुगुण पर व्यग्य प्रहार करते हैं जिसमे वे प्रमुख

---

1 You may discern the shape of loveliness
More perfect in her tears than in her smile
(The Duchess of Malfi–J Webster)

2. A Short History of English Literature by Legouis P 136

3 'When some Peculiar quatily
Doth so possess a man that it doth draw
All his affects his spirits and his power
In their connections all to run one way
This may be truly said to be a humour
Every man in his humour—Prologue

रूप से नैतिकतावादी दिखाई देते हैं। अत उनका नाटककार दब जाता है। उनकी यह धारणा लूटस और रैसिन के सिद्धान्तो के अनुकूल ही है। उनका कथन है कि वे तो मानवीय मूर्खताओ से खेलते हैं, पापो का चित्रण नहीं करते।[1] फिर भी उन्होंने कामदी के साथ त्रासदी, प्रहसन, नकल और स्वाग आदि भी लिखे हैं। वे *कथानक को किसी भी पुस्तक से ले लेने के विरुद्ध थे—वे चाहते थे कि कथानक* शास्त्रीय पुस्तको या तत्कालीन जीवन से चुना जाना चाहिये। उन्होंने साहित्य की हृदय से सेवा की है। वे नाटक का उद्देश्य मनोरंजन और उपदेश प्रदान करना मानते थे।

वे शास्त्रीय नियमो के अंधानुकरण को हेय मानते थे।[2] उनका वोलपोन इसका उदाहरण है। यह पुनर्जागरण कालीन प्रवृत्तियो से परिपूर्ण नाटक है इसमे मध्यकालीन तत्त्व कम ही दिखाई देते हैं। यह नाटक पात्रो के आचार व्यवहार पर कटु व्यंग्य प्रहार करता है। लेखक ने सामाजिक कुरीतियो को प्रदर्शित किया है। इसकी प्रस्तावना मे कहा गया है —

इसमे तर्क का अभाव नहीं × × ×

है मिलाया गया प्रसन्नता के साथ लाभ को।[3]

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि इस नाटक म तर्क को स्थान मिला है। इसके द्वारा युग के धनी व्यक्तियो के बुरे आचरण पर प्रकाश डाला गया है। वाल-पोन अपने धन से सभी कुछ कर सकने का दम भरता है और वह अन्य व्यक्तियो को मूर्ख बनाकर आनंद प्राप्त करता है।[4] साथ ही इस नाटक मे उसे भी प्रशंसा द्वारा मूर्ख बना देने वाला नौकर मोस्क भी मिल जाता है।[5] इसमे पतित पति के पतन और उसकी धन लोलुपता पर तीक्ष्ण व्यंग्य किया गया है। एक शब्द मे हम कह

1 'Sport with human follies and not with crimes -Everyman in his humour

2 यूज आव पाइट्री एण्ड यूज आव क्रिटिसिज्म लेखक टी० एस० एलियट निबंध एपोलोजी फार काउंटेस आव पैम्ब्राक। प्रथम संस्करण।

3 हीयर इज राइम नाट एम्पटी आव रीजन
टू मिक्स प्रोफिट विथ योर प्लेजर—प्रालाग आव वालपोन।

4 *"थट आई ग्लोरी*
मोर इन दी कनिंग परचेज आव माई वल्थ
देन इन ग्लेड पजेसन।" वालपोन

5 एज सर, आइ थट टू, एज आई एम टाट
फोलो योर ग्रेव इंस्ट्रक्शंस। वही।

सकते हैं कि इसमे सम्य, धनी और आडम्बरमय जीवनयापन करने वाले व्यक्तियो का बढा चढा कर चित्रण किया गया है। इनके नाटकों म निम्नाकिन प्रमुख विशेषताएँ पाई जाती हैं।

बैनजोनसन के नाटको की विशेषताएँ

(क) इन्होने शास्त्रीय नाटका का प्रणयन किया, फिर भी नियमा का अन्धा नुकरण नही किया।

(ख) तत्कालीन सामाजिक कुरीतिया पर तीक्ष्ण और कटु व्यग्य प्रहार किए हैं।

(ग) वे पात्रा की हास्यास्पद अवस्थाओ का चित्रित करने के लिए यथार्थ कथानक का चयन करते हैं, जिसमे पात्रो की प्रमुख बुराइया पर प्रकाश डाला जाता है। पात्र एक दुगु ण विशेष का पुतला प्रतीत होता है। ऐसा करने मे अधिकाशत उनके व्यक्तिगत रागद्वेष ने उन्ह सहायता दी है।

(घ) सामान्यन काय एक्य का निर्वाह किया गया है।

(ड) काव्य और सगीत का बहिष्कार किया गया है।

(च) सामाजिको को आदश का पाठ सिखाते हैं। उनकी मूखताओ पर व्यग्य करते हैं।

(छ) टेरेन्स के समान पात्रा को सामान्य या वग प्रतिनिधि (टाइप) के रूप म चित्रित किया है।[1] उनके पात्र एक दुगु ण विशेष के साकार रूप हैं।[2] कोई धन लोलुप है तो कोई धोखेबाज। तत्कालीन समाज मे प्रचलित बुराइयो ने उनके नाटको म कटुता भर दी है।

(ज) उनके दुखान्त नाटक सीजस एव कोटिलिन म सुखान्त नाटको का सा सौन्दय नही है। दुखान्त नाटका के पात्र जीवन से दूर दिखाई देते हैं।

बनजोनसन के नाटका द्वारा युगसुधार तो अधिक नही हो सका किन्तु उनके

---

1 A Nicoll—British Drama P 150-55

2 His characters were as he described them humours characters One element in their mental nature was displayed throughout the play and exposed for ridicule x x x x used this static type x x x x A shorter history of English Literature by For Evans P 103

रूप से नैतिकतावादी दिखाई देते हैं। अतः उनका नाटककार दब जाता है। उनकी यह धारणा लूटस और रैसिन के सिद्धान्तों के अनुकूल ही है। उनका कथन है कि वे तो मानवीय मूर्खताओं से खेलते हैं, पापों का चित्रण नहीं करते।[1] फिर भी उन्होंने कामदी के साथ त्रासदी, प्रहसन, नक्ल और स्वांग आदि भी लिखे हैं। वे कथानक को किसी भी पुस्तक से ले लेने के विरुद्ध थे—वे चाहते थे कि कथानक शास्त्रीय पुस्तकों या तत्कालीन जीवन से चुना जाना चाहिये। उन्होंने साहित्य की हृदय से सेवा की है। वे नाटक का उद्देश्य मनोरंजन और उपदेश प्रदान करना मानते थे।

वे शास्त्रीय नियमों के अन्धानुकरण को हेय मानते थे।[2] उनका वोलपोन इसका उदाहरण है। यह पुनर्जागरण कालीन प्रवृत्तियों से परिपूर्ण नाटक है इसमें मध्यकालीन तत्त्व कम ही दिखाई देते हैं। यह नाटक पात्रों के आचार व्यवहार पर कटु व्यंग्य प्रहार करता है। लेखक ने सामाजिक कुरीतियों को प्रदर्शित किया है। इसकी प्रस्तावना में कहा गया है —

इसमें तर्क का अभाव नहीं × × ×
है मिलाया गया प्रसन्नता के साथ लाभ को।[3]

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि इस नाटक में तर्क को स्थान मिला है। इसके द्वारा युग के धनी व्यक्तियों के बुरे आचरण पर प्रकाश डाला गया है। वाल-पोन अपने धन से सभी कुछ कर सकने का दम भरता है और वह अन्य व्यक्तियों को मूर्ख बनाकर आनन्द प्राप्त करता है।[4] साथ ही इस नाटक में उसे भी प्रशंसा द्वारा मूर्ख बना देने वाला नौकर मोस्क भी मिल जाता है।[5] इसमें पतित पति के पतन और उसकी धन लोलुपता पर तीक्ष्ण व्यंग्य किया गया है। एक शब्द में हम यह

---

1 "Sport with human follies and not with crimes -Everyman in his humour

2 यूज ऑव पाइट्री एण्ड यूज ऑव क्रिटिसिज्म लेखक टी० एस० एलियट निबन्ध एपोलोजी फार काउंटेस ऑव पेम्ब्रोक। प्रथम संस्करण।

3 हीयर इज राइम नाट एम्पटी ऑव रीजन
टू मिक्स प्रॉफिट विथ योर प्लेजर—प्रॉलाग ऑव वालपोन।

4 "यट माई ग्लोरी
मोर इन दी कनिंग परचेज ऑव माई वेल्थ
देन इन ग्लेड पजेसन।" वालपोन

5 एज सर, माइ बट टू, एज माई एम टाट
फौलो योर ग्रेव इनस्ट्रक्शन्स। वही।

सकते हैं कि इसमे सम्य, धनी और आडम्बरमय जीवनयापन करने वाले व्यक्तियों का बढा चढा कर चित्रण किया गया है। इनके नाटको म निम्नांकित प्रमुख विशेषताएँ पाई जाती हैं।

बैनजोनसन के नाटको की विशेषताएँ

(क) इन्होने शास्त्रीय नाटको का प्रणयन किया, फिर भी नियमो का अन्धानुकरण नही किया।

(ख) तत्कालीन सामाजिक कुरीतियो पर तीक्ष्ण और कटु व्यग्य प्रहार किए हैं।

(ग) वे पात्रो की हास्यास्पद अवस्थाओ को चित्रित करने के लिए यथार्थ कथानक का चयन करते हैं, जिसमे पात्रो की प्रमुख बुराइयो पर प्रकाश डाला जाता है। पात्र एक दुर्गुण विशेष का पुतला प्रतीत होता है। ऐसा करने मे अधिकांशत उनके व्यक्तिगत रागद्वेष ने उन्ह सहायता दी है।

(घ) सामान्यत कार्य एक्य का निर्वाह किया गया है।

(ड) काव्य और सगीत का बहिष्कार किया गया है।

(च) सामाजिको को आदर्श का पाठ सिखाते हैं। उनकी मूर्खताओ पर व्यग्य करते हैं।

(छ) टेरेंस के समान पात्रो को सामान्य या वर्ग प्रतिनिधि (टाइप) के रूप म चित्रित किया है।[1] उनके पात्र एक दुर्गुण विशेष के साकार रूप हैं।[2] कोई धन लोलुप है तो कोई धोखेबाज। तत्कालीन समाज मे प्रचलित बुराइयो ने उनके नाटको मे कटुता भर दी है।

(ज) उनके दुखान्त नाटक "सीजर्स एव 'कोटिलिन" म सुखान्त नाटको का सा सौदर्य नही है। दुखान्त नाटको के पात्र जीवन से दूर दिखाई देत हैं।

बैनजोनसन के नाटको द्वारा युगसुधार तो अधिक नही हो सका किन्तु उनके

---

1 A Nicoll—British Drama P 150-55

2 His characters were as he described them humours characters One element in their moral nature was displayed throughout the play and exposed for ridicule x x x x used ... static type x x x x A shorter history of English Lit ... by For Evans P 103

व्यग्य नाट्यसाहित्य की प्रमुख निधि प्रमाण ही है।[1] प्रतिद्वन्द्वी नाटकों या शेक्सपीयर की पूजा करने की भावना ने उन्हें उचित मूल्यांकन में बाधा डाली है। फलत वे अपने उचित स्थान से वंचित कर दिए गए हैं।[2] बेनजोनसन ने नाटकों को पतन गर्त में गिरने से बचाने का प्रयास किया था, अतएव वे श्रद्धा के पात्र हैं।

नाटक-पतन और अभिनय निषेध

नाटकों को पतन गर्त से बचाने के प्रयास चल ही रहे थे कि क्रॉमवेल के कठोर शासन ने सन् १६४२ में इनकी मन्द, वक्र, अश्लील और छिछली धारा को पूर्ण रूपेण सुखा दिया। नाटकीय प्रदर्शन राजकीय आज्ञा द्वारा निषिद्ध घोषित कर दिए गए। इस प्रकार पतनोन्मुखी नाटक अधिक पतित होने से बचाए गए। सन् १६६० तक नाट्याभिनय निषिद्ध ही रखा गया। पुनर्स्थापन काल (रेस्टोरेशन एज) में इनका पुन प्रचलन हुआ।

पुनर्स्थापन कालीन नाटक

क्रामवेल के कठोर शासन के पश्चात् चार्ल्स द्वितीय के शासन काल में सर्वत्र फ्रांसीसी प्रभाव दृष्टिगोचर होने लगा। कतिपय नाटककारों की तो शिक्षा दीक्षा ही फ्रांस में हुई थी।[3] अतएव नाटकों पर उक्त प्रभाव स्वाभाविक ही था। फलत फ्रांसीसी नाटकों के समान अंग्रेजी नाटकों में भी अश्लील और अनैतिक तत्वों का आधिक्य दिखाई देने लगा। ऐतिहासिक आलोचना के सिद्धान्तों की दृष्टि से यह क्षम्य है क्योंकि तत्कालीन सामाजिक जीवन ही आज के जीवन से भिन्न था, उस पर आज के नैतिक नियम लागू नहीं करने चाहिए।[4] फिर भी इतना तो कहना ही होगा कि तत्कालीन जीवन के समान उन नाटकों में साधारण नैतिक नियमों का उल्लंघन किया गया है। आलोचकों ने समाज में प्रचलित स्पष्टवादिता और सद्व्यवहार को भी

---

1 'The satire in the Jonson drama did little good delicately in the way of mitigating the abuses of the age but it proved a most salutary element in the world of theatre —A Nicoll British Drama P 168

2 A Short History of English Literature by I For Evans Drama from Shakespeare to Sheridan P 102-105

3 Wecherly

4 A few days before his death in 1716 he married a young girl simply to defeat his nephew s hope Chief British Dramatists P 1064

इसके कारण माने हैं।[1] आलोच्यकाल में शिष्टाचार[2] विषयक प्रणय पड्यन्त्रपूर्ण[3] भाव प्रधान कामदी[4] तथा शौर्यमय त्रासदी[5] आदि की रचनाएँ हुईं। इस समय में नाटक राजदरबार की सामग्री बन गए। समाज में बुद्धिमान और प्रतिष्ठित माने जाने वाले धनी व्यक्ति भी नाटक लिखना पसन्द करते थे। राज्य सम्पर्क से वीरतापूर्ण दुखान्त नाटकों का एवं भद्रसमाज-संसर्ग से आचरण सम्बन्धी कामदी का जन्म हुआ। आलोच्यकाल में भिन्नतुकान्त छन्द के स्थान पर फ्रांस के प्रभावस्वरूप तुकान्त कविता को स्थान दिया गया। फ्रांस के मेनारी आदि नाटककार आदर्श मान जाने लगे और शेक्सपीयर की प्रतिभा धुंधली पड़ने लगी।[6] शौर्यपूर्ण नाटकों में तुकान्त छन्दों को स्थान दिया जाने लगा। उनमें युद्ध और प्रणय को प्रमुखता दी गई। डेवट एवं ड्राइडन के नाटकों से ऐसे चित्रणों का प्रारम्भ हुआ जिसका विकसित रूप ईथरीज और लाड आरे के नाटकों में दिखाई देता है। दूसरी ओर विचर्ले ने केवल गद्यमय नाटकों का ही प्रणयन किया। ड्राइडन नाटक की ओर अपनी इच्छा से तो कम ही आकृष्ट हुए किन्तु उन्होंने उसे युग माग के रूप में स्वीकार कर लिया[7]।

ड्राइडन

ड्राइडन के नाटकों पर फ्रांस के नाटकों का बहुत प्रभाव पड़ा है। उदाहरणार्थ उनमें अतिमानवीय कृत्यों और भावात्मक संलापों का प्राचुर्य पाया जाता है जो पूरे नाटक में सहायक न होकर केवल स्थिति विशेष को बल प्रदान करते हैं। नये आदर्श नायक हैं जिनमें साहस का आधिक्य है और वे दुख व खतरे से घबराते नहीं हैं। वे कर्तव्य और प्रणय के बीच संघर्षरत दिखाई देते हैं।[8] छन्दों में तुकान्त छन्द को स्थान दिया गया है। इस छन्द का बकिंघम के शासक व उनके अनुयाइयों ने प्रबल विरोध किया था। ड्राइडन पर इस विरोध का कोई प्रत्यक्ष प्रभाव तो नहीं पड़ा

---

1 'ए शार्ट हिस्ट्री आव इंग्लिश लिटरेचर' पृ० १८४ ले० प्रो० लिगवी
2 "कामेडी आव मैनर्स"।
3 "कामेडी आव इंट्रीग्ज"।
4 "सेंटीमेंटल कामेडी"।
5 "हीरोईक ट्रेजेडी"।
6 In Restoration period Shakespeare etc were held in light esteem Moliere was writing in France x x x x he influenced (English Playwrights)- The Outline of Literature by John Drinkwater Revised by H Shipp P 283
7 A Short History of English Literature by Legouis P 183
8 A Short History of English Literature by Prof Legouis P 183

किन्तु सन् १६७० के पश्चात् उन्होंने शेक्सपीयर के समान मिश्रतुकान्त छन्द को अपना लिया। साथ ही वे सब मानवीय पात्रों और घटनाओं को स्थान देने लगे। ड्राइडन व उनके समकालीन आलोचकों ने अपनी प्रतिभा द्वारा नाटकों को युग के अनुकूल बनाने का प्रयास किया। इन्होंने अरस्तू व प्रतिकूल कथानक का नाटक में न्यूनतम महत्त्व बतलाया। डेनिस ने व्यंग्य को ही कामदी का उद्देश्य घोषित किया। आलोचकों का प्रभाव सुखान्त और दुखान्त दोनों ही प्रकार के नाटकों पर दृष्टिगोचर होने लगा। ईथरीज विचरले एवं कांग्रीव विरचित आचरण सम्बन्धी सुखान्त नाटक इस युग की महान् थाती है।

सुखान्त नाटक

सुखान्त नाटकों में तत्कालीन समाज के प्रणय षडयन्त्रों पर व्यंग्य प्रहार किये गए जिनमें आश्चर्यजनक अश्लीलता को प्रमुखता दी गई थी। ये नाटक इस दृष्टि से शेक्सपीयर के सुखान्त नाटकों से भिन्न हैं और इनमें गद्य प्राधान्य ही प्राप्त होता है। नाटककारों का उद्देश्य मनोरंजन प्रदान करना ही था।[1] अतएव उनमें उपदेशात्मकता का अभाव पाया जाता है। इन नाटककारों में विलियम कांग्रीव का प्रमुख स्थान है। उन्होंने गद्य का प्राजलरूप प्रस्तुत किया है।[2] उनका चरित्र चित्रण सुखद और श्लाघ्य है। इनके नाटकों की एक अन्य विशेषता है—प्रस्तावना व उपसंहार का प्रचुर प्रयोग। ये प्रयोग सिनेका के अनुसार सामाजिकों से निकट सम्बन्ध स्थापित करने के प्रयास थे। आगे आने वाले नाटककारों ने इनमें नट व नटी के वार्तालाप को स्थान दिया है।[3] कांग्रीव के एक पात्रीय नाटकों में खल नायक की कलई खोली जाती है। फिर भी आलोच्य नाटकों में जीवन के गम्भीर पक्ष को और देश में होने वाली वैज्ञानिक उन्नति को समुचित स्थान नहीं मिल पाया है।[4]

ईथरीज ने अपने 'दी मैन एण्ड दी मेड' से सर्व प्रथम आचरण सम्बन्धी कामदी की नींव डाली।[5] इसमें वीर युवकों और कुलीन युवतियों के बीच चलने वाले प्रणय-व्यापार को वाग्विदग्धतापूर्ण रूप से चित्रित किया है। विचरलेने ने

---

1 A Short History of English Literature by Prof Legouis P 183

2 I had rather been his relation than his acquaintance Mirable way of the world—also see Acts two and four

3 अठारहवीं शताब्दी के नाटकों में ऐसे प्रयोग पाए जाते हैं।

4 पपीज जो इस युग के डायरी लेखकों में प्रमुख स्थान रखते हैं उन्हें यह अभाव बहुत खटकता है।

5 ए० शा० हि० आ० इ० लि० ले० आ० फा० इवेन्स पृ०, ११०।

ईथरीज से अधिक गहराई तक जाने का सफल प्रयास किया है। इसमे उन्होने अनैतिक सम्बन्धो की खिल्ली उडाते हुए हास्य और व्यग्य को सुन्दर स्थान दिया है। इन्होने ऐहिक सुख को निरथक बताया है। काग्रीव ने दोना लेखको के गुणा का समन्वय किया है। सवाद पटुता एव काल्पनिक उच्चता के साथ यथार्थप्रियता उनके विशिष्ट गुण हैं।[1]

जिस प्रकार से ईथरीज ने आचरण सम्बन्धी कामदी को बल प्रदान किया उसी प्रकार से कोलीक्विवर ने भावप्रधान कामदी को जन्म दिया। उनके लव्ज लास्ट शिफ्ट" से इस धारा का उद्गम माना जाता है। ऐसे नाटको म नैतिक अनैतिक विषया की चर्चा की जाती है। इनम धनी व्यक्तियो के दुगुणो और शहरी जीवन की बुराइयो पर प्रकाश डाला जाता है। उच्च मध्यम श्रेणी के सामाजिको ने ऐसे नाटको का समादर किया था। इसी युग म भद्र पुरुषा के जीवन को चित्रित करने वाली भद्रकामदी (जैंटल कामदी) भी प्राप्त होती है। इसमे सभ्य समाज का सुखद चित्रण किया जाता है जिसम उनकी सुकोमल वृत्ति का सहारा लिया जाता है।

जसा कि पहले कहा जा चुका है आलोच्यकाल मे भिनतुकान्त छन्द के स्थान पर तुक प्रधान कविता को अपनाया गया और नाटको मे सगीत ने प्रमुख स्थान प्राप्त कर लिया। फलत गीति नाट्यो का प्रचलन बढा। सगीतप्रियता के कारण अग्रेजी गीति नाट्यो की अपेक्षा इटली के सगीत नाटक आदश माने जाने लगे। कारण यह कि अग्रेजी-गीतिनाटक म मुख्य मुख्य स्थलो पर तो सगीत विद्यमान रहता है किन्तु अन्यत्र गद्य भी प्राप्त होता है। इटली के गीतिनाट्य म उक्त गद्य अत्यन्त अल्प मात्रा मे प्राप्त होता है। अतएव ऐसा प्रतीत होता है कि इस काल मे सगीत और तुक प्रधान छन्दो का बाहुल्य था। इसी युग मे शी प्लेज —नाटिकाएँ, भी प्राप्ति होती हैं। इनम करुणा और प्रेम-प्राधान्य प्राप्त होता है। आगामी युग मे भाव प्रधान नाटका म हँसी के स्थान पर अश्रु और प्रणय-षडयन्त्रो की जगह साहसपूर्ण काय एव दुखद दृश्य दिखाई देने लगे।

अट्ठारहवी शताब्दी के नाटक

आलोच्यकाल म दुखी स्त्रियो गम्भीर प्रेमियो ईमानदार नौकरो द्वारा बदमाशा वीर पुरुषा और वाग्विदग्ध स्त्रिया का स्थानापन्न किया गया। पात्र बौद्धिक जगत म न रह कर भावनामय लोक म विचरण करने लगे। ह्यू केले और रिचड कम्बरलैंड के नाटको म भाव नाटका की चरमसीमा दिखाई देती है। कम्बरलैड का "दी वेस्ट इण्डियन बताता है कि मानव जीवन की प्रत्येक समस्या को भावावशपूर्ण

1, ए० शा० हि० आ० इ० लि० से० आ० फा० इवेन्स पृ० ११०

शैली में प्रकट किया जा सकता है। सामान्यतः यही माना जाता है कि इस युग में नाटकों ने अपनी मौलिक प्रतिभा और शक्ति को खो दिया था।[1] अब भी पुरातन नाटकों के प्रति ऐतिहासिक जिज्ञासा को तो स्थान था किन्तु सामाजिकों को उनमें आनन्द प्राप्त नहीं होता था। सामाजिकों का ध्यान वस्तु की अपेक्षा मंच सज्जा की ओर अधिक था। वे लोकगीत-प्रधान नाटकों को भी आदर की दृष्टि से देखते थे।[2] इसके प्रचलन का श्रेय 'बैगर्स ग्रापेरा' के लेखक जोपगे को दिया जाता है। इसी काल में हास्यपूर्ण संगीत नाटक (कामिक ग्रापेरा) एवं भावावेशपूर्ण नाट्य भी लिखे जाने लगे। लोक गीति प्रधान संगीत नाटकों में अप्रचलित शब्दों द्वारा पुरातन वातावरण प्रस्तुत किया जाने लगा। भाव प्रधान संगीत नाटकों में विचारों, भावनाओं और न्यायपूर्ण एवं कपटमय दिखावटी कार्यों को महत्ता दी गई थी। इनमें हास्य के लिए स्थान नहीं था।

अठारहवीं शताब्दी में भी फ्रांस के नाटकों के प्रभाव स्वरूप शास्त्रीय नियमों के पालन की प्रवृत्ति दिखाई देती है। नाटकों में सामान्यतः संकलनत्रय का निर्वाह किया गया है। ह्वुड की घरेलू त्रासदी की परम्परा के नाटक भी इस युग में प्राप्त होते हैं।[3] एडिसन ने फ्रांस के रसीन[4] से प्रभावित होकर केटो की रचना की जिससे तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों का निकट सम्बन्ध था। उदाहरणार्थ महारानी एन रुग्णावस्था में थी और उत्तराधिकारियों के बारे में चर्चा चल रही थी। वैसे समय में केटो द्वारा प्रतिपादित स्वाधीनता प्रियता के विचारों का स्वागत तत्कालीन प्रमुख राजनीतिक दलों ह्विग्ज और टोरीज ने किया। आलोच्यकाल में शास्त्रीय नियमों और नैतिकता को अधिक एवं कल्पना तथा भावों को कम महत्त्व दिया गया था। डा० जोहनसन ने इसकी कटु आलोचना की।[5] इसका यूरोप में बड़ा आदर हुआ। वोल्टेयर ने तो उसे अंग्रेजी की प्रथम उपयुक्त और तर्कसंगत त्रासदी कहा है। हेनरी फील्डिंग की ट्रेजीडी आव ट्रेजीडीज एक उत्तम स्वांग नाटक है जिसमें हत्याओं का बाहुल्य पाया जाता है। एडीसन ने तत्कालीन नाटकों पर

---

1 ए० शा० हि० आ० इ० लि० ले० प्रो० नि० पृ० २६८।

2 बलेड आपेरा।

3 लिलो एवं रो के नाटक इसके प्रमाण हैं।

4 एटॉप सबुरी प्लेज (भूमिका) सपादक जान हैम्पडन।

5 Cato x x x is rather a poem in dialogue than a drama, rather a succession of Just sentiments in elegant language than a representation of natural affections or of any state possible or probable human life x x x x we wish only to know what they have to say X Ibid P 9

आलोचनात्मक प्रकाश डाला है। एडीसन ने यह इंगित किया कि तत्कालीन त्रासदी यूनानी और रोमन त्रासदी से वस्तु–संघटन की विविधता और भाव प्रकटीकरण में तो सुंदरतर थी किन्तु आदर्श की दृष्टि से हेय थी। उन्होंने सुखदुखात्मक नाटकों को सबसे बुरी वस्तु माना है। उनके अनुसार दोहरी वस्तु भी निंदनीय ही है। उन्होंने मंच पर अंधकार द्वारा सामाजिकों पर प्रभाव डालने की शेक्सपीयर की विधि, भयावाह दृश्यों के प्रदर्शन, भूतों–प्रेतों के दिग्दर्शन और बिजलियों के चित्रण आदि को अनुपयुक्त माना है। फिर भी, मृत्यु को उन्होंने पूर्णरूपेण निषिद्ध नहीं बताया है। डॉ० सैंटसबरी ने दोहरी वस्तु की आलोचना और सुखदुखात्मक नाटकों को हेय बताने को त्रुटि ही माना है।[1], [2]

आलोचना से बल प्राप्त कर नाटककारों ने सुखान्त व दुखान्त भेद भी मिटाने का प्रयास किया है। फलत नए प्रकार के नाटकों का प्रादुर्भाव हुआ।[3] इनमें ऐसे नाटक फ्रांस के नाटकों से प्रभावित हुए। रिचर्डसन और लारेन्स स्टर्न ने मानवीय भावों को प्रमुखता प्रदान करने का प्रयास किया है। उस समय में लिल्लो ही ऐसे नाटककार थे जिन्होंने घरेलू त्रासदी में गद्य का प्रयोग किया है।[4]

इस काल में संगीत नाट्यों में व्यंग्य का समावेश भी किया गया है। गे द्वारा लिखे गए बैगर्स आपेरा में वकीलों, पादरियों और धनलोलुप अभिभावकों पर व्यंग्य किया गया है। वहाँ कहा गया है कि नट और वकील एक ही श्रेणी के व्यक्ति हैं दोनों ही दुराचारी व्यक्तियों पर आद्वत हैं।[5] आगे कहा गया है —

---

1 हिस्ट्री आव इंग्लिश क्रिटीसिज्म ले डा० सैंटसबरी, अध्याय चार।

2 इससे प्रकट होता है कि आज के आलोचकों की दृष्टि में दोहरी वस्तु और सुखदुखात्मक नाटक श्लाघ्य है। साहित्यिक नाटकों में दोहरी वस्तु ग्रीन के समय में प्रारम्भ हुई। शेक्सपीयर ने उसे सहारा प्रदान किया। जब एडिसन ने उसे हेय बताया तब डा० सैंटसबरी ने उसे अनुपयुक्त घोषित किया है। अतएव प्रतीत ऐसा होता है कि अंग्रेजी नाटकों की दोहरी वस्तु को अधिकांश आलोचकों और नाटककारों ने श्रेष्ठ माना है।

3 देखिए बेनब्रा की रचनाएँ एवं एटीन्थ सचुरी ड्रामा, भूमिका पृ० ६

4 दी लन्दन मर्चेन्ट में गद्य को स्थान दिया गया।

5 Air I–X X XA lawayer is an honest employment, so is mine Like me too he acts in a double capacity both against rogues and for them X X X Since we both live by them – XVIII Cent Drama P 122

"महाशयजी, लोमडी आपकी मुर्गियाँ चुरा सकती है
वेश्या आपका स्वास्थ्य और धन चुरा सकती है,
आपकी पत्नी आपका आराम नष्ट कर सकती है
किन्तु यदि वकील को सहारा लिया गया तो
वह आपकी पूरी सम्पत्ति चुरा सकता है।'[1]

इस संगीत नाट्य का दुखान्त होना इसकी विशेषता है।[2] इसमें व्यंग्य के साथ अश्लीलता भी आ ही गई है।[3] लिल्लो ने 'दी लन्दन मर्चेण्ट' नामक घरेलू नाटक में 'थोरवुड' अपनी पुत्री से कहता है कि कोई भी व्यक्ति मुझ से अधिक तुम से आनन्द उठाने की आकांक्षा रख सकता है।[4] 'मिलवुड' ने कानून की कटु आलोचना करते हुए कहा है कि न्यायाधीश स्वयं यदि गरीब होता तो चोरी कर सकता था।[5] अन्त में मिलवुड का कथन है कि अन्य व्यक्ति उस परमानन्द का उपभोग करते हैं जिनका हम तनिक भी स्वाद नहीं ले सकते।[6]

इस प्रकार लिल्लो के नाटकों में यथार्थ चित्रण की प्रवृत्ति पायी जाती है। इनके नाटकों में इसका जागरूकता पूर्वक निर्वाह नहीं किया जाने के कारण यूरोप में यथार्थवादी नाटकों के जन्मदाता ये न माने जाकर इब्सन ही माने जाते हैं।

---

1 Air XI— A fox may steal your hens Sir
A whore your health and pence Sir
× × ×
Your wife may steal your rest Sir
× × ×
If lawyer s hand is feed Sir
He steal your whole estate
Beggar s opera included in 18th Cent Drama
P 121

2 Opera must end happily, but not so here Ibid

3 Who takes a woman must be undone x x x
So he that tastes Woman
He that tastes woman ruin meets Ibid

4 Thorwood-xx Its very natural for him (any one who comes) to expect more pleasure in your s Ibid

5 ' What are your laws x x x by which you punish in others what you act yourself or would have been acted in their circumstances The judge who condemns the poorman for being a thief ' had been a thief himself had he been poor
Ibid P 225

6 Mill—' x x x Others enjoy that bliss that we must never taste Ibid P 264

इस युग म शेरिडिन श्रौर गोल्डस्मिथ न भाव प्रधान नाटका के बहिष्कार का प्रयास किया । व हास्य श्रौर कोमलता के पोषक थे । "स्कूल श्राव स्केन्डल्स मे भावप्रधान नाटका के विराध का चरमोत्कर्ष दिखाई देता है । स्वच्छन्दतावादी श्रौर वीरतापूण नाटककारो ने पूर्वीय दिशा के देशा से कथानक ग्रहण किए हैं । कहा जाता है कि शेरिडिन की मृत्यु होन पर नाटक की दूसरी बार मृत्यु हो गई ।[१] (एक बार नाटक की मृत्यु श्रावल के जमाने म हुई थी जिसका उल्लेख यथा स्थान किया जा चुका है।) श्रालोचक यह भी कहते हैं कि सन् १७२० से १८२० के बीच का काल नाटय साहित्य के लिए मरुभूमि है जिसम श्रपवाद स्वरूप शेरिडीन श्रौर गोल्ड स्मिथ की रचनायें नखलिस्तान का काम करती हैं ।[२] शेरिडिन के नाटका म तीक्ष्ण वाक्य एव वाक् चातुर्य पाया जाता है ।[3] जिससे नाटका म सवादपटुता पाई जाती है । इन्होंने काग्राव की शैली के श्रनुसरण का प्रयास किया है । इनके पात्रा में बैन-जोनसन के पात्रा का रग दिखाई दता है फिर भी उनम गाभीर्य का श्रभाव है जिससे वे श्रास्करवाइल्ड के पात्रा के निकट प्रतीत होते हैं ।

कल्पनामिश्रित यथार्थ को श्रपनाने मे वे श्रपने समय के सबसे कुशलकलाकार थे ।[४] उदाहरण स्वरूप श्राप लेडीस्नियर वैल स मिलिय । वह स्वय श्रत्यन्त कुख्यात है श्रौर दूसरा की मिथ्या निन्दा करने व सुनन मे श्रत्यन्त श्रानन्द उठाती है ।[५] मेरिया बजमिन बकवाइट नामक युवक से पीछा छुडाने के लिय भागती है क्योकि वह श्रपने चाचा के साथ मेरिया के श्रभिभावका से मिलने के लिए श्रा गया है ।[६] दी राइवल्स

---

1 With Sheridan the drama as a literary force died a second time English Literature Modern by G H Mairs P 243 Published in 1914

2 Whatever the reason the fact remains that as far as dramatic authorship is concerned the whole century from 1720 to 1820 was a dreary dresert broken by a single Oasis–the comedy of Goldsmith and Sheridan
The old drama and the New by William Archer (1856–1924)

3 A Short History of English Litertaure by Legouis P 273

4 A Short history of English Litt by I for Evens P 117

5 Lady Sneerwell Yes my dear Snake and I am no hypocrite to deny the satisfaction I reap from the success of my efforts Wounded myself in the early part of life by the envenomed tongue of slander I confess I have since known no pleasure equal to the reducing others to the level of my own injured reputation —School for Scandal and the Rivals by Sheridan Edited by Agnisten Birrel P 18 Year 1902

6 Ibid P 22

की नायिका अपने शुक को छोटे छोटे मोती चुगाती है। इस युग के नाटकों मे लेडी स्नीयर वेल द्वारा बताए गए सरसेफ के गुण विद्यमान हैं —

"मुझे विदित है कि वह झूठा स्वार्थी, ईर्षालू और
एक शब्द मे भाव प्रधान बदमाश है।"[1]

इससे आगे बढने पर उन्नीसवी शताब्दी मे नाटक स्वच्छन्दतावादी[2] युग मे पदार्पण करता है।

स्वच्छन्दतावादी युग के नाटक

स्वच्छन्दतावादी युग के साहित्यकार निश्चित रूपेण महान कवि तो थे, किन्तु वे उतनी ही उच्च कोटि के नाटककार नही थे।[3,4] वर्ड्सवर्थ का "बोर्डस" कॉलरिज का "ओसिरियो", बायरन के दुखान्त नाटक, शैली का "रोसली" प्रभृति अभिनयात्मक नाटक नही कहे जा सकते हैं। इसी प्रकार से साउथगेट भी अपनी उपदेशात्मक प्रवृत्ति के कारण उत्कृष्ट नाटक प्रदान करने मे असफल रहे हैं। कीटस का "ओथो दी ग्रेट" भी काव्यात्मकता के आधिक्य निमित्त श्रेष्ठ नाटक नही है। आलोचकों ने भी अभिनयात्मकता के महत्त्व को नही समझा था। लम्ब और कॉलरिज ने भी नाटकों की अभिनेयता पर बल नही दिया था। फलत नाटक कविता प्रधान हो गए थे। वर्ड्सवर्थ का काव्य नाटक बोर्डस इसका ज्वलन्त उदाहरण है। आलोच्य नाटककार जर्मनी के साहित्यकारों से भी प्रभावित हुए हैं—कॉजवे (Kolzelwe) से नूतन समस्या प्रकटीकरण को अपनाया गया तो गेटे ने मध्यकालीन वातावरण से प्रेम करना सिखाया। शिलर ने नवीन दृश्य-योजना की प्रेरणा दी। परिणामत नाटकों म ह्रास प्रन्त भावात्मकता और शिष्टाचार के दिखावे की भावना (करेक्टनस) का ह्रास होने लगा। इन कवियों ने रूमों का प्रकृति प्रेम प्रगीतों द्वारा तो प्रकट किया परन्तु वे उसे नाटकों म अवतीर्ण करने म असफल रहे। बायरन ने तो यह भी लिया कि शास्त्रीय नाटकों से ही मंच का सुधार संभव हो सकेगा।[5]

---

1 Agnisten Birrel—Edite--schooı for scandal and the Rivals by sheridan P 22

2 Romantic age (1798 to 1830)

3 The British Drama-Introduction Page 4

4 "The Drama of the early 19th Century was on the whole deplorable x x x x and most of the romantic poets attempted drama but with little success -I For Evens--A Short History of English Litesture P 118

5 "Give us the memorial of the age
One classical drama and reform the stage
English Bards and Scotch Reviewers

। आलोच्यकाल के नाटको के पतन के निम्नांकित कारण भी अवलोकनीय हैं।

नाटकों के पतन के कारण

कवट गाडन और डरीलेन नामक नाट्यग्रहो को अभिनयात्मक प्रदशन दिखाने का एकाधिपत्य प्राप्त हो गया था। फलत अन्य नाटयगृहो व नाटयलेखको का विक सित होने का अवसर ही नही मिल पाया था। मच द्वारा यथाथ चित्रण की अवहेलना की गई थी। परिणामस्वरूप नाटक विकसित नही हो सके। इसके पश्चात् विक्टोरिया के शासन काल म जीवन और जगत के साथ नाटको मे भी परिवतन आया।

विक्टोरिया का शासन काल नाटक

विक्टोरिया के शासन काल म धार्मिक प्रवत्तियो और वज्ञानिक विचारो म तथा साहित्य म रहस्यवाद और बुद्धिवाद म सघष दिखाई देने लगा था। फलत व्यक्तिगत जीवन मे उद्विग्नता घर करने लगी। साहित्य म गभीर समस्याओ का चित्रण नाटको मे न होकर उपन्यासो द्वारा प्रस्तुत किया गया।[1] आलोचना-द्वारा नाटको को बल प्रदान करने के भी प्रयास किए।[2] [3] इस युग के नाटककारो मे ब्राउनिंग का प्रमुख स्थान है।

ब्राउनिंग

ब्राउनिंग के नाटको म आन्तरिक भावो का दिग्दशन पाया जाता है जिसमे एक दिन एक घण्ट या चन्द क्षणो का चित्रण किया जाता है। ल्यूरिया इन ए बालकेनी एव पिप्पा पासेज इसके उदाहरण है। इनके पात्र परिवत्तन के पुतले हैं जो बाह्य परिस्थितियो के साथ परिवर्तित होते जाते हैं। पिप्पा पासेज म चार घटनाओ को एक सूत्र म पीरोया गया है। इनके नाटको की आशावादी भावना को प्रो० लिग्वी ने पिप्पा के शब्द म यो व्यक्त किया है

> वय मे छाया है बसन्त
> दिवस का है यह प्रात
> प्रात बजा है अब सात
> पवतो पर चमकते मोती से जल बिन्दु
> उडता है लाक पर पसार—भगवान है निजी स्वगधाम म
> विश्व म है पूरा कल्याण।[4]

---

1 एल्डिस निक्ल—दी ब्रिटिश ड्रामा—पृ० ३३५ से ३५०

2 वही

3 भारतीय नाट्य साहित्य, सम्पादक डा० नगेन्द्र पृ० १३३

4 A short history of English Literature by Prof Legouis P 342

इनके नाटकों में प्रगीतात्मकता और भावात्मकता का प्रमुख स्थान है। ये सामाजिकों की कल्पना शक्ति को जाग्रत करते हैं। उस पर इतना बोझ डालते हैं जितना कि पूर्ववर्ती किसी अन्य कलाकार ने नहीं डाला था।[1] ये नाटक अभिनय के अनुपयुक्त ही हैं—कहा जाता है कि यदि अप्सराएं भी उनका अभिनय करें तो वे सफल न हो सकेंगी।[2] स्ट्रैफोर्ड ए प्लाट, इनकी स्वचएन, कालम्ब बड्य और पिप्पा पासेज प्रभृति नाटक इसकी पुष्टि करते हैं। ब्राउनिंग में उत्साह था और साहित्य सृजन की अदम्य शक्ति भी उनमें थी, किन्तु तत्कालीन समाज में उनकी कृतियों का समादर न हो सका—युग उनके अनुकूल नहीं था।[3] वे नाटकों में नित नवीन प्रयोग करते रहते थे। इनके नाटकों का वस्तु-संघटन अवलोकनीय है। इन्होंने वस्तु-विधान को पात्रों के आधीन रखा था। उनकी रचनाओं में नाटकीयता का प्राचुर्य पाया जाता है। इन्होंने यथार्थ के साथ आदर्श के मिश्रण का प्रयास किया है। आलोच्य नाटकों में हास्य का अभाव रहता है। इनमें खलनायक को भी स्थान मिला है क्योंकि नाटककार ने बुराई से घृणा की है बुरे व्यक्ति से नहीं। ब्राउनिंग के नाटकों के समान टेनिसन एवं स्विनबर्न के नाटक भी अभिनेय नहीं हैं।

टेनिसन और स्विनबर्न

टेनिसन की विक्टन मेरी, दी कप एवं बक्वट आदि नाटकों को जो कुछ सफलता मिली है वह इरविंग के सफल निर्देशन का ही परिणाम है।[4] स्विनबर्न के नाटक भी पाठ्य सामग्री ही हैं।[5] इन्हें संवादात्मक काव्य ही माना गया है।[6] आस्करवाइल्ड के हाथों में नाटक ऐन्द्रिय और अत्यधिक यथार्थवादी अश्लीलता की सीमा को छूने वाला बन गया था।

आस्करवाइल्ड

आस्करवाइल्ड के नाटकों में काम समस्या का आधिक्य पाया जाता है। 'लेडी

---

1 But the plays besides thier lyric note of concentrated passion have inwardness of dramatic motive a swift play of thought and feeling such as had been attempted by no previous dramatist and is only to be realised by an incessant strain on the imagination of the spectator or the reader —Types of Tragic drama P 225

2. Ibid P 258

3 Prof Legouis—A short History of English literature P 382

4 Ibid

5 Ibid

6 The Chief British Dramatists P 1039

विडरजस फेन' म माँ और पुत्री का एक ही प्रेमी होता है ।। वही दोनो के शृगार का आलम्बन है ।।। इनके नाटका म समाज की हीनावस्था को विस्तारपूवक स्थान दिया गया है । इनके लिए एद्रिय सुख ही सवस्व और जीवन का चरम उद्देश्य था ।[1] आस्करवाइल्ड न भाषा को भी जीवन के निकट लाने का प्रयास किया था । रावटसन और गिलवट ने भी यथाथवाद को प्रात्साहन दिया था ।

रावर्टसन एव गिलवट

रोवटसन ऐसे लेखको म हैं जिन्होंने अपने नाटकों म तत्कालीन समाज का चित्रण प्रस्तुत किया है और जिह जम से ही मच सम्बधी शिक्षा प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था । इहान साधारणतया अतिभावना प्रधान प्रणयी युग्म को कटु वातावरण म रखकर उनके अनुभवो को प्रकट किया है । ये जागरूकतापूवक यथाथवाद का अनुसरण नही कर सके हैं ।[2] फिर भी इनका कास्ट' पढने मे चाहे अयावाह घटनाम्रा से परिपूण प्रतीत होता हो किन्तु उसका अभिनय इसे यथाथवादी ही सिद्ध करता है । इन्हें स्वय गरीबी का अनुभव था अतएव इनके नाटक स्वानुभूति स परिपूण हैं । जहा राबटसन के नाटको मे निम्नवग की असहायावस्था का चित्रण है वहां गिलवट के नाटका का अमोघ शस्त्र व्यग्य है । गिलवट एक हसमुख दाशनिक थ जिनकी व्यग्योक्तिया मे शा का पूर्वाभास प्राप्त होता है । आधुनिक नाटककारा का पूर्वाभास हनरी आथर जास पिनरो और लिल्लो मे भी प्राप्त होता है किन्तु यथाथ चित्रण म जागरूक निर्वाह के अभाव मे इन्हे यथायवादी नाटको के जन्मदाता नही कहते हैं । फिर भी इतना ता स्पष्ट ही है कि शेक्सपीयर और उसके परवर्ती कलाकारो से इनके नाटकों म यथाथ का आग्रह अधिक दृष्टिगोचर होता है ।

हेनरी आथर जोन्स

आथर जोन्स ने लायस म व्यग्य को प्रमुख स्थान दिया है । ये यथायवाद के अति निकट न आ सके क्योंकि य मचनिर्देशक की आशाम्रा का उल्लघन नही कर सकते थे ।[3] ये नाटकीय प्रदशन की परम्परा का निवाह करत थे । आलोचको का मत है कि उन्होंने एलेग्जेंडर ड्यूमा (फ्रासीसी लेखक) के फिल्म का अनुकरण कर यथायवाद को अपनाया था ।[4] अतएव वे ड्यूमा से भिन नवीन परम्परा को जन्म म

---

1 Main currents in modern literature by A R Reade P 515 to 60 for Oscarwilde sensation was an end and purpose of life

2 The English Drama by Dr Pellizzi P 37

3 The Twentieth century theatre P 24

4 Legouis A short hi tory of engli h

दे सके। चाहें जो कुछ हो इनके नाटकों को देखने से इतना तो स्पष्ट हो ही जाता है कि इन्होंने जीवन की दैनिक समस्याओं को अवश्य ही मुखरित किया है। लायस और "सिलवरकिंग" आदि में समाज को मनोवैज्ञानिक दृष्टि से देखने का प्रयास किया गया है। नाटककार ने सामाजिकों की त्रुटियों कमियों और मूर्खताओं पर व्यंग्य करते हुए कृत्रिमता को दूर रखा है। लायस का निम्नांकित उद्धरण इसकी पुष्टि करता है

काक कहते हैं—

'पत्नी को सम्हालना अत्यन्त दुरूह कार्य है'[1] और मिसेज क्रेस्मिन कहती है "आज के युग में पति की मृत्यु के बाद दो वर्ष तक शोक मनाना सम्भव नहीं है।'[2] उनके द्वारा चित्रित आधुनिक पत्नी का कथन भी सुनने योग्य है—'हाँ अन्य व्यक्तियों से अपने रूप की प्रशंसा सुनना आनन्ददायक होता है।[3] – मैं अपने पति की आज्ञाओं का अनुसरण नहीं कर सकती, मैं उसका आदर करती हूं वह अपने प्रणयी से कहती है कि मैं तो कभी कभी ही जूलियट (प्रणयिनी) बनना चाहती हूं किन्तु तुम सर्वदा रोमियो (प्रणयी) बने रहते हो इसलिये मूर्ख हो।[4] एक अन्य युवती रोष में[4] अपने पति को कहती है— यह मेरी इच्छा है कि मैं घर में रहूं या बाहर जाऊं। पर तुम तो बताओ कि तुम क्या करने जा रहे हो।[5] युवती फेल्नर ने अपने प्रणयी को इसलिए छोड़ दिया कि यह चिरकाल तक उससे दूर रहकर उसके वियोग में उसकी काल्पनिक प्रतिभा का जीवन पर्यन्त सुन्दर और युवा मानकर आनन्दित होता रहे।[6] लायस के अन्त में पति यह जानते हुए भी कि उसकी पत्नी अन्य की प्रेयसी है उसे अपने यहां ले जाता है। इसमें प्रेमी और पति के संघर्ष में पत्नी पति को प्राप्त होती है। पति उसे सहर्ष अपना अहोभाग्य मानकर स्वीकार कर लेता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि आयर जान्स ने नारी समस्या को अपने नाटकों का विषय बनाया है जिसका पूर्ण विकास इब्सन और शॉ के नाटकों में हुआ है।

---

1 The Chief British Dramatists P 1019
2. The Liars line 210 included in the Chief British Dramatists
3 Ibid P 1025
4 Ibid
5 Lady Rosmand That depends I may stay in or I may go out What are you going to do ?"-Liars P 1040 Editer in the Chief British Dramatists
6 एसे ही भावों का शॉ ने मैन एण्ड सुपरमैन में मुखरित किया है।

प्रथम महायुद्ध के पश्चात् मनोविश्लेषण को अधिक महत्ता मिली और तब से ऐसे वर्णना म आन्तरिक भावा को प्रमुख स्थान मिलने लगा।[1] आथर जोन्स के समान आथर पिनरो न भी यथाथवाद को अपनाया है।

आथर पिनरो

आथर पिनरो के नाटका मे घरेलू जीवन के यथाथवादी चित्र दिखाई देते हैं। 'दी नाटारियस मिसेज एण्ड स्मिथ म नारी के आन्तरिक सघष को स्थान मिला है। इसकी नायिका पहले तो बाइबिल को आग मे फैंक देती है और फिर स्वय हाथ डालकर उसे निकाल लेती है—उसके आचरण का वषम्य यहा प्रकट किया गया है। इनके 'सेकिण्ड मिसेज टेनक्रेरी म निम्न मानसिक रोगिया का चित्रण प्रस्तुत किया गया है। वे इससे आग नही बढ पाए हैं। वे दैनिक समस्याओ का जागरूक प्रतिपादन नही कर पाए हैं। आलोचका का मत है कि यदि ये कुछ अधिक प्रयास करते तो यूरोप म इब्सन से भी पूव आधुनिक यथाथवादी नाटक के जन्मदाता बन जाते। कहा जाता है कि इन्होने अंग्रेजी नाटका को धूल से निकाल कर आदरणीय स्थान पर स्थापित कर दिया था।[2]

---

1 English Drama by Dr Camillopellizı edited ın the year 1935, Preface and pages 1 to 15

2. 'Sir Arthur Penero x x x raised the English Drama from the mud and placed it in a position where it could command respect The outline of literature by J Drink water, P 178

आधुनिक युग | 4

यद्यपि उपयुक्त नाटककारो ने यथार्थवाद को अपनाने का प्रयास किया किन्तु इसको प्रमुखता इब्सन के अंग्रेजी म अनूदित नाटको के कारण ही मिल सकी। हेनरिक इब्सन और अन्य यूरोपीय नाटककारो ने अंग्रेजी नाटको को प्रभावित किया। हिन्दीवालो को अधिकाशत अंग्रेजी के माध्यम से ही इनका परिचय मिला।

हेनरिक इब्सन

इब्सन ने ऐतिहासिक प्रतीकात्मक और कल्पना प्रधान नाटको से लिखना आरम्भ किया था। ऐतिहासिक वस्तु से वे घरेलू कथानको की ओर बढ़। वे आतरिक भावो और यथार्थ तथ्यो के चित्रण को उपयुक्त समझते थे। इन्होने अपने युग की घरेलू समस्याओ पर प्रकाश डाला। उनके द्वारा पुरातन नाट्यपद्धतिया परिवर्तित होकर नवीन बन गई। नाटको म सूक्ष्म तत्त्व पर्यवक्षण की क्षमता भर कर उन्होने उन्ह बुद्धिवादी बना दिया इगलण्ड मे जब इनका विरोध किया गया [1] तब एडमड गूज, बर्नार्ड शा, विलियम आर्चर जे टी ग्रेन आदि ने इनकी मुक्त कण्ठ से प्रशसा कर उनका समर्थन किया। सन् १८६० के पश्चात् इगलड म इनके नाटको का प्रभाव तीव्रगति से फलने लगा। इगलण्ड म हैबुड के घरेलू नाटका म एव रोबर्टसन पिनरो जिल्ली जोन्स आदि के नाटका म इनका पूर्वाभास तो दिखाई देता है किन्तु उनम इब्सन की सी गम्भीरता एव जागरूकता का अभाव है तथा वे नाट्य रूढियो से मुक्त नही हो पाये थे। इब्सन ने भावी नारी का चित्रण करते हुए नाटक म कार्य व चरित्र पर प्रचुर बल दिया है। इन्होने समस्या नाटका को किसी बधे बधाये दर्शन से सम्बन्धित नहा किया है। आलोचका का मत है कि इनके नाटका द्वारा यूरोप म

---

1 Clement Scoot criticized Ibsen of dramatic impotance Ludicrous amateurishness nastiveness vulgarity egotism coarseness absurdity unintersting verbosity and surbanity
The Quientessence of Ibsenism by Shaw 3rd Edi P 4

नाटकीय पुनर्जागरण का जन्म हुआ है।[1]

इब्सन की प्रमुख विशेषता यह है कि इन्होंने पात्रों मे स्वाभाविकता भर दी है। इनके पात्र नायक, नायिका, विदूषक आदि रूपों म नहीं बांट जा सकते हैं। वे मनोवैज्ञानिक रहस्यों का उद्घाटन करते हैं। नाटककार के अनुसार पात्रों की बुराइयों और बीमारियों का उत्तरदायित्व उनके माता पिता पर है।

'वरियस एट हिलग लड" म युवती हजोडस और प्रेमी सिगार्ड' के प्रणय न प्रतिशोध का रूप धारण कर लिया —'हजोडस न सिगार्ड को कई प्रकार की यातनायें दी और अन्त म वध भी कर डाला। यह था दो प्रेमियों न प्रणय का चरमोत्कर्ष। व दोनों एक दूसर के प्रेमी थ पर विवाह उनका दूसरों से ही हुआ था। इब्सन ने इस विडम्बना का मर्म और मनोवैज्ञानिक चित्रण प्रस्तुत किया है। हजोडस कहती है— हा सिगार्ड मैं तुम्हें प्रेम करती थी यह मैं अब समझ पाई हूँ। तुम कहते हो कि इस बारे म चुप थी और अभद्र भी थी किन्तु एक युवती इससे अधिक क्या कर सकती है।'[2] वह अब अपने विवाहित पति को नहीं छोड सकता और न प्रणयी को। वह अपने प्रणयी देवर की पत्नी नही बनकर सहचरी बनती है। इससे यह मनोवैज्ञानिक सत्य प्रकट होता है कि प्रणय और घृणा व विवाह आदि सामाजिक नियम स्वच्छन्द प्रेम मे बाधक होते हैं। इसम विरोधी भावो, विरोधी उक्तियो और वाक्चातुर्य को स्थान मिला है। अन्त म मृतक प्रणयीयुग्म दिखाई देता है जो नाटक म स्वप्निल आभा उत्पन्न कर देता है।

घोस्टस म यथार्थवाद स्पष्टतया मुखरित हो जाता है एग्सट्रेंड नामक बढ़ई उस युवा लड़की स जिसकी गर्भवती मा से उसने पैसे लेकर विवाह कर लिया था [जब कि वह लड़की उसकी मा के गर्भ म ही थी] निम्नांकित बातें कहता है—

इग्मन्ड — लेकिन हम रात्रि मे होटल को कुछ आकर्षक बनाने के लिये युवतियाँ चाहिये।[3] [तुम वहीं चलो] इसी प्रकार से मिसेज एल्विंग जो हृदय से पादरी को प्रेम करती थी उसका विवाह एल्विंग से कर दिया तब वह पादरी से

---

1 It is to Ibsen that Europe owes the renaissance of dramatic Litt The outline of Litt P 716 Edited by John Drink water

2 Warriors at Hilgaland—Horjords Yes Sigurd I loved you —I now know You said I was silent and ungentle with you what else could a woman do ?

Ghosts & two other plays by Ib en Edited in 1930 P 50

3 Shaw—The Quientessen e of Ibsenism-Preface P VII-VIII

कहती है कि उसके लड़के ओसवेल्ड का मुँह पादरी से अधिक मिलता-जुलता है और ओसवेल्ड कहता है कि शहरों में मानव अपने बच्चों और अपने बच्चों की माँ के साथ सुखपूर्वक जीवन यापन करता है।[1] अर्थात् अविवाहित माँ, अपने प्रणयी और पुत्र के साथ सुख से रहती है। मिसेज एलविंग का कथन है कि ये कानून और नियम ही सब से भयंकर दुखों के मूल हैं। यह एक विडम्बना ही थी कि एलविंग ने एक स्त्री को जिससे कि उसका अनतिक सम्पर्क था गर्भवती होने पर पैसे देकर इससे ढूंढ़ से विवाह करा दिया और उसने स्वयं पादरी की प्रेमिका न जा भी सम्भव गर्भवती थी विवाह कर लिया। आगे चलकर जोना एक लड़की की 'रजिना' की माँ बनी और 'मिसेज एलविंग ने 'ओसवोल्ड नामक पुत्र को जन्म दिया। 'रेजिना और 'ओसवाल्ड' भी प्रणय-पाश में बंध गये किन्तु जब रेजिना को ज्ञात हुआ कि ओसवेल्ड अपने पिता की बीमारियों से पीड़ित है तो वह उसे छोड़कर चली गई। यह है "घोस्टस" का प्रणय-चित्रण जिसमें उग्र यथार्थ की चरमसीमा दिखाई देती है। इसमें नशे द्वारा गूढ़ तथ्य खोल दिये जाते हैं। नाटककार ने ओसवेल्ड और रेजिना का विवाह तो न होने दिया किन्तु इसका कारण रेजिना की कामेच्छा और ओसवेल्ड की बीमारी को बताया गया है न कि किसी प्रकार का भाई भाई बहिन का सम्बन्ध।

"एनीमी आव दी पीपल" में लोगों की स्वार्थपरता का चित्रण किया गया है। स्वार्थ के लिये भाई मित्र पत्रकार और जनता के प्रतिष्ठित व्यक्ति शत्रु बन जाते हैं। वे सभी समाज से भयभीत दिखाई देते हैं। इसमें यह भी बताया गया है कि अध्यापकों को वह भी पढ़ाना पड़ता है जिसमें उनका विश्वास नहीं होता है। समाज के व्यक्ति बूढ़ी औरतों के रूप में चित्रित किये गये हैं जो केवल अपने कुटुम्ब के हितचिन्तन के अतिरिक्त और कुछ नहीं सोच सकते।[2] नाटक के प्रमुख पात्र डा० स्टाकमैन का मत है कि समाज झूठ और स्वार्थ पर आधारित है।[3] उनका निष्कर्ष है कि विश्व में वही व्यक्ति सब से मजबूत है जो विपद्‌बाधाओं को अकेला सहन कर सकता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि इब्सन की एक विशेषता जटिल वस्तु से प्रति यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करना दिखाई देती है। इनके नारी-सम्बन्धी विचारों के बारे में मतभेद है। एक दल कहता है कि इब्सन ने अनायास ही नारी स्वातन्त्र्य का

1 The Outline of Literature —P 700 to 7°6

2 Dr Stockman— 'All the men are old women They think of their families alone
Ghosts & two other plays P 206

3 the discovery that all the sources of our moral life are poisoned and that the whole fabric of our civic community is founded on the pestiferous soil of the falsehood Ibid P 214

चित्रण कर दिया एव समाज म उनका विरोध किया जाने लगा। दूसरे मत के विद्वानो का कथन है कि उन्होने जागरूकतापूवक नारी स्वातन्त्र्य का चित्रण किया है।[1]

चाहे जो कुछ हो इनके नाटको मे नारी स्वातन्त्र्य पर प्रकाश अवश्य ही डाला गया है और इसी के कारण इब्सन की कटु आलोचना[2,3] व प्रशसा भी बहुत हुई है। शॉ का तो कथन है कि इब्सन के सिद्धान्तो का अनुसरण न करने के कारण ही विश्वयुद्ध हुआ। आगे उनका मत है कि विश्व युद्ध के पश्चात् यदि इब्सन जीवित होते तो कहते मैंने तो तुम्ह पहले ही इन दुर्गुणो से बचने को कहा था।[4]

इब्सन ने कभी पादरियो और धम गुरुओ के पापाचार का वणन किया तो कभी "कल्पना लोक मे रहने वालो की कलाई खोली।"[5] और बताया कि समाज म सुखी दिखाई देने वाले व्यक्ति अन्दर बहुत दुखी हैं।[6] उन्होने यह भी इंगित किया है कि नारी परतन्त्रता से घृणा करती है और ववाहिक बन्धन उसे बाधे रहते हैं।[7] किन्तु स्वतन्त्रता दी जाये तो वह अपने पति का ही साथ देगी[8]। उनके द्वारा प्रेमी की प्रेमिका को अमर कर देने की आकाक्षा[9] एव मनुष्य की धन लोलुपता[10] आदश के नाम पर बुरा काय करने वालो की नीचता[11] आदि पर प्रकाश डाला गया है।

---

1 the strongest man in the world is he who stands most alone I had P 247

2 The daily telegraphy for the March 14 1891 compared his plays to open drains a loathsome sore unbandaged a dirty act done publicly or a lazer house with all its doors and windows open Bestial Cynical disgusting poisonous sickly delirious indecent loathsome fetid literary cassion crupl us stuff —Quientessence of Ibsenism P 5

3 His work towers over all that the English stage has produced in the modern period A short History of English Literature by I For Evans P 119

4 The Quientessence of Ibsenism Preface

5 Brand and Ghosts

6 Peergynt

7 Ghosts

8 Lady of the See and Ghosts

9 Lady of the See

10 The Master builder

11 John Gebril

मालोच्य नाटकों में यथा वक्तव्य से यह भी ध्वनित होता है कि धन बाला से नियत मार्ग है[1]।

इन सब से बढ़कर उनकी महत्वपूर्ण देन है नाटकों में विवाद का स्थान देना। इनकी डाल्स हाउस की नीरा अन्त में कह देती है कि हम बैठकर हमारे बीच जो कुछ भी हो रहा है उस पर विचार विमर्श कर लेना चाहिये[2]। यह विवादात्मक नाटकों की जननी बना[3] उनके नाटकों में वाक्चातुर्य, पूर्वाभास, व्यंग्य, विरोध विरोधाभास व तर्कप्रधान व्यक्तियों का प्राचुर्य पाया जाता है। व उपदेशक के समान उपदेश देते हैं तो मनुष्यापक के समान मानने पर में तर्क भी देते हैं।

इब्सन द्वारा प्रस्तुत किये गए दृश्य अत्यन्त यथार्थवादी होते हैं। वे अत्यन्त गम्भीर और सभी से सम्बन्धित समस्या को अत्यन्त सीमित पात्रों के माध्यम से प्रस्तुत करते हैं। इनके रंगमंच-संकेत भी विस्तृत होते हैं। व प्रतीकों द्वारा अपने पक्ष का समर्थन करते हैं। इन यथार्थवादी नाटकों के अभिनय की एक नवीन पद्धति भी निकाली गई। उदाहरणार्थ जब मानव जीवन को अन्य प्राकृतिक पदार्थों और शक्तियों से अधिक महत्वपूर्ण चित्रित किया जाता है जैसा कि इब्सन और चेखव करते हैं तब रंगद्वार नीचा और चौड़ा दिखाया जाता है, पात्र उस मंच को सम्हाले हुए दिखाई देते हैं[4]।

इब्सन के नाटक दोष

उपर्युक्त विशेषताओं के साथ इनके नाटकों में निम्नांकित दोष भी पाये जाते हैं। इब्सन के नाटकों में क्रिया कलापों का अभाव पाया जाता है वहाँ पात्र बात और विवाद तो बहुत करते हैं किन्तु काम कुछ कम ही करते दिखाई देते हैं। जहाँ भय और सनसनीपूर्ण नाटकों में दुर्घटनाओं की लड़ी दिखाई देती है–उनका आधिक्य रहता है वहीं इनके नाटकों में क्रिया कलापों का अभाव पाया जाता है[5]। यह अभाव आगामी नाटककारों में नग्न रूप में दिखायी देता है वहाँ केवल विवाद ही विवाद दिखाई देता है क्रिया कलाप तो नाम मात्र का ही दृष्टिगोचर होते हैं।

इब्सन अपने पक्ष का समर्थन प्रतीकों द्वारा करते हैं किन्तु ऐसा करने में

---

1 When we dead awaken

2 We must sitdown and discuss all this that has been happening between us Nora

3 The Quintessence of Ibsenism P 175 to 200

4 Technique followed by Moscow Art Theatre—The Modern Drama in Europe, P 120 to 140

5 Types of tragic Dram P 267

उनका क्षेत्र अत्यन्त संकुचित हो जाता है। यथा घोस्टस की घटना घटित हो सकती है किन्तु पात्रों में इतना तारतम्य होना साधारणतया सम्भव नहीं माना जा सकता। ऐसी अवस्था में आलोचक उन्हें यथार्थवादी भी नहीं मानते हैं[1]। यहाँ यही कह देना उपयुक्त होगा कि एक परिस्थिति विशेष पर उनका संकुचित क्षेत्र देखकर उनके यथार्थवाद पर विवाद हो सकता है अन्यथा आज तो इब्सन व यथार्थवाद एक ही अर्थ प्रतिपादित करने वाले दो शब्द बन चुके हैं[2]

निष्कर्ष

अतएव निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि इब्सन ने अपने युग की समस्याओं को मुखरित करने का स्तुत्य प्रयास किया है, जहाँ पात्र यह कहते हैं 'दुख अनन्त और चिरन्तन है।" व उद्देश्य से काय प्रेरक भावना, विचार और मानव-रुख को परखते हुए उसकी प्रवृत्ति पर पहुँच जाते हैं, जहाँ पात्र कहता है दुख अनन्त और चिरतन है। उनके नाटको मे यौन-समस्या और मानव-हृदय के क्रन्दन को प्रमुख स्थान मिला है। इब्सन के अतिरिक्त यूरोप के अन्यान्य नाटकों और नाटककारों ने भी अंग्रेजी नाटको को प्रभावित किया है। भारतीयो ने उक्त यूरोपीय नाटककारो का परिचय अधिकाशत अंग्रेजी के माध्यम से ही प्राप्त किया है। इनमे मैटरलिंक को प्रमुख स्थान है।

मैटरलिंक

आलोच्यकाल के प्रारम्भ में यूरोप में दो प्रवृत्तियां पाई गई एक तो स्केंडिया से सम्बन्धित थी जिसका विकास इब्सन के नाटकों में हुआ और दूसरी पाई गई मैटर-लिंक की नाट्यकृतियो मे जिनका प्रेरणास्रोत फ्रांस के नाटककार थे। द्वितीय प्रवृत्ति के लक्षण इंगलण्ड में ब्राउनिंग की नाट्यकृतियो में भी विद्यमान थे। जहाँ इब्सन ने अपने नाटको मे किसी भी प्रकार की रूमानी विचारधारा को स्थान नहीं दिया है वहाँ मैटरलिंक ने अदृश्यवास्तविकता को प्रकट करने का प्रयास किया है। पहली मे यथार्थ का आग्रह था—ऐसा आग्रह जैसा कि त्रासदी के इतिहास मे कभी नहीं पाया गया है [3]तो दूसरी प्रणाली में रूमानी प्रवृत्ति और कल्पना चरम सीमा पर पहुँच गई थी। मैटरलिंक ने अपने विचार व्यक्त करने के लिये प्रतीकों और कल्पना का सहारा लिया है। नाटक मे पात्रो का व्यक्तित्व प्रच्छन्न ही रहता है और उनकी भाषा भी बहुधा अस्पष्ट हो जाती है। फलत समस्या का वांछित हल नहीं निकल पाता है[3]।

---

1 The Theatre P 1
2 Types of tragic Drama P 248
3 The Drama in Europe P 130

प्तीकात्मक पात्रों के प्रस्तुतीकरण का ढंग भी नया निकाला गया। यथा—जब नाटकों में अतिमानवीय शक्तियाँ मानव पर विजय प्राप्त करती हैं तो मंच द्वार को बहुत ऊपर उठा दिया जाता है। मैटरलिंक के 'ब्लाइंड' के अभिनय में इसी पद्धति का अनुसरण किया गया था।[1]

आधुनिक युग यूरोप के अन्य विचारक एवं नाटककार

मैटरलिंक और इब्सन के अतिरिक्त यूरोप के अन्य विचारकों और नाटककारों ने भी अंग्रेजी साहित्य को प्रभावित व आकर्षित किया। उदाहरणार्थ दुखांत नाटकों में अंतर्द्वन्द्व की महत्ता की जागरूकता का सर्वप्रथम प्रतिपादन जर्मन दार्शनिक और आलोचक हीगल ने किया[2]।

काट की सौन्दर्य सम्बन्धी धारणा का प्रभाव भी इन पर पड़ा। रूस, और अमेरिका और इटली के नाट्य साहित्य ने अंग्रेजी नाटककारों को प्रेरणा दी। वहाँ के नाटक अंग्रेजी में अनूदित हुए जिससे हिन्दी वाले उससे परिचित हुए। [और शा पर रूसी फेंटेसिया के प्रभाव का विवरण यथा स्थान दिया गया है।]स्विनबर्न ने क्रोचे को आदर्श माना और उनकी अभिव्यंजनात्मक शैली को श्रेयस्कर कहा। चेखव के विचारों का भी प्रभाव अंग्रेजी साहित्य पर पड़ा। उन्होंने कहा आज का रंगमंच केवल दैनिक कार्यक्रम एवं पक्षपातपूर्ण विचारों का माध्यम रह गया है।

शोपेनहार और फ्रायड के सम्बन्धी विचारों और एडलर व युंग आदि के आत्माभिव्यक्ति को शक्तिशाली मानने के सिद्धान्तों को अंग्रेजी साहित्य में स्थान मिला। आलोचकों और नाटककारों ने इन्हें अपनाया। टाल्सटाय जापालासात्र, नील और स्ट्रिंडबर्ग आदि ने भी अंग्रेजी नाटककारों को आकर्षित और प्रभावित किया। हिन्दी वालों ने उक्त विद्वानों की रचनाओं का परिचय अधिकांशतः मुख्य रूप से अंग्रेजी के माध्यम से प्राप्त किया। इस युग में नाटक निम्न स्तरीय मध्यम श्रेणी की वस्तु बन गया है। फ्रांस की क्रान्ति के विचार, औद्योगिक क्रान्ति की लहर और यन्त्र बल का आधिक्य इसके प्रमुख कारण बने। १८६३ में स्थापित केर हार्डी के स्वतन्त्र मजदूर संघ ने बाद में पार्लियामेंट में भी बल प्राप्त किया, इसमें सहयोग दिया। इब्सन और शा दोनों ही यथार्थवादी लेखक थे। गाल्सवर्दी के नाटकों में वर्ग संघर्ष मुखरित हो उठा। *उस समय दो प्रकार के सामाजिक* दिखाई देने लगे वे जो राजा महाराजाओं को देखना पसन्द करते थे और दूसरे वे थे जो निम्न वर्ग

---

1 These example are based on the technique of Moscow Art Theatre

2 The Drama in Europe P 131

के यथार्थ चित्रण को चाहते थे।[1] जब द्वितीय वर्ग की विजय हुई तो आधुनिक नाटक का जन्म हुआ।[2] लोगों में गरीबों के प्रति प्रेम का उदय हुआ[3] क्लिमेण्ट स्काट ने आलोचना द्वारा इसे बल प्रदान किया।

अंग्रेजी नाटक सन् १८८० से १९७० तक

सन् १८८० के पश्चात् अंग्रेजी नाटक साहित्य का पुनर्जन्म हुआ।[4] इसका यह तात्पर्य नहीं कि इगलैण्ड में कभी नाटकों का बहिष्कार किया गया। (क्रामवेल ने अवश्य ही उनके दमन का प्रयास किया, जिसका उल्लेख यथा स्थान किया जा चुका है)। अतः इसका अभिप्राय यह है कि अठारहवीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही मध्य श्रेणी द्वारा नाटकों का अनादर किया गया। इन पर सन्देहात्मक दृष्टि रखी गई और गोल्डस्मिथ एवं शेरिडिन को यदि अपवाद माना जावे तो सन् १७०० से १८८० ई० तक कोई मौलिक और उच्च श्रेणी का कलाकार नहीं दिखाई देता है।

आलोच्यकाल में साहित्यिक प्रयोगों का आरम्भ हुआ[5]। नारी को आदर की दृष्टि से देखा गया। महायुद्धों ने पुरातन विश्वासों को हिला दिया और आर्थिक स्थिति को डावाडोल बना दिया। साहित्य में पुरातन नियमों को हेय माना गया और तुकान्त छन्द को अपनाया गया। सामाजिक दुर्व्यवस्था पर व्यग्य प्रदान किये गये और सिनिसिज्म को सिद्धान्त सा बना डाला गया। अपने विचारों को प्रगट करने के लिये प्रतीकों का सहारा लिया गया और विभिन्न देशों के नाटकों का अध्ययन किया गया[6]। अन्तर्राष्ट्रीय भावनाओं और साथ ही राष्ट्रीय व प्रान्तीय भावनाओं का उदय हुआ। कैल्टिक पुनरुत्थान प्रभृति आन्दोलन और— 'मानव मानव हो समान' के विचार इसके उदाहरण हैं। नाटकों में दैनिक समस्याओं को प्रमुखता दी जाने लगी। इनमें विचारों की प्रधानता होने के कारण इन्हे विचार नाट्य [ड्रामा आव आइडियाज] कहते हैं। ऐसे नाटकों में एकाकी को छोड़कर अधिकांशतः तीन अक होते हैं जिनका प्रारम्भ प्रथम अक में, सघर्ष का विकास द्वितीय में और चरमोत्कर्ष और अन्त तृतीय अक में प्राप्त होते हैं। पात्रों का चित्रण विरोध द्वारा प्रकट किया जाता है। कतिपय रेखाओं से उनकी अवतारणा की जाती है। भाषा पात्रों की बुद्धि और उनके सामाजिक स्तर के अनुकूल होती है। इनके उद्भव और विकास

1 The 20th Century Theatre P 25
2 Ibid P 26 27
3 Poor are god s People Ibid
4 Prof Legouis A Short History of English Literature P 355
5 दे० एडमण्ड गूज के नाटक
6 See the plays of Sceikove

म इब्सन का उल्लेखनीय हाथ था । उनके प्रभाव स्वरूप आधुनिक युग नाटकों की एक नई सी धूम मच गई । बर्नार्ड शॉ, एडमण्ड्स ज और प्रभृति विद्वान इसके समर्थक थे । शॉ के नाटकों म यह प्रवृत्ति स्पष्ट हुई है[1] । विद्वानों ने शॉ और इब्सन म वही सम्बन्ध देखा है जो बासमावेश म पाया जाता है ।

शॉ ने समाजवादी के नाते तत्कालीन संस्थाओं और रीति रिवा युक्त बनाया और आयरलैण्ड निवासी के नाते वे इंगलैंड का विशेष उन्होंने इंगलैंड की परम्पराओं रूढ़ियों और मान्यताओं को युद्ध दिया । तार्किक दृष्टि से वे अपनी राह पर आगे बढ़ते गये और अप विरोधात्मक रूप से प्रकट करने लगे । उन्हें सामाजिकों की खिल्ली अस्तव्यस्त चित्रण प्रस्तुत करने उनकी निन्दा करने एवं उन्हें आश्चर्य में आनन्द प्राप्त होता था । उनका नाटकीय विधान नूतन माना जाता तो वस्तु को प्रधानता दी और न पात्रों को, वे तो अपने विचारों को प्र जिन्हें वे बौद्धिकता प्रधान भाषा के माध्यम से विरोधात्मक रूप म प्रकट इनकी विस्तृत भूमिकायें इनके नाटकों का अभिन्न अंग बन गई हैं । अपने नाटकों के अन्त म भी अपने विचार प्रकट करने के लिय निबन्ध हैं 'मैन एण्ड सुपरमैन" की रिवोल्यूशनिस्ट हैण्डबुक इसकी साक्षी है । इन निम्नांकित विशेषतायें पाई जाती हैं ।

बर्नार्ड शा के नाटकों की विशेषताएँ

शॉ[2] अपने नाटकों म कभी अपने वाद का प्रचार करते हैं कभी की बातें करते है और कभी भविष्य की कल्पना करते हैं । उदाहरणार्थ ' जलाह" मे उन्होंने प्रागैतिहासिक काल का वर्णन करते हुए दूर के भविष्य की है[3] । वे "मैन एण्ड सुपरमैन' म अपनी विचारधारा का प्रचार करते देते हैं । उनका समाजवाद प्रतिक्रियावादी नहीं है और न वे क्रान्ति में वि हैं । वे तो समाज म शनैः शनैः स्वाभाविक परिवर्तन की आकांक्षा रख उनकी 'फेबियन" विचारधारा का, परिणाम प्रतीत होता है । उनके नाट

---

1 A History of English Literature by Compton Rickett

2 All else in the modern theatre must take second plac achievement of George Bernard Shaw (1856 to 1950) A Short History of English Literature P 122

3 Back to Methuselah deals with the history of man A thought can reach '
John Drinkwater The outline of Literature P 718, 7

व्यग यथार्थ और कल्पना का सुखद सम्मिश्रण किया गया है[1]। वे प्रत्येक वर्ग को खिन्न देते हैं किन्तु नाटक को मनोरंजक अवश्य ही बना देते हैं।

शा की विचारधारा का पुष्ट प्रतिपादन करने के कारण उनके नाटक प्रबन्धात्मक नाटक [थीसिस प्लेज] कहलाते हैं। उन्हें उद्देश्य प्रधान नाटक भी कहा जाता है इनके नाटकों में भय और आत्मा को स्थान मिला है। इनके नाटक, आतंक तक, मनोविज्ञान मानसिक द्वन्द्व आर्थिक विषमता सामाजिक कुरीतियाँ और अन्धविश्वासों आदि पर आधारित रहते हैं। इनके नाटक दया और करुणा भी प्रदर्शित करते हैं। वे समाज के निम्न वर्ग के साथ सहानुभूति रखते हैं।

शा ने ऐतिहासिक महान् पुरुषों को भी प्रभावशाली रूप में चित्रित नहीं किया है[2] क्लियोपेट्रा और नपोलियन को साधारण रूपों में ही अवतरित किया गया है। इन्होंने पात्रों को बुद्धिगम्य और भावशून्य रूप में प्रकट करने का प्रयास किया है। वास्तव में आज वीरपूजा का युग समाप्त हो गया है और व्यक्तिवाद ने अपनी जड़ें जमा ली हैं। इन्होंने विभिन्न देशों के साहित्य की सुन्दरता को अपने नाटकों में स्थान दिया है। इनका 'हार्ट ब्रेक हाउस' इसी ढग का कल्पना प्रधान रूपक [फेन्टेसिया] है। नाटककार ने आगे चलकर यह बताया कि धार्मिक नाटकों में दर्शन का पुट होना चाहिये। इनके नाटकों में जीवन शक्ति [लाइफ फोर्स] को महत्ता दी गयी है। यह जीवन शक्ति फ्रायड की यौन शक्ति नित्शे की अतिमानव की शक्ति और धार्मिक पुरुषों की धार्मिक भावना के समान ही शक्तिशाली है। इसका उद्घाटन 'मैन एण्ड सुपरमैन' में किया गया है।

शॉ के नाटकों में विस्तृत भूमिकायें पायी जाती हैं। इसका कारण देते हुए रीड महोदय का कथन है कि शा केवल दर्शकों को ही नहीं पाठकों को भी अपनी ज्ञान राशि से लाभान्वित करने की आकांक्षा रखते थे।[3]

ये विचार प्रधान नाटकों के जनक कहे जाते हैं फिर भी इनके नाटकों में वाक्चातुर्य और हास्य का अभाव नहीं पाया जाता है। इनके नाटकों में बौद्धिकता और क्रान्तिमय विचारों का आधिक्य पाया जाता है। इन्होंने यह सिद्ध किया है कि

1 A Nicoll—The British Drama P 360

2 The British Drama A Nicoll P 369

3 He thought public might not see them performed
A R Read Main currents in modern Literature P 61
Seeing the rivalary of the novel he has dared enemy s camp and take from him some of his guarded devices. A Nicoll The British D

मनुष्य को उन विचारो के सामने झुकना पडता है जिन्हे वह घृणा करता है । 'मैन एण्ड सुपरमैन" का टेनर इसका उदाहरण है ।[1] इनकी नायिकाएँ बुद्धिप्रधान युवतियाँ दिखाई देती हैं । इनके नाटको की विशेषता यह है कि इनमे रगसकेत बहुल्य पाया जाता है । ये पाठको को उपन्यास का सा आनन्द भी प्रदान करते हैं । उसके लिये कहा जाता है कि साहसपूर्वक उपन्यासो की प्रतिद्वन्द्विता को देखकर उन्होने शत्रुओ में साहसपूर्वक पदार्पण किया और उसकी अत्यन्त सतर्कतापूर्वक सम्हाली हुई पद्धतियो का हरण कर लिया है ।[2] वास्तव मे ये मच सकेत पाठक की दृष्टि से लिखे गये प्रतीत होते हैं । अभिनय की दृष्टि से इनकी उतनी महत्ता भी नही दिखायी देती है जितनी कि पाठको की जिज्ञासा तृप्ति के लिये इनकी आवश्यकता प्रतीत होती है । इनके मैन एण्ड सुपरमैन प्लेज प्लीजेण्ट एण्ड अन प्लीजेण्ट एण्ड प्लेज फार प्यूरिटिन्स मे रग सकेत पाठको की जिज्ञासा तृप्ति का कारण बनते हैं यथा एक स्थान पर सकेत मिलता है एन सुन्दर है अथवा नही यह आपकी रुचि और सभवत उम्र और योनि पर आधारित है ।'[3]

शा का कथन है कि मेरा ढग यह है कि मैं अत्यधिक परिश्रम करके उचित बात को मालूम कर लेता हू और तत्पश्चात् उसे हसी मे कह देता हू किन्तु सबसे अधिक हसी की बात यह है कि मैं वह हसी की बात गभीर होकर कहता हू ।[4] उनकी फैबियन विचारधारा ने इसमे सहयोग दिया क्योकि फबियन लोग गभीर नेता मे कम और लाइटर नेता म अधिक विश्वास रखते हैं।[5] उनम आयरलैण्ड वासियो मे पाये जाने वाले दुर्लभ हास्य का प्राचुर्य है और वे वाग्मीव और ओस्कर वाइल्ड की वाकपटुता भी रखते हैं । विरोधी बातें कहना आधुनिकतम विचार प्रकट करना एव वाक्चातुर्य का परिचय देना उनके पात्रो की प्रमुख विशेषतायें है । ए आर रीड का कथन है कि कैंडिडा और गटिग मैरिड अगेन आदि की वस्तु मे नही कथोपकथन मे उच्चता विद्यमान है ।[6] वे वस्तु-सघटन की यन्त्रवत् पद्धति के विरोधी थे । शास्त्रीय नियम उन्हे अमान्य थे । वे अपने आपको एक कला का प्रेक्टिशनर-कला से ही अपना उदर भरण करने वाला मानते थे । वे व्यग्य द्वारा नैतिक सुधार की आकाक्षा रखते

---

1 Man and Superman also see Shakespeare s much ado about nothing
2 The British Drama P 442
3 Man and Superman P 136 (Published by the City Book Club)
4 Bhartiya Natya Sahitya Essay Western Drama-Principles of
5 Man and superman Introduction
6 A R Read Main Currents in modern Litt P 55 to 60 70

थे।[1] "मिसेजवारेंस प्रोफेशन द्वारा वे प्रतिपादित करते हैं कि मजबूरी से युवतियो को वेश्याएँ बनना पडता है और जब वे पतन की ओर बढ जाती है तब व उससे मुड नही सकती, वे तो उसी ओर जाना चाहती है।[2] वश्या मा वेश्यावत्ति से घृणा करने करने वाली पुत्री से कहती है कि तुम अपने रूप से दूसरा को क्या धनवान बनाती हो, स्वय उससे धनवान बनो।[3] अत मे वही वेश्या कहती है कि 'वास्तव म लोग ऐसे नही है जसे वे दिखायी देने का बहाना करते हैं। वेश्याओ पर लेखनी चलाने वाले तो कभी वश्या से मिले तक नही हैं वे उनके बारे मे सच्चाई से कुछ भी नही जानते।"[4]

शा ने सघष को नाटक का उद्देश्य माना है। इनके नाटको म अच्छे और बुरे का सघष न होकर अच्छाई का अच्छाई से सघष होना है। वे अपने नाटको को बौद्धिक वस्तु मानते हैं।

पात्रो म सवाद पटुता पायी जाती है वे तक पूण होत हैं। कथोपकथन स नाटककार के मनोविज्ञान का गहन ज्ञान विदित होता है। वे अन्य व्यक्तियो के विचारो को परिवर्तित करन का प्रयास करते हैं। कैंडिडा का उसके पति और प्रेमी से वार्तालाप इस वाक्चातुय का श्रेष्ठतम उदाहरण है।

'औरतें मनुष्य को विवाह बधन म ढकलती हैं। 'मैन एण्ड सुपरमैन' इसका सुदर उदाहरण है।

शा के नाटक विवाद प्रधान है। उन्होने नाटको का विवाद से प्रारम्भ कर काय प्रारम्भ पर समाप्त करने को श्रेयस्कर माना है। वे भाषा प्रवाह की ओर अधिक ध्यान देते हैं। वे बिना किसी शेप क सुदर नाटको की रचना कर देत हैं। जब निम्न श्रेणी के नाटककारो न 'शेपलेसनस' को ही सुदरता और श्रेष्ठता मान ली तब उनम महानता का अभाव खटकने लगा।[5] उनके नाटको मे विस्तृत भूमिकाएँ दिखायी देती है जिनम अधिकाशत नाट्यवस्तु पर प्रकाश डाला जाता है। सट जोन, मैन एण्ड सुपरमैन एव कैंडिडा प्रभृति इसके उदाहरण हैं। आलोचको का मत है कि

---

1 The complete works of George Bernard Shaw—A warning from the author P 1 to 6

2 Mrs Warren— I always wanted to by a good woman I do wrong and nothing but wrong now —Complete works of Shaw (Odamns Press P 92)

3 Mrs Warren— Why to allow others to trade in your good looks You think that people are what they pretend to Ibid

4 Dr Cpellizzi English Drama P 85

5 Twentieth Century Theatre P 46

यह पद्धति अनुपयुक्त है क्योंकि नाटक में वार्तालाप के द्वारा कथा विकास होना चाहिए अन्यथा नाटक उपन्यास बन जायेंगे।

अप्रेन्सी ड्रेस और रंग की महत्ता को उचित स्थान देते हैं।[1] जिस प्रकार से 'मिसेज वारेन्स प्रोफेशन' में वेश्या के प्रति सहानुभूति प्रदर्शित करते हुए उसकी वृत्ति को बुरा बताया गया है उसी प्रकार "कैंडिडा" में विवाह-बन्धन और धार्मिक व्याख्यानों से व्यंग्य पुष्टि की गयी है। मार्चबैंक्स, मारेल से कहता है कि क्या तुम्हारा वैवाहिक जीवन आनन्दमय है।[2] आगे तो वह स्पष्टतर कहता है मैं तुम्हारी पत्नी से प्रेम करता हूँ।[3] वह बुद्धि का सच्चाई का पापक है। शरीर से तो वह दुर्बल ही है। कैंडिडा भी पवित्रता और सद्गुणों को निरर्थक ही मानती है। वह अपने सतीत्व को मार्चबैंक्स के हित में न्योछावर करने को अपने पति से कह देती है।[4] वह यह भी कह देती है गिरजाघरों में लोग इसीलिए जाते हैं कि वे सप्ताह भर अधिक उत्साह से पाप करते रहें। वह मानती है कि स्त्रियाँ धर्मगुरु [उसके पति] के आकर्षण और प्रणय के कारण चर्च में जाती हैं।[5] अन्त में उसे पति और प्रेमी के बीच किसी को भी चुन लेने की स्वतन्त्रता दे दी जाती है, वह सौभाग्य से पति को ही चुनती है।[6,7] पति उसे माँ, भगिनि और पत्नी—सबका योग मान लेता है।[8,9] इस प्रकार इसमें स्त्री के चातुर्य पति की हीनता और धर्म गुरुओं की निम्न अवस्था आदि को चित्रित करते हुए कथनीय कर्मों की निस्सारता प्रदर्शित की गयी है।[10] इस नाटक के बर्जेस नामक पात्र की भाषा उसकी अवस्था निवास स्थान और व्यवसाय के अनुकूल है।[11]

---

1. I For Evans A short history of English Literature P 125
2. Is your marriage happy ?—The complete work of Shaw P 132
3. I love your wife —Ibid P 133
4. I would give them both (goodness and purity) to poor Eugen as willingly as I would give my shawl to a beggar dying of cold if there were nothing else to restrain me Ibid P 141
5. Ibid P 140
6. Candida-Complete works of Bernard Shaw P 147
7. Ibsen Lady from the Sea
8. Morell You are my wife my mother my sister You are the sum total of all loving care to me --Complete works of Bernard Shaw P 151
9. Ibid P 153
10. Nothing that s worth saying is proper ,—Complete works of Bernard Shaw P 136
11. Ibid P 137

सीजर और क्लियोपेट्रा मे अनिवार्य शिक्षा पर व्यग्य करते हुए कहा गया है कि पुरातन और आधुनिक का सघर्ष प्राचीन समय से चला आ रहा है। यह भी बताया गया है कि मिश्र के राजा बहिन से ही विवाह करते थे।[1 2] हाउ ही लाइड अगस्ट हर हस्बेड म अरोरा का पति जब यह सुनता है कि हनरी ने अरोरा के प्रणय के कारण कविताएँ लिखी तो वह उह पढकर बहुत प्रसन्न होता है।[3] यह है अग्रेजी नाटको म युग का प्रतिबिम्ब।। इस नाटक मे अक विभाजन नही किया गया है।[4]

डाक्टस डिलेमा' म बताया गया है कि डाक्टर के अन्वेषण का कुप्रभाव रोगियो को सहना ही पडता है। विशेष योग्यता वाला डाक्टर समझता है कि सभी रोगी उसी बीमारी से पीडित हैं जिसमे उसने विशेषता प्राप्त की है[5]। दुख की बात यह है कि डाक्टर युवती से प्रेम करने के लिये उसके पति की हत्या कर देता है। हास्यास्पद तो उसकी वह विशेष अवस्था है जबकि वह स्वय मनोवैज्ञानिक बीमारी से रुग्ण दिखायी देता है। 'गैटिंग मैरिट" म इडिथ कहती है कि पत्नी भी तो नौकर ही है। वह घरलू काम करती है जिसके बदले म उसे भोजन वस्त्र आदि मिल जाते हैं। होचकिस विवाह को जाल मानती है यह कहना भी इसके टक्कर का ही है।

इनके बैक टू मैथ्युजुला म पाच भाग हैं। नाटक आदम और ईव के चित्रण स प्रारम्भ होता है और सन् ३१६२० म समाप्त होता है। प्रथम भाग म आदम और ईव शब्द सीखत प्रतीत होते हैं —[6] [7]

---

1 Complete works of Bernard shaw P 265

2 It is a fling upon the modern marriage

3 He —I wrote them (those poems) because I loved her (Your wife) I adored her Do you hear ? (Husband becomes gl d and says) shake hands —Complete works of Shaw end of the play How he lied against her husbad

4 Also see Getting Married The Shewing up the dark lady of the Sonnets

5 Dr Redgeon—' well its always the patient who has to take the chance when an experim-nt is n-cessary

Sir Patrick says I have killed people with them (by inocu lations) but I gave them up -- Complete works of Shaw P 507 508

6 Adam— Dead ? what is that ?

Eve— what is the life Ibid P 856, 857

7 The work inventing scene in the garden of Eden becomes unexpectedly done —The Theatre by Harold Hobson P 53

आदम 'मरा हुआ क्या मरता है ?'
ईव 'जीता मरता है ?' आदि ।

इसमें मनोवैज्ञानिक विकास पर प्रकाश डाला गया है । सर्प (Serpent) कहता है कि जब भी तुम चाहोगे तो आकांक्षा करोगे तब ही बन जाओगे । आदम कहता है कि वह हजार वर्ष का भार नहीं सह सकता वह अमरत्व नहीं चाहता[1] । सर्प कहता है कि जन्म का उद्भव भी आवश्यकता से ही हुआ । लिलिथ का निर्माण हर समय प्रति प्रश्नचिह्न रखा । उसे निष्फल किया गया । द्वितीय भाग में मानव आयु को बढ़ाने की आकांक्षा प्रकट की गई ।[2] यह भी बताया गया कि शारीरिक आवश्यकताएँ पूर्णीय होनी चाहिए[3] । तृतीय भाग में इसकी सम्भावना प्रकट की गई । चतुर्थ भाग में इसकी उस पार के व्यक्ति का बनी उस पार के व्यक्तियों में भी परा-जित होता गया । यहाँ लोगों की जीवन अवधि बढ़ गई वहाँ वापस शीघ्र मरने वाले के आया का नहीं समझ पाए । वे अमीरगर का जानवर समझते हैं । वे विवाह को हेय मानते हैं । यहाँ तो बच्चा उत्पन्न करने वाली विलक्षण युवतियाँ हैं वे अपने बच्चों को पहिचानती भी नहीं हैं । जू एक ऐसी ही युवती है[4] । यहाँ युद्ध की कोई महत्ता नहीं है हाँ बच्चे का जो आठ वर्ष तक के होते हैं उन्हें युद्ध की कहानियाँ कही जाती[5] । [यह सब होते हुए भी यह तो मानना ही होगा कि अंग्रेजी नाटककारों ने बड़ी सफाई से अनैतिकता को बचाया है यथा बेनजानसन का वोलपोन, कांग्रीव का वे ऑव दी वर्ल्ड इब्सन के (अंग्रेजी में अनूदित) घोस्टस और शॉ के मिसेज वारेंस प्रोफेशन व कैंडिडा आदि इसके उदाहरण हैं ।] फिर भी उस युग के लोग नेपोलियन को भी क्षमा देने वाले हैं । वे लोग जब तक किसी वस्तु का अनुभव नहीं करते, उसके संग्रह का ज्ञान नहीं रखते[5] । साथ ही आज की खोज प्रणाली पर भी व्यंग्य प्रहार किया गया है । जू कहती है कि एक पुराना लेखक शेक्सपीयर शैले, शरिडिन और शूडी आदि कई नामों से हमें प्राप्त होता है[6] । इसमें आज के उन विद्वानों की

---

1 Complete works of Shaw P 862

2 Ibid P 869

3 Conard— Biological necessities must be made respectable Comp ete works of Shaw P 872

4 Ibid P 910 918

5 Zoo— Consciousness of the fact is the knowledge Collection is not knowleege Ibid P 919

6 Zoo— An ancient writer whose name has come down in several forms as Shakespeare, Shelley Sheredian and Shoody Ibid P 920

खिल्ली उडायी गई है जो भिन्न भिन्न काल के व्यक्तियो को शब्द या स्वर ध्वनि साम्य के आधार पर एक मान बैठे हैं।

अन्तिम भाग मे तो बच्चे ही दाढी मूछो सहित उत्पन्न होने लगते हैं। नाटक में तारतम्य को बनाये रखने का प्रयास किया गया है। उनके भाषण बहुत लम्बे हैं।

इन नाटका के अतिरिक्त शॉ ने दी "एपल काट' "सेंटजान", "दी डाक लेडी आव दी सौनेटस", "दी बुल्स अदर आइलेण्ड", "सिम्बोलिन", व "विलेजवूइग" आदि नाटक लिखे हैं। विलेज वूइ ग एक ध्वनि नाट्य है। इसमे जैड और ए के वात्तालाप भिन्न-भिन्न स्थानो से सुनाई देते हैं यथा प्रथम वार्तालाप नाव मे होता है तो दूसरा एक दुकान पर। इन्होंने 'शेक्स वर्सेज शा' नामक कठपुतली नाट्य का भी प्रणयन किया इसमें शा, शेक्सपीयर और उनके साथ दोना के प्रसिद्ध नाटका के प्रमुख पात्र भी आते हैं। नाटक के अन्त म कहा जाता है —

"हम दोनों ही मरणशील हैं जो क्षणभर मेरे चमकीले प्रकाश से चमकने के लिये कष्ट उठाते हैं[1]।' वे महत् कला को प्रचार काय मानते हैं[2]। उनका मत है कि हमारी 'लिबर्टीज' हमारी स्वतन्त्रता को समाप्त करती है। हमारी सम्पति एक सामूहिक डाका है और सामाजिक नैतिकता मूखतापूर्ण दिखावा मात्र है। हमारा ज्ञान अनुभवहीन अथवा बुरे अनुभवा वाले व्यक्तियों द्वारा प्रसारित किया जाता है। हमारी वीरता की नींव मे कायरता है और हमारी आदर की भावना पूर्णरूपेण त्रुटिपूर्ण है। इनके नाटकों में निम्नांकित दोष भी पाये जाते हैं।

शॉ के नाटको के दोष

उनके पात्रो की समस्या और उनके विचार तो विवाद की सामग्री बन जाते हैं किन्तु पात्रों का व्यक्तित्व हृदय को नहीं छूता है[3]। पात्र अन्त प्रेरणा प्रणीत नहीं दिखायी देते, वे तो ध्यान पूवक विचार कर अंकित किये हुए जान पडते हैं। वे भाव जगत से दूर दिखायी देते हैं। 'सेंट जान' व मेन एण्ड सुपरमैन' आदि नाटकों के पात्र इसके उदाहरण हैं।

(२) पात्र नाटककार की विचारधारा के प्रचारक दिखायी देते हैं।

---

1 We both are mortal for a moment suffer my glimmering light to Shine —The Complete works of Shaw P 1404

2 All great Art is propaganda In preface to on the Rock

3 ' Characters do not live from within, One may discuss the views they stand for but not the characters

A R Read Main Currents in Modern Literature P 71

मान्य 'मरा हुआ पर क्या है ?
ईव जीवन क्या है ? मानि ।

इसम मनोवैज्ञानिक विचार पर प्रकाश डाला गया। कहता है कि अब भी कुम कारा की आकांक्षा बनी हुई है। कहता है कि यह प्रकार की मृत्यु नहीं कर सकता वह अमरत्व बताता है कि मन का उद्भव भी आवश्यकता से ही हुआ। अनि समय प्रति प्रज्ज्वलित करना के लिए किया गया। द्वितीय भाग म बढ़ाने की आकांक्षा प्रकट की गई।[2] यह भी बताया गया कि शारी पूर्णीय होनी चाहिए[3]। तृतीय भाग म इसकी सम्भावना प्रकट भाग म इसकी उस काल के व्यक्ति का बनी उस काल इसके व्यक्ति जित होता गया। यहाँ लोगो की जीवन अवधि बढ़ गई यहाँ बाने के भाषा को नहीं समझ पाते। व अधीनस्थ को जानवर समझते हैं व्य मानते हैं। यहाँ न वन्य उत्पन्न करने वाली विलक्षण युवतियाँ है का पहिचानती भी नहीं है। जू एक ऐसी ही युवती है[4]। यहाँ युद्ध नहीं है हाँ बच्चा का जो साठ वर्ष तक के होते हैं उन्हें युद्ध की जाती है। [यह सब होते हुए भी यह तो मानना ही होगा कि अपने बड़ी सफाई से मनतिरना को बचाया है यथा बनजोनसन का वो का व मार्क दीथन्न इंग्लैंड (अंग्रेजी म मनुष्य) घोस्टस और वारेस प्रोफसन व पंडिडा आदि इसके उदाहरण हैं।]फिर भी उस युग के लियन को भी कपा देने वाले हैं। वे लोग जब तक किसी वस्तु का अनुभव उसका संग्रह का ज्ञान नहीं कहते[5]। साथ ही आज की खोज प्रणाली प प्रहार किया गया है। जू कहती है कि एक पुराना लेखक शेक्सपीयर शा और शूडी आदि कई नामो से हमे प्राप्त होता है[6]। इसम आज के उन

1 Complete works of Shaw P 862
2 Ibid P 869
3 Conard— Biological necessities must be made resp Comp ete works of Shaw P 872
4 Ibid P 910 918
5 Zoo— Consciousness of the fact is the knowledge Collection is not knowleege Ibid P, 919
6 Zoo— An ancient writer whose name has come dow several forms as Shakespeare Shelley Sheredian Shoody Ibid P 920

(३) वे भावो का बहिष्कार करने म स्वय भावात्मक बन जाते हैं "एज फार एज थोट केन रीच' इसका प्रमाण हैं[1]।

(४) इनके नाटको म भाषा को अतीव महत्व दिया गया है। पात्र बोलता ही रहता है और अन्य पात्रो को उसे सुनना पडता है[2] [3], जो मच पर खटकने वाली वस्तु बन जाता है।

(५) शा के नाटको की एक विशेषता उनका विस्तृत मच सकेत भी है (जिसका उल्लेख यथास्थान किया जा चुका है) इसी विशेषता को आलोचको ने दोष माना है। उनका कथन है कि मच निर्देशो का विस्तार अनाटकीय पद्धति है। नाटककार को अपने शब्दो द्वारा नही अपितु पात्रो के कार्यों से अपने उद्देश्य की पूर्ति का प्रयास करना चाहिये[4]।

निष्कर्ष

अतएव यह कहा जा सकता है कि शा के नाटको म वे ही विचार प्रतिपादित किये गये हैं जो निटशे, शोपेनहर, टालसटाय, इब्सन बेक्स, बटलर और अन्य विद्वानो ने प्रकट किये, कितु अग्रेजी नाटको म इन विचारो को जागरूकतापूर्वक मुखरित करने वाले प्रथम शा ही थे। अतएव वे अपने युग के मौलिक नाटककार हैं[5]। कई विचार तो केवल आकस्मिक रूप से ही मिल जाते हैं क्योकि सभी महापुरुष एक ही प्रकार से सोचते हैं[6] [7]। शा कहते है कि मैं कभी भी किसी निश्चित और नियत प्रणाली का अनुसरण नही करता हू[8]। उन्होंने पाच भागो के, चार अको से लेकर एक अक तक के व बिना अको वाले सभी प्रकार के नाटको की रचना की है। विस्तृत रगसकेत भूमिकाएँ नाटको मे विवाद की महत्ता, पात्रो का मनोवैज्ञानिक चित्रण

---

1 Hobson Theatre' P 65
2 History of English Literature by I For Evans P 76
3 (a) Ibid P 124 (b) A Nicoll The British Drama P 444
4 Clearly a technical device of this (Shavian Stage directions) is apt to make the untheatrical in that the author failing to express his weaning through the works of his characters is inclined to fall back up on the earlier because more direct method of explaining his purpose Ibid
5 A R Reade Main Currents in Modern Literature P 62
6 All great persons think alike
7 Quientessence of Ibsenism
8 But when Critics and biographers try to classify me as an author I smile I fit none of their pigeon holes Quientenssence of G B S P 19

जावन शक्ति का प्रस्तुतीकरण, बौद्धिक तत्त्वों की प्रधानता एव नाटक के अन्त मे विचारसरणि प्रस्तुत कर देना, जिनम कही कही बौद्धिक दुराग्रह प्रभृति है उनकी विशेषताएँ हैं। कहीं कहीं बौद्धिक दुराग्रह अवश्य ही खटकने लग जाता है। आज इब्सन और शा ससार के प्रथम श्रेणी के नाटककार गिन जाते हैं उनके नाटको की ओर हिन्दी के लेखको का आकर्षण स्वाभाविक ही है।

इसी युग के अन्य सामाजिक आलोचक एव प्रखर प्रतिभावान नाटककार हैं जान गाल्जवर्दी। गाल्जवर्दी नाटक क्षेत्र म सन् १९०९ म सिल्वर वाक्स' लेकर आय। उनकी कला की परिपक्वता "स्ट्राइफ' 'जस्टिस और लायल्टीज" म दिखायी दती है।

गाल्सवर्दी के नाटको की विशेषताएँ

ये अपनी कल्पनामय सहानुभूति से पात्रो का चित्रण करते हैं अपनी कल्पना से विपक्षी के पक्ष को भी समझने का प्रयास करते हैं। इनके नाटक आधुनिक वर्ग सघर्ष का चित्रण प्रस्तुत करते हैं। समाज क आदर्शों, विश्वासो और सामाजिक अदृश्य शक्तियो को इन्होंने नाटक के नायक के रूप म चुना है। स्ट्राइफ जस्टिस एव लायल्टीज प्रभृति नाटक इस कथन की पुष्टि करते हैं।

(२) इनके नाटक समस्या नाटक कहलाते हैं। जिसके मूल मे नैतिक सामाजिक रजकीय नियमो से उत्पन्न कमेलो का उद्घाटन किया जाता है। ये सामाजिको क सम्मुख समस्या को प्रकट तो करते हैं किन्तु उसका हल प्रस्तुत नहीं करते[1]। ये सामाजिको को अपना निष्कर्ष निकालन की स्वतन्त्रता द देने हैं[2]। ये अपनी ओर से कोई हल प्रस्तुत नही करत। इन समस्या नाटको के पक्ष म यह कहा जा सकता है कि सामाजिको के सामन जब बार बार समस्याएँ प्रस्तुत की जाती हैं और समाज की कुरीतियो का वर्णन किया जाता है तो सामाजिक उन बुराइयो से अवगत हो जाते हैं एव अपने अनुभव द्वारा वास्तविक जीवन म उनका बहिष्कार करते हैं। इन नाटको का उद्देश्य अनुभव द्वारा त्रुटि निराकरण माना जा सकता है।

(३) व अत्यन्त गम्भीर बने रहते हैं जिससे उनक नाटक बोझिल बन जात हैं। इससे मनोरजन का ह्रास होता है। फिर भी इन्होंने शॉ के लम्बे कथोपकथन और विरोधी विचारो का परित्याग कर नाटको को बौद्धिक भार स नही दबाया है।

(४) ये यथार्थवादी नाटककार हैं फिर भी यदि कभी समस्या का हल

---

1 A Nicoll The British Drama P 360 to 370

2 (a) Ibid (b) The 20th Century Theatre by F Vernon, P 40

निकालते हैं तो यह रूढिगत ही होता है—वे उसम सत्य की जय और असत्य की पराजय प्रदर्शित करते हैं।

(५) उनका प्रमुख पात्र स्वय ही अपने पतन का कारण बनता है किन्तु साथ ही उनका चित्रण बतलाता है कि आज के सामाजिक व धन जीवन म सुख को दुलभ बना देते हैं। इनके नाटक समाज म व्यक्ति के दुखा का चित्रण करते हैं। पात्र सामाजिक दुखा का चित्रण करते हैं। पात्र सामाजिक दुखा म परवशता पूवक जकड़ा हुआ दिखाई देता है जहाँ वह केवल चिल्ला सकता है।

(६) इनके पात्र किसी वाद का प्रचार तो नही करते हैं किन्तु व यथाथ वातावरण की सृष्टि अवश्य ही करते हैं। वे किसी उच्च वग का प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं। एतदथ आलोचको का मत है कि इनके नाटक शेक्सपीयर आदि के नाटको के समान उच्च दुखान्त नाटक नही कहला सकते। इस पर ए० निकल ने सत्य ही कहा है कि इनके नाटकों का बीते युग के मानदण्ड से परखना अनुचित है[1]।

(७) गाल्सवर्दी के नाटकों में भावशून्यता पायी जाती है। कभी कभी तो ये साधारण बौद्धिक स्तर से नीचे के दिखायी देते हैं। "लायल्टीज" के पात्र इसके उदाहरण हैं—दोनों ही वग के प्रतिनिधियो को कड़ाई से चित्रित करना इसका प्रमाण है।

(८) इनके नाटको मे बौद्धिक आग्रह पाया जाता है। वे ऐद्रिय नही बनते हैं। "स्ट्राइफ", "सिल्वरबॉक्स" और 'लायल्टीज' आदि इसके प्रमाण हैं। वे प्रकृति वादी कलाकार हैं। मनोवैज्ञानिक चितेरे भी हैं ये यथातथ्य चित्रण मे विश्वास करते हैं। इनके नाटको मे यह ध्वनित होता है कि प्रकृति एक प्रचड और प्रबल शक्ति है जो मानव सुख दुख के प्रति उदासीन है। मानव जब दुखी होता है एव प्रकृति म सहानुभूति की आकाक्षा रखता है तब प्रकृति की उदासीनता दुष्टता म परिवर्तित हो जाती है। अतएव प्रकृति दुष्ट भी बन जाती है। इस दुष्टता की पराकाष्ठा के दशन तो तब होते हैं जब चन्द सत्तारूढ व्यक्ति सामाजिक धार्मिक, राजनतिक और नतिक नियमो की सष्टि कर अन्य मनुष्यो की सहज स्वतन्त्रता छीन लेते हैं। जब मनुष्य की प्राकृतिक या स्वाभाविक इच्छाओ का दमन किया जाता है और कृत्रिमता की महत्ता बढ जाती है तब जीवन और भी असह्य हो उठता है। इनके अनुसार मनुष्य की मूल प्रवत्तियो को महत्व दिया जाना चाहिये न कि न्यायालया, मन्दिरों और सामाजिक रूढियो को।

(९) गाल्सवर्दी के नाटको म भाग्य का स्थान सामाजिक शक्तियो व नतिक और राजनीतिक बन्धनों ने ले लिया है। स्ट्राइक के मजदूर नेता 'राबट' और धनी

---

1 A Nicoll The British Drama P 360 to 370

वग के प्रतिनिधि 'एनग्नी' दोना ही दुख उठाते हैं। परिस्थितियो के कारण इनके नाटक त्रासमय होने हैं इसी हेतु इन्हे परिस्थितिवश दुखान्त (ट्रैजेडी ऑव् सिचुएशन) कहा जाता है।

(१०) ये न तो यौन समस्या को स्थान देते हैं और न सामाजिक समस्या मे भयावह (मेलोड्रामेटिक) घटनाओं का समावेश करते हैं[1]। इन्होने तो यथातथ्य चित्रण को महत्ता प्रदान की है। इनका वर्णन गाम्भीय सामाजिकों को आतंकित किये बिना नहीं रहता है। इस विवेचन से यह कहा जा सकता है कि गाल्सवर्दी ने सामाजिक बन्धनो को हेय माना और उनकी निस्सारता का यथातथ्य चित्रण प्रस्तुत किया। इन्होने सामाजिक शक्तियो को नायक का रूप दिया एव खलनायक का बहिष्कार करते हुए सामाजिको को अपना हल निकालने की स्वतन्त्रता दे दी। पात्रों का चरित्र चित्रण सागोपाग न किया जाकर रेखा चित्रण सा ही बन पडा है। गाम्भीय की अति, समस्याओं की विकरालता एव रूढियो के बन्धनो के सामने पात्र बौने से दिखायी देते हैं जो मानसिक सघर्ष से तो परिपूर्ण हैं किन्तु वस्तु मे गतिहीनता या क्रियात्मकता के अभाव का कारण बनते हैं। ये नाटक यौन आकर्षण से परे दिखायी देते हैं और अतिप्राकृतिक दृश्यो को भी कम ही स्थान देते हैं। एक शब्द मे हम कह सकते हैं कि इनके नाटक बौद्धिक दृष्टि से सामाजिक द्वद्व का दृश्य प्रस्तुत करते हैं। इनके नाटकों मे उपयुक्त विशेषताएँ तथा निम्नाकित दोष भी पाये जाते हैं।

दोष

इनके पात्रो का चरित्र चित्रण पूर्णता प्राप्त नही करता है—पात्र रेखा चित्र मात्र दिखायी देते हैं। नाटको मे क्रियात्मकता का भी ह्रास पाया जाता है[2]।

निष्कर्ष

अतएव निष्कर्षत कहा जा सकता है कि गाल्जवर्दी ने सामाजिक बन्धनो को हेय माना और उनकी निस्सारता का यथा तथ्य चित्रण प्रस्तुत किया। उन्होने सामाजिक शक्तियो को नायक का स्थान दिया एव खलनायक का बहिष्कार किया। उन्होने सामाजिको को अपना हल निकालने की स्वतन्त्रता दी। पात्रो का चरित्र-चित्रण सागोपाग न होकर रेखा-चित्रण सा ही किया गया। गाम्भीय की अति समस्याओ की विकरालता एव रूढियो के बन्धन के सामने पात्र बौने से दिखायी देते हैं जो मानसिक सघर्ष से पूर्ण हैं। इनके नाटक बौद्धिक दृष्टिकोण से सामाजिक द्वद्व प्रस्तुत करते हैं।

1 A police court ca e and a strike not as details of melodrama but as the material of serious drama unmingled with the sex interest —The 20th Century Theatre by F vernon, P 40

2 A Short History of Englisl

बर्नार्ड शा और गाल्सवर्दी ने अंग्रेजी नाटक साहित्य में जिस यथार्थवादी परम्परा को प्रोत्साहन दिया था उसका तीव्रतमरूप हम 'दी प्ले बाय दी वेस्टनवल्ड' में दिखाई देता है। इसमें पुत्र पिता को मरा हुआ मान कर उस पर प्रहार कर देता है। ऐसे नाटक सामाजिकों के विषाद का कारण बनते हैं। इनमें विचारप्राधान्य रोटी की समस्या, क्रांति, वर्ग-संघर्ष अथवा अन्य कोई दैनिक उलझन या फिर प्रणय व्यापार को प्रमुखता दी जाती है। इस प्रकार के यथार्थवादी नाटकों की प्रतिक्रिया भी हुई—अभिव्यंजनावादी कलाकारों ने उक्त यथार्थवाद को हेय जाना है।

अभिव्यंजनावाद

वैसे तो अभिव्यंजनावाद का जनक इटली का प्रसिद्ध विचारक क्रोचे माना जाता है[1] किन्तु अंग्रेजी-नाटकों में इसकी जागरूक अवतारणा आधुनिक युग में हुई जिसमें आत्मविषयक वर्णन का आधिक्य पाया जाता है। इन कलाकारों ने यथार्थवाद की आलोचना करते हुए मानव की यन्त्रों पर विजय घोषित करने का प्रयास किया है। वे पात्रों को सामाजिक शक्तियों का प्रतिनिधि बना देना चाहते हैं एवं भावप्रकटीकरण के नूतन माध्यम की आकांक्षा रखते हैं। इस अभिव्यंजनावादी शैली की पराकाष्ठा का रूप रूस में दिखाई देता है जहां न्यू साहिचकित् (New Sahikl-chkit) द्वारा यन्त्रों की प्रशंसा की जाती है। नार्वेजियन कलाकार स्ट्रिंडबर्ग ने इस धारा को प्राणान्वित किया है। वे मनोविश्लेषण करते हैं और पात्रों के अन्तःकरण को सामाजिकों के सम्मुख रख देते हैं। उनके पात्र वर्ग प्रतिनिधि के रूप में सामने आते हैं जैसे पिता, पुत्र सफेद कपड़ों में एक पुरुष काले कपड़ों में एक युवती क्लर्क और मास्टर आदि। ऐसे नाटकों में अद्भुत गानों एवं पद्यमय भाषा के प्रयोग को प्रोत्साहन दिया जाता है। सामूहिक भाषा और ध्वनि समूह भी इनकी विशेषता है। ये स्त्री स्वातन्त्र्य में विश्वास नहीं रखते हैं। अभिव्यंजनावादी नाटककारों में जेम्स-जायसी का प्रमुख स्थान है।

जेम्स जोयसी ने समयएक्य का निर्वाह किया है। वे देशकाल और व्याकरण सम्बन्धी नियमों को अनुपयुक्त मानते हैं। उनका मत है कि मानव ही सब कार्यों की अन्तिम और निर्णायक कसौटी है। इन्होंने गीति नाट्यों का प्रबल समर्थन किया है और यह प्रतिपादित करने का सबल प्रयास किया है कि कविता ही नाटकों का

1, (क) क्रोचे एस्थेटिक्स पृ० ४१ से ४६, एवं उसकी भूमिका ले डा० बी सी एसेमेसस

(ख) इस सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद हैं—दे लेखककृत "पाश्चात्य समीक्षा शास्त्र' क्रोचे का विवेचन।

स्वाभाविक माध्यम है[1]। जिस प्रकार से अभिव्यंजनावादी नाटककार आत्मविषयक चित्रण पर बल देते हैं उसी प्रकार से अस्तित्ववादी लेखक यह कहते हैं कि सत्य आत्मविषयक ही है।

अस्तित्ववाद

अस्तित्ववादी के अस्तित्व का कारण डेनिश लेखक कैरके गाड हैं।

वे मानते हैं कि विश्व मे अपने से अधिक विश्वासपूर्ण रूप से अन्य किसी भी व्यक्ति वस्तु या स्थान के बारे म नही कहा जा सकता है। इस श्रेणी के कलाकार सभी वस्तुओं का आत्मविषयक मूल्याकन करते है। अपने भावो का प्रकट करने के लिए उन्हे प्रतीको का सहारा भी लेना पडता है। आधुनिक युग के प्रतीको द्वारा आंतरिक भावो को प्रदर्शित करने वाले नाटककारो म डब्ल्यू बी येटस का प्रमुख स्थान है। आज के अंग्रेजी नाटको मे विभिन्न सम व विषम प्रवृत्तियाँ प्राप्त होती हैं।

आधुनिक अंग्रेजी नाटक विभिन्न प्रवृत्तियाँ

आलोच्यकाल म आचरण सम्बन्धी सुखान्त नाटको की पुनरावृत्ति हुई—सोमरसेट मोम के नाटक इसके उदाहरण हैं। उनम व्यग्य, गहराई और गाभीर्य पाया जाता है जिनका आचरण सम्बन्धी सुखान्त नाटको म अभाव पाया जाता है। आज भी नाटक का उद्देश्य मनोरजन और उपदेश ही दिखाई देता है—आज उपदेश देने को बौद्धिक विचार धारा प्रतिपादन करना कह सकते है। आज भी हम नाटक से मानसिक तुष्टि की आकाक्षा रखते है किन्तु समय की माग और परिस्थितियो के भेद से विचार प्रकट करने से माध्यम म—नाटकीय पद्धतियों म अन्तर आ गया है।[2] आधुनिक नाटक यथार्थवाद के निकट चला गया है, वहा भावो का बहिष्कार किया गया है, किन्तु इतना बहिष्कार किया गया है कि नाटककार उक्त काय की ही भावना म बह गये है—भावना प्रधान नाटक लिख बठे हैं। (शा का मन एण्ड सुपर मैन इसका ज्वलन्त उदाहरण है। इसी हेतु उनके नाटको को सोद्देश्य और कल्पना मय नाटक कहते हैं।[3] जिनका उल्लेख यथास्थान किया जा चुका है।)

इस युग मे काम प्रधान नाटक लेखको मे एच० जी० वाकर का प्रमुख स्थान है। इनका 'एननेट' एक काम प्रधान नाटक है जो विवाह समस्या पर प्रकाश डालते

1 Poetic Drama—by James Joycee

2 'The demands are the same but the circumstances have altered the media the ideals and the means of expression A Nicoll—the British Drama P 372

3 Ibid P 330

हुए विवाह स्वातन्त्र्य की अनुमति देता है। 'मिसेज वारेन्स प्रोफेशन', 'कैंडिडा' और "दीवेस्ट' आदि ऐसे ही नाटक हैं।

आज एक ओर जहाँ दृश्य और अंकों का शीघ्र परिवर्तन होता है वहाँ कतिपय नाटक अतीव लम्बे समय को चित्रित करते हैं बकट् मैथ्यूजुला इसका उदाहरण है। कुछ नाटक, नायक अथवा नायिका के पूरे जीवन को जन्म से अन्त तक, चित्रित करते हैं। सेंट जोन इसका सुन्दर उदाहरण है। ओ सीजे मुसदुखात्मक नाटक (ट्रेजी-कॉमेडी) प्रदान करते हैं जिनमें यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया जाता है। स्विनबर्न ने भिन्न भिन्न सुन्दर सवादों को शिथिलतापूर्वक जोड़ कर नाटक रचने का प्रयास किया है जिसे आलोचकों ने अगम्य माना है।[1]

कभी कभी तो आधुनिक नाटक प्रारम्भ होने से पूर्व ही समाप्त हो जाते हैं। इन्हें स्थाई नाटक (स्टेटिक ड्रामा) कहते हैं। उदाहरणार्थ, किसी की मृत्यु हो जाने के पश्चात् उसके परिवार का चित्रण किया जाता है। उदाहरण के लिये मैटरलिंक का दी इंटीरियर द्रष्टव्य है। इसमें दुर्घटना से डूब कर मर जाने के कारण एक लड़की की मृत्यु हो जाती है और तब नाटक का प्रारम्भ होता है। यही क्यों "इण्ट्रूडर" का तो नायक ही काल" है। इसमें एक प्रसूता और नवजात शिशु रुग्णावस्था में दिखाये जाते हैं। *मृत्यु का आभास ध्वनिरोध के द्वारा दिया जाता है।* कुटुम्ब में लोग वार्तालापमग्न दिखाई देते हैं किन्तु वे कठपुतलियों के से निर्जीव प्रतीत होते है—मृत्यु का आतंक सब पर छाया हुआ रहता है। एम बटलिखित "दी ईगल हैज टू हैडस" भी ऐसा ही नाटक है। आज के नाटककार परम्परागत प्रवृत्तियों का निर्वाह करते हुए भी दिखाई देते हैं।

आधुनिक नाटक परम्परा निर्वाह

जोहन इरविन ने गालसवर्दी की यथार्थ चित्रण वाली प्रवृत्ति का निर्वाह किया है। जनवलग और जोहन फर्गुसन इसके उदाहरण हैं। जेम्सबरी के नाटकों में राष्ट्रीय स्वभाव के अनुकूल हास्य और कल्पना का मिश्रण किया गया है। इनके नाटकों में शॉ के विस्तृत रंग संकेतों की बाढ़ सी आ गई है। आज के नाटककार के सामने पुरातन नाट्य भण्डार और विभिन्न देशों के नाटक विद्यमान हैं। अतएव वह इधर उधर से उपयुक्त तत्त्व लेकर अपना नया नाटक लिख डालता है। उदाहरणार्थ *जोहन मैसफिल्ड के नाटकों में उच्च कल्पना और शास्त्रीय पद्धतियों* भावावेश और तर्क, रहस्य और यथार्थ आदि का सम्मिश्रण पाया जाता है। आज पुरानी पद्धति को अपना कर भी नाटककार बहुधा उसे नवीन बताने का प्रयत्न करते हैं—आधुनिक

---

1 हि० आव इंग्लिश लिटरेचर—आई फोर इवेंस, पृ० ७६

युग म नवीनता का आग्रह इतना बढ गया है कि पुरातन पद्धतियां विशेष रूप से पिछले युग की पद्धतियों को हेय और निम्न माना जाता है[1]।

जे बी प्रीस्टले आधुनिक युग के यथार्थवादी और सुन्दर कलाकार हैं[2]। उनका 'एन इन्सपेक्टर काल्स' इसका साक्षी है। इसमे एक युवती हर स्थान पर ठुकराए जाने के कारण आत्म हत्या कर लेती है। आज का नाटककार तो अन्तिम युद्ध क पश्चात् का चित्रण प्रस्तुत कर देता है[3]। यद्यपि आधुनिक अधिकांश अंग्रेजी नाटको म सगीत का बहिष्कार किया जाता है, फिर भी यदाकदा सगीत प्रधान सुखान्त नाटक प्राप्त हो ही जाते हैं[4]। अब सामान्यत कलापक्ष को भावपक्ष के आधीन रखने की बात कही जाती है। जे इरविन का 'प्रिवी एण्टर प्राइज' और ई, विलियम्स का 'ट्रेसपास' आदि इनके उदाहरण हैं। फिर भी साधारणतया कलापक्ष को निखारने म बहुत श्रम किया जाता है। चलचित्रो द्वारा नाटकों को क्षति भी पहुँचाई गई है।

चलचित्र और नाटक

चलचित्रो के कारण कई नाट्यगृह सिनमा कक्ष बन गए हैं किन्तु नाटक का महत्त्व फिर भी कम नहीं हुआ है। आज भी अभिनय स बहुत धनोपार्जन किया जा रहा है[5]। नाट्याभिनय का इनसे इतनी हानि अवश्य हुई है कि अच्छे अभिनेता चलचित्रो म चले जाते हैं। जब उनम से कभी कोई कलाकार पुन नाटक क्षेत्र म पदार्पण करता है तो उसका अतीव स्वागत किया जाता है। सर फिलिप रिचर्डसन और सर लारेंस आलिवर के नाट्य क्षेत्र म किए गए स्वागत हमारे कथन की पुष्टि करते हैं। चलचित्रो को पराजित करने के लिए नाटककारो ने उनकी कृत्रिमता और रंग सज्जा का भी अपनाने का प्रयास किया है। ए स्ट्रीट सीन' जैसे नाटकों मे इस आकांक्षा की चरम सीमा दिखाई देती है। यह सब कुछ होते हुए भी आज का आलोचक गम्भीर नाटको के अभाव का अनुभव करता है[6]।

---

1 दी मेकिंग आव लि २८ (१) ले० जे स्कोट।
2 हेरोलड होबसन, दी थिएटर, भूमिका, पृ० ६
3 (क) "कलकत्ता इन दी मोर्निंग" ले० जी टी व्लैक्मूर।
   (ख) 'डाक एण्ड" ले एफ कर्मासिगटन।
   (ग) 'क्लस आव दी एन"—प्रोकोमल
4 हेरोल्ड होब्सन दी थिएटर, भूमिका, पृ० ७ से ६।
5 होब्सन दी थिएटर भूमिका पृ० ७ से ६
6 What we really need my dear is a serious play that has to say The Theatre P 6

द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् समस्यावादी और आचरण सम्बन्धी नाटकों में शिथिलता आ गई है। आज का नाटककार पुनः ऐतिहासिक नाटकों की ओर बढ़ रहा है। मेरी स्टुआर्ट में तो विभिन्न युगों की कथाओं को एक सूत्र में पिरोया गया है। एक युवक अपने पुराने मित्र से कहता है कि उसकी पत्नी अन्य पुरुष से प्रेम करती है। इसी समय यह दृश्य बदल जाता है और दूसरा दृश्य मेरी स्टार्ट को प्रदर्शित करता है जो कई व्यक्तियों को उनके विशिष्ट गुणों के कारण प्रेम करती है। आज ऐसे दृश्य नायक और सामाजिक दोनों ही सहन कर लेते हैं। यदि शेक्सपीयर इसी वस्तु का सम्पादन करते तो नाटक में हत्याओं की बहुलता पाई जाती। अस्तु।

आधुनिक अंग्रेजी नाटकों में प्रकृतिवादी नाटकों के विरुद्ध धार्मिक और ऐतिहासिक नाटक पुनर्जीवित हो उठे हैं एवं गद्य नाटकों का खंडन गीति नाटकों द्वारा किया जा रहा है। जोहन ड्रिंकवाटर और विलफोड़ बेक्स की रचनाएँ इसका प्रमाण हैं। उक्त नाटककारों ने गीतिनाट्यों और ऐतिहासिक नाटकों में निकट सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास किया है। लेसल्सएबरक्रोम्बी ने तो यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि कविता ही नाटकों का प्रमुख व उपयुक्त माध्यम है। वे नाटकों में गद्य को हेय और अवाञ्छनीय मानते हैं। उनका मत है कि चरित्र-चित्रण भी काव्यमय होना चाहिये। यहाँ काव्य से उनका तात्पर्य तुकबन्दी मात्र से न होकर शाश्वत कविता से है। अतएव उन्होंने छन्द को मानसिक व्यापार प्रदर्शन में बाधक माना है[1]। ओदेन स्टेफेनस्पेण्डर एवं क्रिस्टोफर फ्राई भी काव्य नाट्य के समर्थक हैं। यही नहीं आज तो अंग्रेजी नाटकों का भविष्य गीति नाट्य पर ही आधारित माना जाता है[2]।

गीति नाट्य

एलार्डिस निकल के अनुसार सन् १८६० से १९२० तक का काल गीति नाट्यकाल नाम से ही विभूषित किया जाना चाहिए। वसे तो जे एस नोल्स[3] ने बहुत पहले काव्य नाट्य लिखने के प्रयास किए थे किन्तु उनमें कथा सघटन कष्ट साध्य प्रतीत होता था। उनके वर्जिनिस जैसे दुखान्त और दी हच बक जैसे सुखान्त नाटकों में काव्य के नाम पर केवल तुकबन्दी ही प्राप्त होती है। अतएव इनसे गीति नाट्य प्रचलन नहीं माना जाता है। सन् १८६० के पश्चात् गीतिनाट्य, प्रकृतिवादी नाटकों के विरुद्ध स्वाभाविकता पर बल देते हुए उठ खड़े हुए। जहाँ प्रकृतिवादी

1 देखिए निबन्ध दी फक्शन ऑव पोइट्री इन ड्रामा टवटीयथ सेंचुरी एसेज।
2 ए निकल दी ब्रिटिश ड्रामा भूमिका।
3 १७८४ से १८६२

कलाकार जीवन के यथातथ्य चित्रण पर बल देते थे व प्राकृतिक जीवन की महानता अंकित करते हुए सामाजिक बन्धनों को हेय बताते थे, वहाँ मेटरलिंक ने इसके विरुद्ध गीति नाट्य को अपनाया। इंग्लैंड में डब्ल्यू बी येटस ने इस धारा को सबल बनाया। ये जापान के 'नो' नाटकों से भी प्रभावित हुए हैं[1]। इन्होंने प्रगीतात्मक काव्यात्मक एवं प्रतीकात्मक नाटक लिखे हैं जिनमें नाटकीयता से अधिक काव्यात्मकता पाई जाती है। इनके नाटकों में कल्पनामय सौंदर्य और रहस्यात्मकता का आधिक्य रहता है। इनमें यथार्थ और आध्यात्मिक समन्वय पाया जाता है। काव्यात्मकता के आधिक्य के कारण इनका अभिनय दुरूह हो जाता है अतएव आलोचकों का कहना है कि ये नाटक पढ़ने के लिये लिखी हुई कविताओं के से प्रतीत होते हैं[2]। इनके नाटकों में प्राप्य कल्पनातिरेक का कारण इनका कैल्टिक साहित्य के प्रति आकर्षण प्रतीत होता है। इन्होंने अपने नाटकों में स्वप्निल और स्वर्णिम वातावरण प्रस्तुत करने के प्रयास किए हैं।

ऐसा ही कल्पनायुक्त सौन्दर्य सींज के गीति नाटकों में पाया जाता है। इनके 'राइडर्स टू दी सी' में समुद्र भी एक पात्र बन गया है। इनके नाटकों में अन्तर्द्वन्द्व भी पाया जाता है। 'दी वल आव दी सेन्टस' के द्वारा यह प्रतिपादित किया गया है कि आशा और कल्पना युक्त अंधकार मानसिक सन्ताप पूर्ण प्रकाश से श्रेष्ठतर है[3]। यह कल्पना और यथार्थ के संघर्ष को चित्रित करता है। इनके नाटकों में व्यंग्य अट्टहास उपहास और काव्य विद्यमान रहते हैं[4]। जादूमय वातावरण दुखद घटनाओं और निम्न हास्य को इन्होंने अपने नाटकों में स्थान दिया है। आधुनिक युग के प्रमुख आलोचक और कवि टी एस इलियट एवं एबरक्राम्ब भी गीति नाटकों के प्रबल समर्थक हैं। वे अपनी नाट्यकृतियों और आलोचनात्मक उक्तियों द्वारा इसे बल प्रदान करते हैं। गीति नाटकों के समान अंग्रेजी में एकांकी नाटकों का भी आदरणीय स्थान है।

एकांकी नाटक

अंग्रेजी एकांकी नाटकों का विकास बताते हुए उनका सम्बन्ध दशवीं शताब्दी

---

1 एलार्डिस निकल, दी ब्रिटिश ड्रामा, गीतिनाट्य विवेचन, पृ १३०, १३८, २००

2 A R Reade—the Main currents in Mod Litt. P 40 to 50

3 Darkness with visions and hope is better than light with mental bitterness —A Nicall—The British Drama-Discussion of Imaginative Drama

4 Satire sardonic humour and irony poetry is seldom absent –A R Reade-Main currents in P 51

[illegible] ने समसामयिक [illegible] और [illegible] सम्बन्धी नाटकों में लिखता रहा है। आज का [illegible] युग ऐतिहासिक नाटकों की ओर बढ़ रहा है। यही कारण है कि विभिन्न युगों की समस्या का एक युग में [illegible] है। एक युग का दूसरे युग में [illegible] है कि उसकी [illegible] युग में प्रेम करती है। [illegible] और दूसरा [illegible] का प्रदर्शित करता है [illegible] विभिन्न युगों में [illegible] प्रेम करती है। आज ऐसे हास्य नाटक और सामाजिक दोनों ही [illegible] हैं। यदि [illegible] ह ही [illegible] नाटक में [illegible] की न्यूनता पाई जाती। अस्तु।

आधुनिक अंग्रेजी नाटकों में प्रकृतिवादी नाटकों के विरुद्ध धार्मिक और ऐतिहासिक नाटक पुनर्जीवित हो उठे हैं एवं गद्य नाटकों का खंडन गीति नाटकों द्वारा किया जा रहा है। जाह्न ड्रिंकवाटर और विनगोड बाण की रचनाएँ इसका प्रमाण हैं। उक्त नाटककारों ने गीतिनाट्यों और ऐतिहासिक नाटकों में निकट सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास किया है। लेसलसएबरक्राम्बी ने तो यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि कविता ही नाटकों का प्रमुख व उपयुक्त माध्यम है। वे नाटकों में गद्य को हेय और अवांछनीय मानते हैं। उनका मत है कि चरित्र-चित्रण भी काव्यमय होना चाहिए। यहाँ काव्य से उनका तात्पर्य तुकबन्दी मात्र से न होकर वास्तव कविता से है। अतएव उन्होंने छन्द को मानसिक व्यापार प्रदर्शन में बाधक माना है[1]। ओडेन, स्टीफेनस्पेण्डर एवं क्रिस्टोफर फ्राई भी काव्य नाट्य के समर्थक हैं। यही नहीं आज तो अंग्रेजी नाटकों का भविष्य गीति नाट्य पर ही आधारित माना जाता है[2]।

गीति नाट्य

एलाडिस निकल के अनुसार सन् १८६० से १६२० तक का काल गीति नाट्यकाल नाम से ही विभूषित किया जाना चाहिए। वैसे तो जे एस नोल्स[3] ने बहुत पहले काव्य नाट्य लिखने के प्रयास किए थे किन्तु उनमें कथा संघटन कष्ट साध्य प्रतीत होता था। उनके वर्जिनिस जैसे दुखान्त और दी हृच बक जैसे सुखान्त नाटकों में काव्य के नाम पर केवल तुकबन्दी ही प्राप्त होती है। अतएव इनसे गीति नाट्य प्रचलन नहीं माना जाता है। सन् १८६० के पश्चात् गीतिनाट्य प्रकृतिवादी नाटकों के विरुद्ध स्वाभाविकता पर बल देते हुए उठ खड़े हुए। जहां प्रकृतिवादी

1 देखिए निबन्ध दी फक्शन आव पोइट्री इन ड्रामा ट्वटीयथ सेंचुरी एसेज।

2 ए निक्ल दी ब्रिटिश ड्रामा भूमिका।

3 १७८४ से १८६२

कलाकार जीवन के यथातथ्य चित्रण पर बल देते थे व प्राकृतिक जीवन की महानता प्रदर्शित करते हुए सामाजिक रचना को हेय बताते थे, वहाँ मैटरलिंक ने इसके विरुद्ध गीति नाट्य को अपनाया। इंग्लैंड में डब्ल्यू वी येटस ने इस धारा को सबल बनाया। वे जापान के नो नाटकों से भी प्रभावित हुए हैं[1]। इन्होंने प्रगीतात्मक काव्यात्मक एवं प्रतीकात्मक नाटक लिखे हैं जिनमें नाटकीयता से अधिक काव्यात्मकता पाई जाती है। इनके नाटकों में कल्पनामय सौन्दर्य और रहस्यात्मकता का आधिक्य रहता है। इनमें यथार्थ और आध्यात्मिक समन्वय पाया जाता है। काव्यात्मकता के आधिक्य के कारण इनका अभिनय दुरूह हो जाता है अतएव आलोचकों का कहना है कि ये नाटक पठन के लिए लिखी हुई कविताओं के से प्रतीत होते हैं[2]। इनके नाटकों में प्राप्य कल्पनातिरेक का कारण इनका कैल्टिक साहित्य के प्रति आकर्षण प्रतीत होना है। इन्होंने अपने नाटकों में स्वप्निल और स्वर्णिम वातावरण प्रस्तुत करने के प्रयास किए हैं।

ऐसा ही कल्पनायुक्त सौंदर्य सींज के गीति नाटकों में पाया जाता है। इनके 'राइडर्स टू दी सी' में समुद्र भी एक पात्र बन गया है। इनके नाटकों में अन्तर्द्वन्द्व भी पाया जाता है। 'दी वैल आव दी सैंट्स' के द्वारा यह प्रतिपादित किया गया है कि आशा और कल्पना युक्त अन्धकार मानसिक असन्ताप पूर्ण प्रकाश से श्रेष्ठतर है[3]। यह कल्पना और यथार्थ के संघर्ष का चित्रण करता है। इनके नाटकों में व्यंग्य कटुतम उपहास और हास्य विद्यमान रहते हैं[4]। जादूमय वातावरण दुखद घटनाओं और निम्न हास्य को इन्होंने अपने नाटकों में स्थान दिया है। आधुनिक युग के प्रमुख आलोचक और कवि टी एस इलियट एवं एबरक्राम्बी भी गीति नाटकों के प्रबल समर्थक हैं। वे अपनी नाट्यकृतियों और आलोचनात्मक उक्तियों द्वारा इसे बल प्रदान करते हैं। गीति नाटकों के समान अंग्रेजी में एकांकी नाटकों का भी आदरणीय स्थान है।

एकांकी नाटक

अंग्रेजी एकांकी नाटकों का विकास बताते हुए उनका सम्बन्ध दसवीं शताब्दी

---

1 एलार्डिस निकल, दी ब्रिटिश ड्रामा, गीतिनाट्य विवेचन, पृ १३०, १३८, २००

2 A R Reade—the Main currents in Mod Litt. P 40 to 50

3 Darkness with visions and hope is better than light with mental bitterness —A Nicall—The British Drama-Discussion of Imaginative Drama

4 Satire sardonic humour and irony poetry is seldom absent -A R Reade-Main currents in Mod Litt P 41

में प्रचलित रहस्यात्मक धार्मिक नाटकों से स्वीकार किया जाता है।[2]। सोलहवीं शताब्दी की इण्टरल्यूड्स और उस समय के प्रहसन विशेष एवं उन्नीसवीं शताब्दी के कर्टेनरेजर से इसकी उत्पत्ति मानी जाती है। डब्ल्यू डब्ल्यू जेकब्स का 'मंकी का पंजा' इत्यादि एकांकी प्रचार करने में सहायक हुआ। बीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक तक में अंग्रेजी में एकांकी नाटकों की अवस्था शोचनीय ही रही। उस समय तक एकांकीकारों को बहुत निरुत्साहित किया गया था। तब तक एकांकी प्रणयन को पूर्णाकार नाटक और व्यर्थ समय नष्ट करना माना गया था[3]। इस कला को पुष्टता और प्रौढ़ता प्रदान करने का श्रेय इटली और अमरिका के कलाकारों व आलोचकों का ही है। एकांकी के स्वतन्त्र अस्तित्व की घोषणा इटली के 'कामेडिया डेल आर्टी' में की गई थी। अमरिका में पर्सिवल वाइल्ड ने एकांकी आलोचना की प्रथम पुस्तक 'दी क्राफ्ट्समैनशिप आफ वन एक्ट प्लेज' की रचना की[4]। तत्पश्चात् इंग्लैंड में भी जे डब्ल्यू मैरियट आदि ने एकांकी संकलन प्रस्तुत किये हैं। अंग्रेजी एकांकियों की निम्नांकित विशेषताएं उल्लेखनीय हैं।

अंग्रेजी एकांकियों में उपशीर्षक प्राप्त होते हैं[5]। इनमें यथार्थ चित्रण निमित्त

---

1 Mr Hampden says – The short continuous play with an approach to the artistic unity is not a new thing It may be one of the oldest forms of drama for short farcical plays appear to have developed independently in ancient Greece and Italy The earliest English plays mysteries and miracle plays and Interludes of the Middle ages were nearly all plays in one Act As quoted by J N Mundra in A critical Guide to one Act plays P 1

2 The 20th Century Theatre by F Vernon P 90 to 100

3 Ibid, Page 90 to 96

4 Ibid Page 89

5 (a) The Makers of dreams
A fantasy in one Act
by Oliphant Down

(b) The little man
A farcical Morality in three scenes
by John Galsworthy

(c) A Night at an inn
A play in One Act
by Lord Dunsany

(d) Campbell of Kilmhor
A play in One Act
by J A Ferguson

(e) The Grand Cham s Diamond
A play in One Act
by Alan Monkhouse

(f) Some times these headings are quite symbolic e g --
X = O

भाषा भेद भी दिखाया जाता है[1]।

एकांकियों में ऐसे रंग संकेत भी प्राप्त होते हैं जो पठन सामग्री ही होते हैं–जो पाठक की दृष्टिपथ पर रख कर लिखे गए प्रतीत होते हैं[2]। यहां यह उल्लेखनीय है कि सर्वत्र ऐसे रंग संकेत प्राप्त होते हों ऐसी बात नहीं है। कभी कभी रंग संकेतों द्वारा प्रभावोत्पादकता उत्पन्न करने के भी प्रयास किए जाते हैं। दी मेकर्स आव डीम्स का अन्तिम रंग संकेत इसका उदाहरण है[3]।

आज का एकांकीकार नित नवीन प्रयोग करने में मग्न रहता है। हेराल्ड ब्रिग हाउस के एकांकी इसके प्रमाण हैं। वे अपने पात्रों में जीवन भरने का अथक परिश्रम करते हैं[4]। अंग्रेजी एकांकियों में उनकी सभ्यता के अनुकूल प्रणय-चित्र आलिंगन, चुम्बन और अन्य ऐसे ही व्यापार पाए जाते हैं जो भारतीय दृष्टि से

---

1 Engli h man (paying) Thanks (to his wife in an Oxford voice) Sugar ? P 111 (The littleman by Galsworthy)

x x x

German (Shrugging) Toltoi is seutimentalise P 113 The little man

Official-Sie haben einen Buben gestohlen

x x x

Dies Ist nicht Thr G pack—pay P 125

Similarly Miss Perkins —

P raps I know more than you think
(The Grand Cham s Diamond)
O A P T Ist P 178

Harold Brichthouse has completely changed the language in Love some like He has made the following changes —

Tha—Thee maself-my elf workus—workhouse Dunno Donot know Allays Always etc

2 x x x was it a dream or wasn t it ? He (Philip) will never be quite certain -The Boy comes home-by A A Milne-One Act plays of today-1st Series-P 35

3 The lamp on the hood of the chimney piece has burned down leaving only the red glow from the fire upon their faces as the curtain whispers down to hide them

4 x x x h. is most fascinated by human nature and aims always it making his characters live One Act plays of today Preface P 30-50

अनुपयुक्त है[1]। वहाँ तो नग्न चित्रण प्रस्तुत करने वाले कलाकार उत्तम माने जाते है[2]। गाल्जवर्दी यथार्थवादी चित्रण प्रस्तुत कर युग के दोषो को प्रदर्शित करते हैं। वे वस्तु प्रतिपादन म तटस्थ रह कर पात्रो के साथ न्याय करते हैं जो उनके नाटको मे प्रभावान्विति का कारण बनता है। उनकी कलात्मक तटस्थ शैली और स्वाभाविकता नाटको को आकर्षक बना देती है। कतिपय नाटककार ऐतिहासिक तथ्यो पर भी बल देते हैं। जोहन ड्रिंकवाटर के एकाकी इसके प्रमाण हैं। इनके नाटको को पुनरुत्थानकालीन नाटक कहते है क्योकि उनम इतिहास को पुन सजीव किया जाता है। उन नाटको म तत्कालीन ऐतिहासिक शब्दो का प्राचुर्य भी पाया जाता है।

अग्रेजी एकाकी जिज्ञासा को उद्दीप्त करते है। जे ए फर्गुसन के नाटक जिज्ञासा जाग्रत करने म सफल होते हैं। इसी प्रकार से वे सोचने को बाध्य करते हैं। ए माक हाउस के नाटक इसके उदाहरण हैं। अग्रेजी म उपन्यासो को नाटको म परिणत करने की परिपाटी भी प्रचलित है। बरीशाप (मिस ओलिव कानवेविरचित), वैनीटीफेयर के वाटर्लू अध्यायों पर आदृत है। ऐसे नाटको म उपन्यास से पात्रो का विवरण भी दिया जाता है[3]।

आधुनिक अग्रेजी एकाकियो म चरित्र-चित्रण पर अधिक ध्यान दिया जाता है। यथा "दी ग्राड चमस डाइमण्ड' म कथा तो एक हीरे के प्राप्त होने व खो जाने की ही है किन्तु पात्रो का चित्रण और परिस्थितियो का प्रदर्शन सुन्दर बन पडा है। कभी कभी पात्र परिचय के साथ अभिनेताओ और निर्देशको के नाम के साथ यह भी

---

1 (a) Hellen —"Do you want followers Susan ?
Husan —No Miss I don t Not followers One follower at a time s enough for a woman Followers by H Brighhouse-Ibid P 42

(b) Manufacturer —And every time he (lover of Pirrettee) speaks do you feel little chub by hands on your breast and face

Pirrettee —(Feruently) Yes Oh yes that s just it The makers of dreams by oliphant Down Ibid P 95,

2 He (A Bennett) is famous for his minute knowledge of human nature and for his skill in laying bare all that is best and worst in character he describes -Ibid P 58

3 One Act Plays of Today Ist Series P 222

प्राप्त होता है कि नाटक ग्रमुक स्थान पर प्रथम बार ग्रभिनीत हुग्रा था[1] [2] ।

ग्रग्रेजी एकाकियो म यत्रतत्र भारतीय ग्रर्थोपक्षप[3] जैसी व ग्रन्त म गीत देने की[4] पद्धति के भी दशन होते हैं।

इन एकाकियो से हमे एक प्रमुख लाभ यह भी है कि इनके माध्यम से हिन्दी वाले यूरोप के विभिन्न देशो के एकाकियो से परिचित हो जाते हैं। पसिवल वाइल्ड की ग्रग्रेजी का पुस्तक कटम्परेरी वन एक्ट प्लेज फ्रोम नाइन कट्रीज, इसका ज्वलन्त उदाहरण है। इसके माध्यम से हम ग्रमेरिका, जमनी, फ्रास, रूस ग्रायरलैण्ड ग्रौर हगरी ग्रादि के एकाकियो का परिचय प्राप्त हो जाता है।

निष्कर्ष

उपयुक्त विवेचन के पश्चात् हम कह सकते हैं कि ग्राधुनिक युग के नाटककार नवीनता ग्रौर मौलिकता के इच्छुक हैं। ग्राज नाट्य क्षेत्र मे विभिन्न प्रयोग किय जात हैं। 'हरपुरातन वस्तु को हेय ग्रौर निन्दनीय माना जाता है।' इस कथन म चाहे ग्रत्युक्ति का ग्रश विद्यमान हो किन्तु ग्राज के युग को प्रयोगवादी युग (जिसम मौलिकता ग्रौर नवीनता का प्रबल ग्राग्रह विद्यमान है) कह देना सत्यका सबसे बडा समथन

---

1 This play was first produced by Mr Owen Nares at the Victoria Palace Theatre London on Septemb_r 9 1918 with the following cast —
Philip-Owen Nares
Uncle James-Tom Reynolds
Aunt Emily-Dorothy Radford
Mary-Adah Dick etc
The Boy comes home by A A Milse

2 Also see cambell of kilmhor by J A Ferguson

3 Gardner —I will by Jove Miss Fevershym you re a good short Adrian is going to storm the castle today
Christine —Adrian (A Knock)
Adrian —Since you command it I enter
The step mother by A Bennett
One Act Plays of Today 1st Series P 74

4 Baby don t wait for the moon
The stairs of the sky are so steep
and the mellow musical June
Is waiting to kiss you to sleep
The makers of dreams-last song by O Down-

5 Out standing characterstic of our age is the admination of novelty—Anything Victorian is to be hated ...

करना ही होगा। जिस प्रकार आज कविता म पुरातन सिद्धातो का हनन किया जाता है[1] वसे ही नाटक भी स्वच्छन्ता का इच्छुक है। आज की धारणा है —

बहिष्कार करो न किसी का
तिरस्कृत है न कुछ भी
यही है चहुँओर बुद्धि त। २

---

1 और तो और लेखन शली म भी परिवत्तन
Litt Chap 28 (i)
Sparrow in the cobbled street
Little Sparrow roundand Sweet
Chauc r s bird–
Or if a leaf
Sparkle among leaves among the
Sea ons Strangers Child by G
Poetry Nov 1960

2 Reject no one and
Debase nothing
This is all around
Intellect, Poetry Nov 1960

उपसंहार

सस्कृत नाटको की उत्पत्ति और उनके विकास के सम्बन्ध म दैविक कथा प्रस्तुत की जाती है। प्रारम्भ म यूनानी नाटको का सम्बन्ध भी देवी-देवताओ से जोडा गया। भारतीय नाटको की उत्पत्ति के सम्बन्ध मे यह कहा जाता है कि, देवताओ ने भी उनके विकास म सहयोग दिया, किन्तु यूनानी नाटक, देवी देवताओ को प्रसन्न करने के उपकरण ही रहे। भरत ने नाट्यशास्त्र म नाटक का उद्देश्य निम्नाकित बताया है —

'दु खार्त्तानां श्रमार्त्तानां शोकार्त्तानां तपस्विनाम्।
विश्रामजननं लोके नाट्यमतेद् भविष्यति ॥'

अर्थात् नाटक दुख से, श्रम से और शोक से पीडित व्यक्तियो को सुख प्रदान करने का साधन होगा। पाश्चात्य विचारक अरस्तू ने "इमीटेशन इज एन आर्ट' — अनुकरण (ही) कला है घोषित किया। अग्रेजी नाटको के विकास मे गिरजाघर एव धार्मिक-नैतिक कथाओ का विशेष हाथ रहा। सस्कृत साहित्य म नाटकों की विस्तृत आलोचना की गई। नाट्यशास्त्र, दशरूपक और नाट्यदर्पण आदि ग्रथ नाटको के विवचन-विश्लेषण से सम्बद्ध हैं। यूनानी दार्शनिक अरस्तू ने काव्यशास्त्र म नाटको की विशद विवेचना की है। यहा यह उल्लेखनीय है कि आकार मे काव्यशास्त्र (अरस्तू कृत), नाट्यशास्त्र (भरत विरचित) से छोटा है एव काव्यशास्त्र मे नाटको के अतिरिक्त महाकाव्यादि भी विवेचन के विषय रहे हैं। अग्रेजी साहित्य म सोलहवी शताब्दी तक शेक्सपीयर और उसके सहयोगियो ने महत्त्वपूर्ण नाटक तो लिखे किन्तु तब तक नाट्यालोचन का अभाव ही रहा। शेक्सपीयर ने यूनानी शास्त्रीय और लोकनाट्य परम्पराओ का सुखद सम्मिश्रण किया। तत्पश्चात् बैनजोनसन ने नाट्यालोचन का जागरूक प्रयास किया। इस प्रकार हम देखते हैं कि परिणाम और कालक्रम की दृष्टि से यूनानी नाटकों का विवेचन सस्कृत नाटकों के विवेचन जितना विस्तृत नहीं है। अग्रेजी नाट्यालोचन का तो प्रारम्भ ही एलिजाबेथ के काल से माना जा सकता है।

कथावस्तु के विवेचन म सस्कृत नाटककारो ने कार्य व्यापार की अवस्थाओं, सधियो और अर्थ प्रकृतियो के नियम-उपनियम प्रस्तुत किए किन्तु अग्रेजी कथानक केवल कार्यव्यापार की अवस्थाओ का ही विवचन प्रस्तुत करता है। वहाँ 'सधि पचक' का अभाव है। सस्कृत नाटको म सद्धान्तिक रूप से पताका-प्रकरी का विवेचन किया गया—प्रासगिक वस्तु को महत्त्व दिया गया। अग्रेजी नाटको म 'प्लॉट'

करना ही होगा। जिस प्रकार आज कविता में पुरातन सिद्धान्तों का हनन किया जाता है[1] वैसे ही नाटक भी स्वच्छन्दता का इच्छुक है। आज की धारणा है —

'बहिष्कार करो न किसी का
निरस्कृत है न कुछ भी
यही है चहुँओर बुद्धि में।[2]

---

1 और तो और लेखन शैली में भी परिवर्तन किया गया है। उदाहरणार्थ —

Litt Chap 28 (i)
Sparrow in the cobbled street
Little Sparrow roundand Sweet
Chauc r s bird–
Or if a leaf
Sparkle among leaves among the
Sea ons -Strangers Child by George Oppen ,
Poetry Nov 1960

2 Reject no one and
Debase nothing
This is all around
Intellect, Poetry Nov 1960

उपसंहार

संस्कृत नाटकों की उत्पत्ति और उनके विकास के सम्बन्ध में दैविक कथा प्रस्तुत की जाती है। प्रारम्भ में यूनानी नाटकों का सम्बन्ध भी देवी-देवताओं से जोड़ा गया। भारतीय नाटकों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि, देवताओं ने भी उनके विकास में सहयोग दिया, किन्तु यूनानी नाटक, देवी-देवताओं को प्रसन्न करने के उपकरण ही रहे। भरत ने नाट्यशास्त्र में नाटक का उद्देश्य निम्नांकित बताया है —

'दुःखार्तानां श्रमार्तानां शोकार्तानां तपस्विनाम्।
विश्रामजननं लोके नाट्यमेतद् भविष्यति ॥"

अर्थात् नाटक दुःख से, श्रम से और शोक से पीड़ित व्यक्तियों को सुख प्रदान करने का साधन होगा। पाश्चात्य विचारक अरस्तू ने "इमीटेशन इज एन आर्ट — अनुकरण (ही) कला है" घोषित किया। अंग्रेजी नाटकों के विकास में गिरजाघर एवं धार्मिक-नैतिक कथाओं का विशेष हाथ रहा। संस्कृत साहित्य में नाटकों की विस्तृत आलोचना की गई। नाट्यशास्त्र, दशरूपक और नाट्यदर्पण आदि ग्रन्थ नाटकों के विवेचन-विश्लेषण से सम्बद्ध हैं। यूनानी दार्शनिक अरस्तू ने काव्यशास्त्र में नाटकों की विशद् विवेचना की है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि आकार में काव्यशास्त्र (अरस्तू कृत), नाट्यशास्त्र (भरत विरचित) से छोटा है एवं काव्यशास्त्र में नाटकों के अतिरिक्त महाकाव्यादि भी विवेचन के विषय रहे हैं। अंग्रेजी साहित्य में सोलहवीं शताब्दी तक शेक्सपीयर और उसके सहयोगियों ने महत्त्वपूर्ण नाटक तो लिखे किन्तु तब तक नाट्यालोचन का अभाव ही रहा। शेक्सपीयर ने यूनानी शास्त्रीय और लोकनाट्य परम्पराओं का सुन्दर सम्मिश्रण किया। तत्पश्चात् बैनजानसन ने नाट्यालोचन का जागरूक प्रयास किया। इस प्रकार हम देखते हैं कि परिमाण और कालक्रम की दृष्टि से यूनानी नाटकों का विवेचन संस्कृत नाटकों के विवेचन जितना विस्तृत नहीं है। अंग्रेजी नाट्यालोचन का तो प्रारम्भ ही एलिजाबेथ के काल से माना जा सकता है।

कथावस्तु के विवेचन में संस्कृत नाटककारों ने कार्य व्यापार की अवस्थाओं, सन्धियों और अर्थ प्रकृतियों के नियम-उपनियम प्रदान किए किन्तु अंग्रेजी कथानक केवल कार्यव्यापार की अवस्थाओं का ही विवेचन प्रस्तुत करता है। वहाँ 'सन्धि पंचक' का अभाव है। संस्कृत नाटकों में सहायक रूप में पताका-प्रकरी का विवेचन किया गया—प्रासंगिक वस्तु को महत्त्व दिया गया। अंग्रेजी नाटकों में 'प्लॉट

ने दोहरी वस्तु प्रदान तो की किन्तु सैद्धान्तिक दृष्टि से कई समालोचकों ने उसे हेय बताया फिर भी इतना तो स्पष्ट है कि अंग्रेजी नाटकों में सैद्धान्तिक दृष्टि से दोहरी वस्तु का उतना महत्त्व नहीं मिला जितना कि भारतीय नाट्यशास्त्र में पताका प्रकरी को मिला। यूनानी नाटकों में 'सकलन त्रय' द्वारा स्वाभाविकता की रक्षा की गई। संस्कृत नाटकों की रंगमंच की इतनी विशद् और सुव्यवस्थित व्यवस्था प्राप्त थी कि, सकलनत्रय के अभाव में भी वहां वास्तविकता की रक्षा हो जाती थी। यूनानी नाटकों में सकलनत्रय का निर्वाह आवश्यक समझा जाता था। अंग्रेजी नाटकों में इसकी अवहेलना की गई।

नायक की दृष्टि से संस्कृत नाट्यशास्त्र में विस्तृत विवेचन किया गया और नायिका के तो और भी अधिक भेदोपभेद किए गए। नायक नायिका की भाषा और उनके गुणों पर विशेष बल दिया गया। नैतिक-सांस्कृतिक विघटन न होने पाए इसका पूर्ण ध्यान रखा गया। अंग्रेजी नाटकों में पात्रों की ऐसी विशद् समालोचना नहीं हो पायी। संस्कृत में कई पात्रों के नामकरण सम्बन्धी नियम भी मिलते हैं। अंग्रेजी के कई नाटकों में पात्रों की प्रकृति के अनुकूल पात्रों के नाम रखे गए। यथा, बनजोनसन के 'फॉक्स' और अन्य पात्र।

कहने की आवश्यकता नहीं कि रस और साधारणीकरण की व्याख्या भारतीय साहित्य की मौलिक मान्यता है। अंग्रेजी में तो रस के पर्यायवाची शब्द का भी अभाव है। यूनानी नाटकों का कैथारसिस का सिद्धान्त भारतीय साधारणीकरण के सिद्धान्त से तुलनीय है।

हास्य रस की सृष्टि के लिए यहाँ विदूषक की स्थापना की गई। अंग्रेजी में हसोड और कामिक पात्र को 'क्लाउन' या 'फूल' कहा गया। फिर भी दोनों के विवेचन प्रदर्शन में अन्तर रहा है। भारतीय विदूषक के जन्म जाति, बुद्धि व्यापार और मानसिक स्तर का गवेषणापूर्ण विवेचन किया गया है।

अंकों, अंकावतारों, गर्भांक, सूच्य, कथोद्घात प्रस्तावना और नान्दी पाठ का विवेचन संस्कृत साहित्य में विस्तृत रूप से किया गया। अंग्रेजी में प्रयोगोपयोग जैसे प्रयोग तो मिलते हैं, किन्तु उनका मामत शास्त्रीय समर्थन नहीं किया गया है।

भाषा-शैली के सम्बन्ध में संस्कृत नाट्यशास्त्र में एक निश्चित प्रणाली प्रतिपादित की गई। राजा राज महिषी मंत्री विदूषक और अन्य पात्रों की भाषा निश्चित सी कर दी गई थी। अंग्रेजी नाटकों में ऐसा नहीं है। वहाँ स्वाभाविकता की रक्षा के लिए नाटककार किसी भी पात्र से किसी भी 'डायलेक्ट' अथवा भाषा उपभाषा का प्रयोग करवा सकता है। भारतीय शास्त्रवेत्ताओं ने शैली को भी विभिन्न भेदों में बाटा है। मार्ग व रीति इसके ही पर्यायवाची हैं। अंग्रेजी में 'स्टाइल इज दी मैन' पर बल दिया गया। यही कारण शेक्सपीयर ने अपनी शैली से विभिन्न स्तरीय मामा

जिको का आकर्पित किया तो बर्नाड शॉ ने सभी क्षेत्रा के व्यक्तिया को सोचने के लिए बाध्य किया, उन्हें अपने व्यग्य का लक्ष्य बनाया। इस प्रकार अंग्रेजी नाटका की शली नाटककारा पर अधिक निभर करती है—सद्धान्तिक विवेचन पर कम। फलत सस्कृत नाटको म काव्यत्व, सम्बोधन, वत्तियो और भापा प्रयोग का जैसा सैद्धान्तिक विवेचन हुआ है, वैसा अंग्रेजी नाटका मे नही।

दोनो ही नाटको का उद्देश्य बहुत सीमा तक मनोरजन और उपदश रहा है। किन्तु भारतीय नाटककारो ने अन्त की दृष्टि से केवल सुखान्त नाटको की ही व्यवस्था प्रदान की है जबकि अंग्रेजी नाटका म दुखान्त भावना को अधिक महत्त्व दिया गया है। वहाँ सुख दुखात्मक नाटक भी सामने आए। आधुनिक अंग्रेजी नाटककार विचारोद्वेलन और मानसिक उद्वेग उत्पन्न करना भी अपना उद्देश्य मानता है।

इस प्रकार निष्कपत कहा जा सकता है कि सस्कृत नाटका मे लक्षण ग्रथा का महत्त्वपूण स्थान दिया जाता था। यहा वस्तु नेता और रस की दृष्टि से नियम निर्धारित किए गए थे और सुखान्त नाटको की ही व्यवस्था की गई थी। अक विभाजन भापा-प्रयोग, विदूषक और वत्तियो प्रवत्तिया आदि की दृष्टि से सस्कृत नाटका का सूक्ष्म विवेचन किया गया था। रुचि परिमाजन और रसोद्रेक यहा के नाटका की अपनी विशेषतायें हैं। अतएव विदेशिया ने भी इसकी मुक्त कण्ठ प्रशसा की है कि सस्कृत नाटका मे परकीया को नायिका का स्थान नही दिया गया है जबकि अंग्रेजी के कई नाटका म परकीया नायिकाएँ दिखाई देती है।

अंग्रेजी नाटका न यूनानी नाट्य लक्षणा के आधार पर व्यावहारिकता, मनोरजन और स्वाभाविकता को महत्त्व दिया। अंग्रेजी म कृति और कृतिकार की प्रयोगात्मक समालोचना प्रमुखर ही। सस्कृत म सामाजिको को दृष्टि पथ पर रखा गया और सद्धान्तिक-शास्त्रीय नियमो का बाहुल्य रहा। सस्कृत म नाटका के प्रमुख तत्त्व माने गए—वस्तु नेता और रस। अंग्रेजी नाटका के तत्त्व है—कथानक पात्र चरित्र-चित्रण कथोपकथन भापा शली देशकाल चित्रण एव उद्देश्य।

अंग्रेजी भापा आधुनिक भापा है। अतएव इसका नाटको पर वैज्ञानिक और बौद्धिक प्रभाव दिखाई देता है। इसम रेडियो नाटक, फीचर और रिपार्ताज जस नाटकीय रूप प्राप्त होत हैं। फलत जहाँ आधुनिक अंग्रेजी नाटका म नियत श्राव्य और अश्राव्य को हेय समझा जाता है वहा इन वज्ञानिक पद्धतिया ने 'स्वगत' को पूणत स्वाभाविक बना दिया है। सस्कृत म स्वगत भापण सवादा के अन्तगत ही आते हैं। अतएव यह स्पष्ट हो जाता है कि सस्कृत और अंग्रेजी **नाट्यविधायें** दूसर की पूरक हैं और इन दोनों ही नाट्य लक्षणा का देशकालानुसार चलन से निस्सन्देह स्पृहणीय साहित्य सृजन हो सकता है।

सहायक ग्रंथ-सूची

ग्रंथ	लेखक
१ अथर्ववेद	
२ अर्थशास्त्र	कौटिल्य
३ अष्टाध्यायी	पाणिनि
४ अनन्त शयन ग्रन्थावली	टी० गणपति शास्त्री (स)
५ अभिज्ञान शाकुन्तलम्	कालिदास
६ अभिनव भारती	अभिनव गुप्त
७ अभिनय दर्पण	नन्द किशोर
८ अग्नि पुराण	
९ आर्बिटर डिक्टा	
१० अम्बपाली	रामवृक्ष बेनीपुरी
११ इंग्लिश ड्रामा	डा० वमिलोपिलिज्जी
१२ इंग्लिश ड्रामेटर्जी	डा० सी० के० चम्मम
१३ इण्डियन स्टेज (जिल्द १ २),	डा० दास गुप्त
१४ इण्ट्रोडक्शन टू साहित्य दर्पण	पी० वी० काणे
१५ ए हिस्ट्री आव संस्कृत लिटरचर	लिग्वी एव कजामिया
१६ ए हिस्ट्री आव संस्कृत लिटरेचर	ए० ए० मक्डोनाल
१७ ए शार्ट हिस्ट्री आव इंग्लिश लिटरेचर	वी० आइ फार इवन्स
१८ ए शार्ट हिस्ट्री आव लिटरेरी क्रिटिसिज्म	विलियम० व विमसाट ज मार
१९ एलिजाबेथन लिटरचर	एव जिनय प्रकम
२० एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका	डा० सन्सबरी
२१ एट फेमस एलिजाबेथन प्लेज	डॉ० वाड (स०)
२२ एटींथ सचुरी प्लेज	ई० वनाउम्मनडन (स०)
२३ एव्रीमैन इन हिज ह्यूमर	जान हैम्पडन (स०)
२४ एव्रीमैन आउट ऑव हिज ह्यूमर	वनजानसन
२५ आक्सफोर्ड लक्चर्स आन पोएट्री	वन जानसन
२६ कम्पलीट प्रिफेसज आव बनार्ड शॉ	डा० ए० सी० ब्रडले
२७ कम्पलीट वर्क्स ऑव बनार्ड शॉ	शॉ
	शॉ

२८ कम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव इंग्लिश लिट्रेचर जिल्द ६
२९ कटेम्परेरी वन एक्ट प्लेज फ्राम नाइन कट्रीज — परसीवल वाइल्ड (स०)
३० कलकत्ता इन दी मेकिङ्ग — जी० टी० ब्लैक मूर
३१ क्रिस्टोफर मार्लो — विलियम मोडलन
३२ क्रिस्टोफर मार्लो — डॉ० एफ० सी० बोस
३३ काव्य प्रकाश — मम्मट–स–ए ए गजेन्द्रगडकर
३४ कासाइज कम्ब्रिज हिस्ट्री ग्रॉव इंग्लिश लिटरेचर
३५ काव्यानुशासन — हेमचन्द्र
३६ काव्यमीमासा — राजशेखर
३७ काव्य कला तथा अन्य निबन्ध — जयशकर प्रसाद
३८ कालिदास — वासुदेव विष्णु मिराशी
३९ कालिदास ग्रन्थावली — आचार्य सीताराम चतुर्वेदी
४० कालिदास और भवभूति — द्विजेन्द्रलाल राय
४१ कालिदास का भारत — भगवत शरण उपाध्याय
४२ क्वेंटिसेंस आव इब्सेनिज्म — बर्नाड शॉ
४३ क्वेंटिसेंस आव श्मवियिज्म — बर्नाड शॉ
४४ गुञ्जन — सुमित्रानन्दन पत
४५ चीफ ब्रिटिश ड्रामटिस्टस — सपादक ब्रांडर मैथ्यूज एवं पॉल आर० लीडर
४६ चासर — जी० के० चेस्टटन
४७ जेम्स जायसी एण्ड दी प्लेन रीडर — इफ० सी०
४८ टाइप्स आव ट्रेजिक ड्रामा — सी० ई० वाहगन
४९ टाइप्स आव सस्कृत ड्रामा — डी० आर० माकड
५० टवण्टीएथ सेंचुरी थिएटर — एफ० वरनॉन
५१ ड्रामा इन सस्कृत लिट्रेचर — आर० वी० जागीरदार
५२ तपस्विनी — डॉ सरनामसिंह शर्मा 'अरुण'
५३ त्रिवेन्द्रम प्लेज — टी० गणपति शास्त्री (स०)
५४ दशरूपक — धनञ्जय
५५ दी आर्ट ऑव बर्नार्ड शॉ — एस० सी० सेन गुप्ता
५६ दी थिएटर — हरोल्ड होमन
५७ दी न्यू ब्रिटिसिज्म — ज० ई० स्पिघम
५८ दी ड्रामा इन यूरोप — ई० एफ० बोर्डन
५९ दी आउट लाइन ऑव लिटरेचर — जाहन ड्रिंकवाटर
६० दी इंवेज ऑव सैलफी — जे० वबस्टर

सहायक ग्रंथ-सूची

क्रम	ग्रंथ	लेखक
१	अथर्ववेद	
२	अर्थशास्त्र	कौटिल्य
३	अष्टाध्यायी	पाणिनि
४	अनन्त शयन ग्रन्थावली	टी० गणपति शास्त्री (स)
५	अभिज्ञान शाकुन्तलम्	कालिदास
६	अभिनव भारती	अभिनव गुप्त
७	अभिनय दर्पण	नन्द किशोर
८	अग्नि पुराण	
९	आविटर डिक्टा	
१०	अम्बपाली	रामवृक्ष बेनीपुरी
११	इंग्लिश ड्रामा	डा० कमिलोविलिज्जी
१२	इंग्लिश ड्रामेटर्जी	डा० सी० के० चम्बस
१३	इण्डियन स्टेज (जिल्द १ २),	डा० दास गुप्त
१४	इण्ट्रोडक्शन टू साहित्य दर्पण	पी० वी० काणे
१५	ए हिस्ट्री आव संस्कृत लिटरेचर	लिवी एव कजामिया
१६	ए हिस्ट्री आव संस्कृत लिटरेचर	ए० ए० मैकडानाल
१७	ए शार्ट हिस्ट्री आव इंग्लिश लिटरेचर	बी० आइ फार इवान्स
१८	ए शार्ट हिस्ट्री आव लिटरेरी क्रिटिसिज्म	विलियम० के विमसाट ज धार एव क्लिन्थ ब्रूक्स
१९	एलिजाबेथन लिटरेचर	डा० शम्भवरी
२०	एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका	डॉ० वाट (स०)
२१	एट फेमस एलिजबेथन प्लेज	ई० कनाउम्यनडन (स०)
२२	एट्टीथ सचुरी प्लेज	जान हैम्पडन (स०)
२३	एव्रीमैन इन हिज ह्यूमर	बेनजानसन
२४	एव्रीमैन आउट ऑव हिज ह्यूमर	बेन जानसन
२५	आक्सफर्ड लेक्चर्स आन पोइट्री	डॉ० ए० सी० ब्रैडले
२६	कम्पनाग्य क्रिटिसिज्म ऑव बनार्ड शॉ	शॉ
२७	कम्प्लीट वर्क्स ऑव बनार्ड शा	शॉ

६१ दी हिस्ट्री ऑव इण्डियन लिटरेचर	ए० ववस्टर
६२ दी ओल्ड ड्रामा एण्ड दी न्यू	विलियम आचर
६३ दी इण्डियन थिएटर	आर० के यानिक
६४ दी हिस्ट्री आव इग्लिश लिटरेचर	ए काम्पटन रिक्ट
६५ दी इण्डियन थिएटर	मुल्कराज आनन्द
६६ दी ब्रिटिश ड्रामा	एलार्डिस निकल
६७ दी राइज आव ड्रामा इन इ गलण्ड	कौट होप
६८ दी रेडियो प्ले	फेलिक्स फैल्टन
६९ ध्वन्यालोक	आनन्द वर्द्धन
७० नाट्यदर्शन	रामचन्द्र गुणचन्द्र
७१ नाट्यशास्त्र भरतमुनि	(१) अनु डॉ मनमोहन घोष (२) अनुवादक डा भोलानाथ
७२ नाट्यकला का मूल स्रोत	डा० एस० पी० खत्री
७३ निबन्ध निचय	पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी
७४ पगध्वनि	चतुरसेन शास्त्री
७५ प्रतिमा	भास
७६ बैगस ओपेरा	गे
७७ बकन्स एसेज	बेकन-भूमिका शैल्बी
७८ भास	डॉ० ए० बी० कीथ
७९ भारतीय नाट्यसाहित्य	(स०) डॉ नगेन्द्र
८० भारतन्दु नाटकावली—भाग १ २	(स) बा० ब्रजरत्नदास
८१ भागवत	
८२ भारतीय काव्यशास्त्र की भूमिका	डा भागीरथ मिश्र
८३ भारतीय सस्कृति के चार अध्याय	रामधारीसिंह दिनकर
८४ भारतीय नाट्यशास्त्र और रगमच	प्रो० मोहनवल्लभ पत
८५ मार्लो	डब्लू० डल० स्टाउट
८६ (ए) माडन इ ग्लिश लिटरेचर	जी० एच० मेअर
८७ मालविकाग्नि मित्रम्	क लिदास
८८ माडन हिन्दी लिटरेचर	डा० इन्द्रनाथ मदान
८९ मेकिंग ऑव लिट्रेचर	आर० ए० जेम्सस्काट
९० मन करेण्टस इन मोडन लिट्रेचर	ए० आर० रीड
९१ युग छाया	शिवदानसिंह (स)
९२ यूज आव पाएट्री एण्ड यूज आव क्रिटिसिज्म	टी० एस० ईलियट

९३ रसार्णव सुधाकर	शिङ्गभूपाल
९४ राजस्थानी लोक नाटक	डॉ प्रभुनारायण नाट्याचार्य (प्र० प्र०)
९५ रामायण	वाल्मीकी
९६ रूपक रहस्य	डॉ० श्याम सुन्दर दास
९७ राजयोग	लक्ष्मीनारायण मिश्र
९८ लोसाई त्रिटिमी	डॉ० सट्सवरी
९९ वन एक्ट प्लेज ऑव टुडे	जे० डब्लू मेरिएट (स) प्रथम भाग
१०० विचार और सघष	डॉ० रामकुमार वर्मा
१०१ वालपोन	बनजोनसन
१०२ वेस्टन इनफ्लुएंस इन बगाली लिटरेचर	डॉ० प्रिय रंजन सेन
१०३ शेक्सपीरियन ट्रेजेडी	डा० ए० सी० ब्रेडले
१०४ शूद्रक	चन्द्रवली पाडे
१०५ सर्वे ऑव इगलिश लिटरेचर भाग १, २,	ऑलिवर एल्टन
१०६ स्कूल ऑव स्केण्डल्स एण्ड दी राइवल्स	शेरिडिन, (स) एगनेस्टन बरेल
१०७ स्टडीज इन दी हिस्ट्री ऑव सस्कृत पाइटिक्स भाग १, २	डॉ० एस के डे
१०८ सस्कृत ड्रामा	डॉ० ए बी कीथ
१०९ सस्कृत साहित्य का इतिहास	डॉ० बल्देव उपाध्याय
११० सस्कृत इगलिश डिक्शनेरी	मोनियर विलियम्स
१११ सस्कृत साहित्य की रूपरेखा	प० श पाडेय एव डॉ शान्ति कुमार नानूराम व्यास
११२ सस्कृत साहित्य का सक्षिप्त इतिहास	प० सीताराम जयराम जोशी
११३ स्वप्नवासवदत्ता	भास
११४ साहित्य लोचन	डॉ० श्यामसुन्दर दास
११५ साहित्य दर्पण	विश्वनाथ
११६ हमारी नाट्य साधना	राजेन्द्रसिंह गौड
११७ हिन्दी लिटरेचर	एफ ई की
११८ हिन्दी साहित्य कोश	प्रधान स० डॉ० धीरेन्द्र वर्मा
११९ हिन्दी नाटक उद्भव और विकास	डॉ० सोमनाथजी गुप्त
१२० हिन्दी नाटक साहित्य और विकास	डॉ० दशरथ ओझा
१२१ हिस्ट्री ऑव क्लासिकल सस्कृत लिटरेचर	कृष्णमाचरी

६१	दी हिस्ट्री आव इण्डियन लिटरेचर	ए० वबस्टर
६२	दी ओल्ड ड्रामा एण्ड दी न्यू	विलियम आचर
६३	दी इण्डियन थिएटर	आर० के याज्ञिक
६४	दी हिस्ट्री आव इंग्लिश लिटरेचर	ए काम्पटन रिक्ट
६५	दी इण्डियन थिएटर	मुल्कराज आनन्द
६६	दी ब्रिटिश ड्रामा	एलार्डिस निकल
६७	दी राइज आव ड्रामा इन इंगलैण्ड	कोट होप
६८	दी रेडियो प्ले	फेलिक्स फल्टन
६९	ध्वन्यालोक	आनन्द वद्धन
७०	नाट्यदशन	रामचन्द्र गुणचन्द्र
८१	नाट्यशास्त्र भरतमुनि	(१) अनु डा मनमोहन घोष (२) अनुवादक डा भोलानाथ
७२	नाट्यकला का मूल स्रोत	डॉ० एस० पी० खत्री
७३	निबन्ध निचय	पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी
७४	पगध्वनि	चतुरसेन शास्त्री
७५	प्रतिमा	भास
७६	बैगस ओपेरा	गे
१७	बेकन्स एसेज	बेकन—भूमिका शल्वी
८	भास	डा० ए० बी० कीथ
९	भारतीय नाट्यसाहित्य	(स०) डा नगेन्द्र
८०	भारतेन्दु नाटकावली—भाग १ २	(स) बा० ब्रजराजदास
८१	भागवत	
८२	भारतीय काव्यशास्त्र की भूमिका	डा भागीरथ मिश्र
८३	भारतीय संस्कृति के चार अध्याय	रामधारीसिंह दिनकर
८४	भारतीय नाट्यशास्त्र और रगमच	प्रो० मोहनवल्लभ पत
८५	मार्लो	डब्लू, डब्लू० स्टाउट
८६	(ए) माडन इंग्लिश लिटरेचर	जी० एच० मेअर
८७	मालविकाग्नि मित्रम्	कालिदास
८८	माडन हिन्दी लिटरेचर	डॉ इन्द्रनाथ मदान
८९	मेकिंग आव लिटरेचर	आर० ए० जेम्सस्काट
९०	मन करेण्टस इन मोडन लिटरेचर	ए० आर० रीड
९१	युग छाया	शिवदानसिंह (स)
९२	यूज आव पाइट्री एण्ड यूज आव क्रिटिसिज्म	टी० एस० ईलियट

६३ रसाणव सुघाकर	शिङ्गभूपाल
६४ राजस्थानी लाक नाटक	डॉ प्रभुनारायण नाट्याचाय (प्र० प्र०)
६५ रामायण	वाल्मीकी
६६ रूपक रहस्य	डा० श्याम सुन्दर दास
६७ राजयोग	लक्ष्मीनारायण मिश्र
६८ लोसाई त्रिटिमी	डॉ० सैट्सवरी
६६ वन एक्ट प्लेज ग्राव टुडे	जे० डब्लू मेरिएट(स)प्रथम भाग
१०० विचार ग्रौर सघप	डॉ० रामकुमार वर्मा
१०१ वालपान	वैनजोनसन
१०२ वेस्टन इनफ्लुएन्स इन वगाली लिटरेचर	डा० प्रिय रजन सेन
१०३ शेक्सपीरियन ट्रेजेडी	डॉ० ए० सी० ब्रेडले
१०४ शूद्रक	चद्रवली पाडे
१०५ सर्वे ग्राव इगलिश लिटरेचर भाग १, २,	ग्रॉलिवर एल्टन
१०६ स्कूल ग्राव स्केण्डल्स एण्ड दी राइवल्स	शेरिडिन (स)एगनेस्टन बैरेल
१०७ स्टडीज इन दी हिस्ट्री ग्रॉव सस्कृत पाइटिक्स भाग १, २	डॉ० एस के डे
१०८ सस्कृत डामा	डॉ० ए वी कीथ
१०६ सस्कृत साहित्य का इतिहास	डॉ० बल्देव उपाध्याय
११० सस्कृत इगलिश डिक्शनरी	मोनियर विलियम्स
१११ सस्कृत साहित्य की रूपरेखा	य० श पाडेय एव डा शान्ति कुमार नानूराम व्यास
११२ सस्कृत साहित्य का सक्षिप्त इतिहास	प० सीताराम जयराम जोशी
११३ स्वप्नवासवदत्ता	भास
११४ साहित्य लाचन	डॉ० श्यामसुन्दर दास
११५ साहित्य दपण	विश्वनाथ
११६ हमारी नाट्य साधना	राजेद्रसिंह गौड
११७ हिन्दी लिटरेचर	एफ ई की
११८ हिन्दी साहित्य कोश	प्रधान स० डॉ० धीरेद्र वर्मा
११६ हिन्दी नाटक उद्भव ग्रौर विकास	डा० सोमनाथजी गुप्त
१२० हिन्दी नाटक साहित्य ग्रौर विकास	डॉ० दशरथ ग्रोभा
१२१ हिस्ट्री ग्रॉव क्लासिकल सस्कृत लिटरेचर	कृष्णमाचरी

१२२	हिस्ट्री ऑव इंग्लिश पोइट्री भाग १ २	कोटहोप
१२३	(दी) हिस्ट्री ऑव इंग्लिश पीपल	ग्रीन
१२४	हिस्ट्री ग्राव संस्कृत पोइटिक्स	पी वी काणे
१२५	हिस्ट्री ग्राव इंग्लिश क्रिटिसिज्म	डॉ० सटसबरी
१२६	हिस्ट्री ऑव इंग्लिश लिटरेचर	डा० सटसबरी
१२७	हिन्दी गद्यसाहित्य का इतिहास	डा० जगन्नाथ प्रसाद शर्मा
१२८	हिन्दी साहित्य	डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी
१२९	हिन्दी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास	सूर्यकान्त शास्त्री
१३०	हिन्दी भाषा और साहित्य	डा० श्यामसुन्दर दास
१३१	हैमलेट	शेक्सपीयर (अनुवादक रांगेय राघव)